BIHAR YOGA®

श्रीरामचरितमानस

बालकाण्ड – 5

संकलन एवं सम्पादन
अवलोकितेश्वर



योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट, मुंगेर, बिहार, भारत

श्रीरामचरितमानस

बालकाण्ड – 5

(दोहा 268 से 361 तक)

परशुराम प्रसंग एवं सीता-राम विवाह

ॐ, प्रेम, मंगलम्

स्वामी निरंजन

श्रीरामचरितमानस

बालकाण्ड – 5

परशुराम प्रसंग एवं सीता-राम विवाह

संकलन एवं सम्पादन

अवलोकितेश्वर

(सुबोध अग्रवाल, सतना)



योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट, मुंगेर, बिहार, भारत

श्रीरामचरितमानस बालकाण्ड – 5
अवलोकितेश्वर

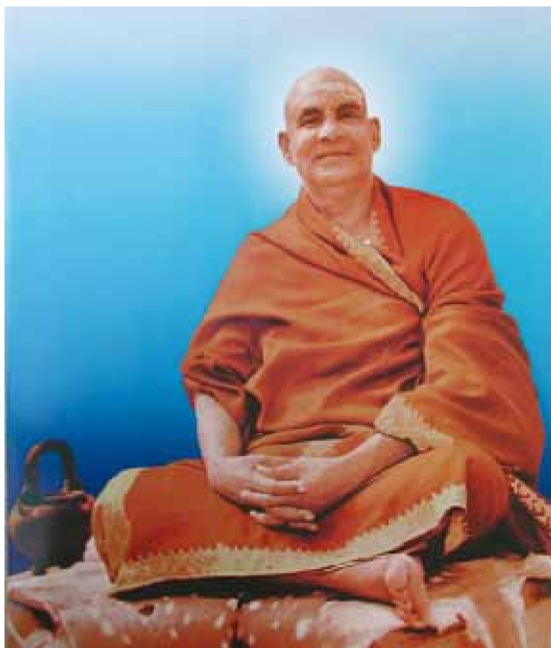
योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित
प्रथम संस्करण 2021

ISBN: 978-81-949328-7-1

प्रकाशक एवं वितरक—योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट, गरुड विष्णु,
पी.ओ. गंगा दर्शन, फोर्ट, मुंगेर, बिहार

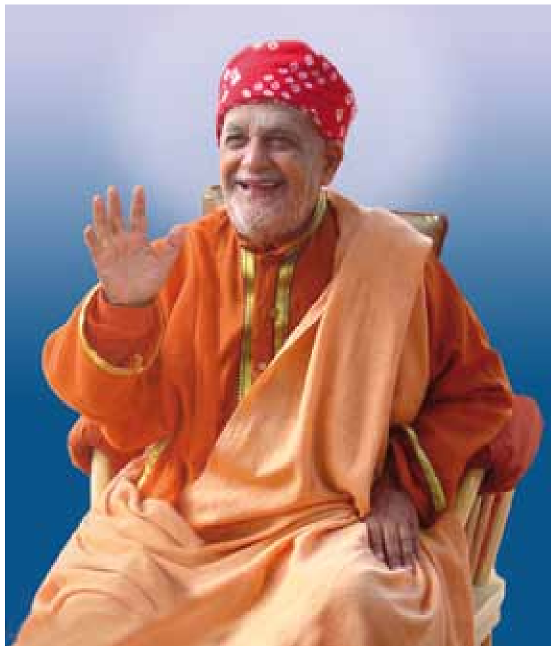
वेबसाइट: www.biharyoga.net
www.sannyasapeeth.net
www.satyamyogaprasad.net

मुद्रक—थॉमसन प्रेस (इंडिया) लिमिटेड, नई दिल्ली



सविनय समर्पण

स्वामी शिवानन्द सरस्वती के चरणों में
जिन्होंने स्वामी सत्यानन्द सरस्वती को योग के रहस्यों की शिक्षा दी



नमो नारायण

योगविद्या भारतवर्ष की सबसे प्राचीन संस्कृति और जीवन-पद्धति है तथा इसी विद्या के बल पर भारतवासी प्राचीनकाल में सुखी, समृद्ध और स्वस्थ जीवन बिताते थे। जब से भारत में योग विद्या का ह्रास हुआ, तभी से भारतवासी गरीब, दु:खी और अस्वस्थ हैं। पूजा-पाठ, धर्म-कर्म से शान्ति मिलती है और योगाभ्यास से धन-धान्य, समृद्धि और स्वास्थ्य। भारत में सुख, समृद्धि, शक्ति और स्वास्थ्य के लिए हर व्यक्ति को योगाभ्यास करना चाहिए।

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती
रिखियापीठ, 2005

विषय सूची

परिचय

श्रीरामचरितमानस को मेरे पिताजी अपने माता-पिता के समान ही मानते थे, क्योंकि उनके माता-पिता बचपन से ही नहीं थे। उन्होंने अपना सारा जीवन इस ग्रंथ के आधार पर ही प्रेम, आनंद व संतोष के साथ जिया। मुझे बचपन से ही इस ग्रंथ से बहुत लगाव रहा है। मैंने इसकी जीवंतता को नजदीक से देखा है।

मेरे गुरु, श्री स्वामी सत्यानन्द जी की भी इस ग्रंथ के प्रति अगाध श्रद्धा है। रिखिया में उनके सत्संगों के अनुपम संग्रह, भक्ति योग सागर भाग-1 से 7 तक मैंने पढ़े हैं और उन्हें पढ़कर लगा, वे चाहते हैं कि श्रीरामचरितमानस का शब्दानुवाद हो। यह बात मेरे मन में बैठ गयी। 5 दिसंबर 2009 की मध्य रात्रि को जब गुरुदेव महासमाधि में लीन हुए, रात्रि में 2 बजे मेरी नींद अचानक खुल गई। उठकर थोड़ी देर ध्यान किया। उसके बाद यह कार्य मेरे लिये श्री गुरुदेव का सेवा कार्य बन गया।

स्वामी चिन्मयानन्द जी के वरिष्ठ शिष्य स्वामी शंकरानन्द जी, कानपुर आश्रम में रामचरितमानस के एक-एक दोहे पर एक घंटे का प्रवचन दिया करते थे। उनके उपलब्ध प्रवचनों को आधार बनाकर मैंने नोट तैयार किया। स्वामी निरंजनानन्द जी से जब आशीर्वाद और मार्गदर्शन का निवेदन किया तो उन्होंने कहा, कार्य अच्छा है, इसे इतना सरल लिखो कि अनपढ़ व्यक्ति भी समझ जाये। बस फिर क्या था! स्वामीजी की प्रेरणा से सरलीकरण, संपादन, शीर्षक, उपशीर्षक बनते चले गये। स्वामीजी ने कहा कि एक-एक काण्ड लिखते जाओ, हम प्रकाशित करते जायेंगे। सबसे पहले सुंदरकाण्ड तैयार हुआ जिसमें हुनमान जी के सुंदर सेवा कार्य का वर्णन है। गुरु प्रेरणा से अब बालकाण्ड को पाँच भाग में तैयार किया गया है जिसमें

श्रीरामचरितमानस की महिमा, शिव-पार्वती विवाह, राम-अवतार के कारणों का वर्णन, बाल लीला एवं राम-सीता विवाह का सरस एवं सुन्दर वर्णन किया गया है।

गोस्वामी तुलसीदास जी द्वारा रचित श्रीरामचरितमानस महाकाव्य है। यह सरस है, इसमें मधु की मिठास है। हम अपनी कार्य सिद्धि के लिए बिना मिठास के जल्दी-जल्दी पाठ कर लेते हैं। राग से, भाव से, रस लेते हुए इसे पढ़ें। आँखों में प्रेम के अश्रु आयेंगे, शरीर रोमांचित हो जाएगा। यह मात्र पुस्तक नहीं है, इसमें अध्यात्म, ज्ञान, भक्ति और प्रेम के साथ-साथ पारिवारिक, व्यावहारिक एवं सामाजिक शिक्षा भी है। यह इतिहास भी है, भूगोल भी है, राजनीति और कूटनीति की शिक्षा भी है। यह हिंदी साहित्य की उच्चतम प्रस्तुति है।

– अवलोकितेश्वर

तुम भगवान पर अविश्वास कर सकते हो। तुम्हें राम के अस्तित्व पर प्रश्न हो सकता है। सब ठीक है, पर मैं भगवान के बारे में नहीं, मैं बोल रहा हूँ नाम के बारे में। नाम पर कभी शंका मत करना। जब राम का नाम लेते हो तो तुम्हारा मन, तुम्हारा हृदय, तुम्हारा पूरा जीवन ऐसे धुल जाता है, जैसे राम का नाम डिटरजेंट पाउडर हो। यह भगवान का नाम मामूली चीज नहीं है। यह भगवान का नाम आत्मबम है। तुम्हारे अंदर में जितनी माया, मलिनता, कोढ़, गंदगी, भय, निराशा, जितनी भी आसुरी शक्तियाँ हैं सबको समाप्त कर देगा। मेरा कहना है कि रोज जब भी तुमको समय मिले भगवान का नाम जपो। 1 घण्टा जपो, 2 घण्टा जपो। समय मिले तो कभी 1 दिन कभी 2 दिन कभी 9 दिन या साल भर का अनुष्ठान करो। यही एकमात्र रास्ता है।

– स्वामी सत्यानन्द सरस्वती

बालकाण्ड – 5

17 मुख्य शीर्षकों द्वारा संक्षिप्त प्रस्तुतीकरण

1. परशुराम जी आ गये

(दोहा 268 से दोहा 285)

तुलसीदास जी ने इस प्रसंग का 18 दोहों में वर्णन किया है। हास्य और व्यंग्य से भरपूर परशुराम-राम-लक्ष्मण संवाद बहुत लोकप्रिय है। क्रोध करने से नुकसान, क्रोध पर नियंत्रण रखने के तरीके, क्रोधी से कैसे निपटें, इन सब बातों को बहुत सुंदर तरीके से समझाया गया है। बड़े भाई राम को परशुराम अपशब्द न कह पायें इसलिये लक्ष्मण स्वयं कटु वचन व अपमान सहते हैं। चतुरता से परशुराम को अपनी ही बातों में उलझाये रखते हैं। आज सेना व पुलिस जो कार्य करती है, प्राचीन वर्ण व्यवस्था में इस कार्य को करने वाले को क्षत्रिय कहते थे। ज्ञान अर्जित करके दूसरों को ज्ञान सिखाने वाले को विप्र कहते थे। राम अत्यंत विनम्रता से समझाते हैं कि दोनों का कार्य समाज को सही रास्ते पर लाने का है, जो ज्ञान से समझे उसे ज्ञान से, जो न समझे उसे भय से सही रास्ते पर लाने का कार्य विप्र व क्षत्रिय करते हैं। दोनों एक-दूसरे के पूरक हैं। विप्र सदैव पूजनीय हैं, क्षत्रिय का धर्म है कि विप्र की रक्षा करे, विप्र का धर्म है कि क्षत्रिय को सही मार्ग दिखाये।

2. दूत अयोध्या चले, जनकपुर में विवाह-मंडप तैयार

(दोहा 286 से 289)

परशुराम जी के जाने के बाद जनक जी के पूछने पर विश्वामित्र कहते हैं कि अब कुल व वेद रीति से विवाह संपन्न करो। महाराज दशरथ को बारात सहित आमंत्रित करने हेतु दूतों को अयोध्या भेजा जाता है। इस बीच जनकपुर में विवाह की तैयारियाँ पूरी हो जाती है। मणियों व स्वर्ण से सजावट कर राज-

महल में बहुत विचित्र विवाह मंडप बनाया जाता है। पूरा नगर अंदर से व बाहर से अच्छी तरह सजाया जाता है। नगर में इतनी भव्यता, संपन्नता व सुंदरता है कि उसका वर्णन नहीं किया जा सकता है।

3. दूतों ने सूचना दी, अयोध्या में सजावट, भारी उत्साह

(दोहा 290 से 297)

जनकपुर से दूत अयोध्या पहुँचकर महाराज दशरथ को राम-सीता के विवाह हेतु बारात लेकर चलने का पत्र देते हैं। राम-लक्ष्मण के तेज, प्रताप, ऐश्वर्य का सुंदर वर्णन सुनकर राजा सहित पूरी सभा प्रेम-मग्न हो जाती है। गुरु के पास राजा स्वयं जाकर सूचना देते हैं। सब रानियाँ प्रेम-मुदित होकर खूब दान व न्योछावर देती हैं। बाजे बजाकर सारे नगर में विवाह की खबर दी जाती है। राजमहल से लेकर प्रत्येक घर में मंगलमय सजावट की जाती है। पूरे नगर में उत्साह का वातावरण छा जाता है। जैसे दशरथ जी राम की खबर का पत्र बार-बार पढ़ते हैं, मातायें पत्र हृदय से लगाती हैं, वैसे ही रामकथा का पाठ प्रेम से बार-बार करना चाहिये।

4. बारात की तैयारी, राम की बारात अयोध्या से चल दी

(दोहा 298 से 304)

बारात चलने की तैयारी प्रारंभ। नगर के बाहर मैदान में बारात एकत्रित होती है। योद्धाओं की तरह सजकर युवक सुंदर घोड़ों पर बैठते हैं, रथों में रथी बैठे हैं, हाथी पर बुजुर्ग बैठते हैं। विप्र लोग पालकी में बैठते हैं। मागध, भाट, बंदी, सेवक इत्यादि भी यथा-योग्य सवारी पर तैयार हैं। पूरी बारात व सामान जब तैयार हो गया तब दिव्य रथ में महाराज दशरथ व तेजस्वी रथ में वशिष्ठ जी बैठते हैं। दशरथ जी के शंख बजाते ही पूरी बारात जनकपुर की ओर चल देती है। रास्ते में सभी तरह के सगुन प्रगट होकर अपने को सच साबित करते हैं। इस सुंदर प्रसंग का पाठ करते समय अपने आपको बारात में शामिल करने का प्रयास करें, तभी आनंद है।

5. जनकपुर में बारात की भव्य अगवानी

(दोहा 305 से 312)

अयोध्या से बारात जनकपुर के बाहर पहुँचती है। नगर के लोग बारात की भव्य अगवानी करते हैं। जनक जी द्वारा भेजी गयी अनेकों सामग्री विनम्रतापूर्वक महाराज दशरथ को दी जाती है। वे उसे स्वीकार करके, जरूरतमंदों को बाँट

देते हैं। नगर के बाहर से जनवासे तक महँगे कालीन बिछाये जाते हैं, उस पर बारात को समारोह पूर्वक पैदल जनवासे लाया जाता है। सीता जी की प्रेरणा से सिद्धियाँ स्वर्ग से भी सुंदर व्यवस्थायें जनवासे में कर देती हैं। चारों भाइयों, महाराज दशरथ, विश्वामित्र जी व नगरवासियों का जनवासे में आदर व प्रेमपूर्वक मिलन होता है। लग्न के पहले बारात आने से सब जगह उत्साह है, पूरे नगर में चारों भाइयों की सुंदरता की चर्चा है।

6. प्रभु राम की बारात, द्वारचार, मंडप में स्वागत

(दोहा 312 से 321)

अगहन माह, शुभ लग्न तिथि, गोधूलि में प्रभु राम की बारात जनवासे से चलकर महाराज जनक के राजमहल के द्वार पर पहुँचती है। इस प्रसंग में चलती हुई बारात का सुंदर चित्रण है। महाराज दशरथ के साथ साधु समाज है, राम के साथ तीनों भाई हैं, कामदेव स्वयं घोड़ा बने हैं जिस पर वर राम बैठे हैं। आकाश से देवता अपनी शक्तियों सहित बारात देख रहे हैं। द्वार पर पहुँचते ही माँ सुनयना वर राम का परिछन करती हैं। मंडप में ले जाकर उन्हें बैठाया जाता है। दशरथ जी व जनक जी का समधी मिलन होता है। पूरी बारात को मंडप में ले जाकर आदर सहित बैठाया जाता है। वशिष्ठ जी, विश्वामित्र जी व अन्य ऋषि मुनियों का पूजन व सम्मान के बाद दशरथ जी का पूजन होता है। सभी बारातियों का स्वागत होता है। देवता विप्र वेष में मंडप में बैठे हैं, देवांगनायें स्त्री बनकर रनिवास के साथ हैं। चारो तरफ आनंद ही आनंद छाया है।

7. दिव्य मंडप में श्रीराम सीता विवाह

(दोहा 322 से 324)

भारतीय संस्कृति के अनुसार विवाह रीति का सुंदर चित्रण इस प्रसंग में किया गया है। मंडप में वर बने प्रभु राम विराजमान हैं, सीता जी दिव्य सौंदर्य में सखियों के साथ मंडप में आती है। गणेश-गौरी का पूजन करवाकर वैवाहिक रीति प्रारंभ होती है। राजा जनक व रानी सुनयना, वर राम के चरण पखारते हैं। कन्या सीता का हाथ वर राम के हाथों में रखकर पाणिग्रहण मंत्रोच्चारण के बीच किया जाता है। राजा-रानी कन्यादान करते हैं। हवन करके राम व सीता की गाँठें जोड़ी गयीं, फिर दोनों सात फेरे लेते हैं। वधू सीता के मस्तक पर वर राम सिंदूर लगाते हैं। वैवाहिक रीति पूरी होने के बाद राम व सीता एक साथ

सिंहासन पर बैठते हैं। वसिष्ठ जी राम-सीता विवाह संपन्न होने की घोषणा करते हैं। रामचरितमानस का यह प्रसंग बहुत महिमावान् है, प्रेमपूर्वक इसका पाठ करके दिव्य विवाह के साक्षी बनें।

8. भरत-मांडवी, लक्ष्मण-उर्मिला, शत्रुघ्न-श्रुतकीर्ति विवाह

(दोहा 325 से 326)

जनकपुरवासी विधाता से मनौती माँग ही रहे थे कि चारों भाइयों का विवाह जनकपुर में ही हो जाये। जनक जी के मन में भी यह बात थी। वसिष्ठ जी की आज्ञा से जनक जी के भाई कुशध्वज की दो कन्यायों व जनक जी की छोटी पुत्री का विवाह तीनों भाइयों के साथ सभी रीतियों का विधिवत्, प्रेम व आदर से पालन करते हुए किया गया। महाराज दशरथ के चारों पुत्रों व चारों पुत्रवधुओं को एक ही मंडप में एक साथ बैठे हुए देखने का अद्भुत अवसर जनकपुर व अयोध्यावासियों के साथ ही तुलसीदास जी हम सबको भी सुलभ करवा रहे हैं। इनके दर्शन करके अर्थ, धर्म, काम व मोक्ष, चारों फलों को सरलता से प्राप्त करें।

9. कोहबर में चारो वर-वधुओं ने विवाह की रस्में कीं

(दोहा 327)

विवाह मंडप से कोहबर जाते हुए प्रभु राम के सौंदर्य का पैर से लेकर सिर तक सजीव चित्रण इस प्रसंग में किया है। कोहबर में स्त्रियाँ अपनी प्रसन्नता खुलकर व्यक्त करती हैं। यहाँ लोकरीति के अनुसार रस्में की जाती हैं। एक लोकरीति, जिसमें वर-वधू एक-दूसरे को खाना खिलाते हैं, का वर्णन है। इसी प्रकार की अन्य रीतियाँ की गईं। चारों भाइयों को वधू सहित अलग-अलग कोहबर में ले जाकर लोकरीति की जाती है। इसके बाद सखियाँ चारों की जोड़ी को जनवासे लेकर जाती हैं। रास्ते में चारों तरफ लोग चिरंजीवी होने का आशीर्वाद देते हैं। देवता व मुनि प्रभु को देखकर मुदित होकर जय हो, जय हो, जय हो कहते चले गये। यहाँ से विवाह का कार्य पूरा हो गया।

10. भव्य जेवनार, जनकपुर में नित्य मंगल व आनंद

(दोहा 328 से 332)

विवाह के बाद दूसरे दिन दोपहर में मंडप के नीचे बारातियों को भोजन करवाया जाता है, इसे जेवनार कहते हैं। महाराज जनक ने बहुत आदर के साथ सबको

आमंत्रित किया, चरण धोकर, उचित आसनों पर बैठाया। चतुर परोसने वाले विनम्रता व आदर से मणियों की पत्तलों में अनेक प्रकार का भोजन परोसते हैं। स्त्रियाँ मधुर ध्वनि में गालियाँ गाती हैं। अत्यंत आनंद के माहौल में भोजन करवाया जाता है। जनकपुर में बारात ठहरी है, नित्य नये मंगल हो रहे हैं, समय तेजी से व्यतीत हो रहा है। दशरथ जी ने विप्रों को गाय व भिक्षुकों को वस्तुयें दान दीं। दशरथ जी रोज कहते हैं कि अब हमें जाने दीजिये, परंतु जनक जी रोक लेते हैं। अंत में शतानंद जी व विश्वामित्र के कहने से जनक जी विदाई के लिये तैयार हो जाते हैं।

11. विदाई

(दोहा 333 से 342)

विदाई की तैयारी में जनक जी ने बारात को वापसी में ठहरने के स्थानों में भोजन व्यवस्था हेतु सामान भेजा। दुबारा बहुत सारा दहेज का सामान सीधे अयोध्या भेजा। रनिवास में व पूरे नगर में लोग दु:ख से व्याकुल हो गये। रानियाँ चारों राजकुमारियों से बार-बार भेंट करके आशीर्वाद व शिक्षायें देती हैं। प्रभु राम तीनों भाइयों सहित विदा करवाने राजमहल पहुँचे। रानी सुनयना राम जी से विनती करके सीता को अपना समझकर अपनाने का अनुरोध करती हैं। राजा जनक ज्ञान भूलकर पुत्री की विदाई में रो रहे हैं। पूरे नगर में करुणा छा गयी। डोली में राजकुमारियों को विदा करके बारात के साथ जनक जी नगर के बाहर बहुत दूर तक जाते हैं। दोनों समधी एक दूसरे के प्रति आभार व्यक्त कर प्रेम अश्रुओं से भर जाते हैं। जनक जी राम की स्तुति करते हैं फिर वरदान माँगते हैं कि मन भूलकर भी आपके चरणों को न भूले। राजा जनक तीनों भाइयों से मिलकर अंत में विश्वामित्र जी के प्रति आभार व कृतज्ञता व्यक्त करते हैं।

12. अयोध्या में बारात के स्वागत की तैयारी, भव्य स्वागत

(दोहा 343 से 348)

प्रभु राम की बारात जनकपुर से चलकर रास्ते में रुकती हुई अयोध्या के करीब पहुँचती है। अयोध्यावासी आनंदित व रोमांचित होकर बारात के स्वागत के लिये अपने घरों से लेकर पूरे नगर को सजा देते हैं। राजमहल में मातायें तो प्रेम में सुध-बुध भूल जाती हैं। वहाँ परिछन की तैयारी होने लगती है। जैसे ही

बारात नगर के अंदर प्रवेश करती है, लोग राम के रूप को देखते हैं, न्योछावर करते हैं, दशरथ जी को प्रणाम करते हैं। स्त्रियाँ आरती करती हैं, पालकी के अंदर झाँककर वधुओं के मुख को देख लेती हैं।

13. परछन व देव-पितर पूजन

(दोहा 349 से 350)

राजद्वार में माताओं ने चारों वधुओं का परछन किया, देहरी पूजकर गृह में प्रवेश करवाया। चार सुंदर सिंहासनों पर वर-वधुओं को बैठाकर चरण धोये, पूजन किया व आरती की। लौकिक रीतियाँ कीं। कोहबर में ले जाकर वधुओं से भी कुल देवता व पितरों का पूजन करवाया ताकि वे अपने आपको इसी घर का समझने लगें। माताओं ने सबके कल्याण के लिये देवताओं से प्रार्थना की व उनके आशीर्वाद को आँचल फैलाकर स्वीकार किया।

14. बारातियों की विदाई

(दोहा 351 से 353)

बारात वापस आने के बाद बारातियों की विदाई की जाती है। राजभवन के बाहर से ही सामान्य बारातियों, नगरवासियों, याचकों, सेवकों को उपहार व सम्मान देकर राजा ने विदा किया। राजभवन के अंदर से विप्रों व उनकी स्त्रियों को भोजन करवाकर दान सम्मान देकर विदा किया। राजा ने सपरिवार गुरु वसिष्ठ जी की पूजा की, कृतज्ञता व्यक्त की व नेग देकर विदा किया। प्रिय व पूज्य रिश्तेदारों को ससम्मान उपहार देकर विदा किया। विश्वामित्र जी की पूजा करके, विशेष सम्मान देते हुए राज-भवन के अंदर ही ठहराया जाता है, राज-परिवार स्वयं उनकी सेवा में लगा रहता है।

15. रनिवास में पारिवारिक मिलन, रात्रि विश्राम

(दोहा 354 से 357)

राजा दशरथ ने सायँकाल रनिवास पहुँचकर चारो वधुओं सहित पुत्रों को देखा उनका दुलार किया व बातचीत की। पूरा राजपरिवार एक साथ एकत्रित हुआ। जनकपुर में बारात व जनक जी के स्वागत-सत्कार, प्रेम-आदर का वृत्तान्त दशरथ ने विस्तार से सबको सुनाया। परिवार सहित भोजन करके बहुओं को अपनी कन्या के समान देखभाल करने का आदेश देकर राजा शयन कक्ष में

चले गये। रानियाँ चारों पुत्रों को दिव्य शयन कक्ष में सुलाती हैं। सोते हुए राम के दर्शन इस प्रसंग में करें। बहुओं को अपने पास गोद में लिटाकर सुलाती हैं। पूरा रनिवास रात में भी बहुत शोभायमान है। नगर की स्त्रियाँ रात्रि जागरण करके गाना-बजाना व खेल इत्यादि करती हैं।

16. सत्संग, कंकण छुड़ाई, विश्वामित्र जी की विदाई

(दोहा 358 से 360)

अयोध्या के राज-महल में नित्य प्रात: सत्संग होता है, पूरा राजपरिवार इसमें शामिल होता है। इस प्रसंग में वसिष्ठ जी धर्म व इतिहास के बारे में चर्चा करके मुनि विश्वामित्र जी के महान् कार्यों व तप के बारे में सबको बताते हैं। विवाह का अंतिम कार्य कंकण छुड़ाई बहुत आनंद से पूरा होता है। पूरे अयोध्या में आनंद ही आनंद है। विश्वामित्र जी की भावभीनी विदाई के साथ तुलसीदास जी श्रीराम-सीता विवाह की कथा पूरी करते हैं।

17. राम-सीता विवाह के पाठ की महिमा

(दोहा 361)

श्रीरामचरितमानस में हर काण्ड के पाठ की अपनी विशेषता है। बालकाण्ड की विशेषता यह है कि यह 'मंगलायतन' है। इसमें शुरू से अंत तक मंगल ही मंगल है। राम नाम में मंगल, कथा में मंगल, चरित्र में मंगल, अवतार में मंगल, बाल-लीलाओं में मंगल, जनेऊ में मंगल व विवाह होता है तो उसमें में तो सर्वत्र मंगल ही मंगल है। इसका पाठ श्री गुरुदेव की कृपा से हमारे जीवन में भी मंगल लाये।

बालकाण्ड – 5

परशुराम प्रसंग एवं सीता-राम विवाह

1. परशुराम जी आ गये

(दोहा 268 से दोहा 285)

तुलसीदास जी ने इस प्रसंग का 18 दोहों में वर्णन किया है। हास्य, व्यंग्य से भरपूर परशुराम-राम-लक्ष्मण संवाद बहुत लोकप्रिय है। क्रोध करने से नुकसान, क्रोध पर नियंत्रण रखने के तरीके, क्रोधी से कैसे निपटें इन सब बातों को बहुत सुंदर तरीके से समझाया गया है। बड़े भाई राम को परशुराम अपशब्द न कह पायें इसलिये लक्ष्मण स्वयं कटु वचन व अपमान सहते हैं। चतुरता से परशुराम को अपनी ही बातों में उलझाये रखते हैं। आज सेना व पुलिस जो कार्य करती है, प्राचीन वर्ण व्यवस्था में इस कार्य को करने वाले को क्षत्रिय कहते थे। ज्ञान अर्जित करके दूसरों को ज्ञान सिखाने वाले को विप्र कहते थे। राम अत्यंत विनम्रता से समझाते हैं कि दोनों का कार्य समाज को सही रास्ते पर लाने का है, जो ज्ञान से समझे उसे ज्ञान से, जो न समझे उसे भय से सही रास्ते पर लाने का कार्य विप्र व क्षत्रिय करते हैं। दोनों एक-दूसरे के पूरक हैं। विप्र सदैव पूजनीय हैं, क्षत्रिय का धर्म है कि विप्र की रक्षा करे, विप्र का धर्म है कि क्षत्रिय को सही मार्ग दिखाये।

शिव-धनुष भंग सुनकर परशुराम जी आ गये

तेहिं अवसर सुनि सिवधनु भंगा। आयउ भृगुकुल कमल पतंगा ॥268:2॥

तेहिं अवसर = उसी मौके पर, *सुनि सिवधनु भंगा* = शिव-धनुष का टूटना सुनकर, *आयउ भृगुकुल कमल पतंगा* = भृगुकुल के श्रेष्ठ परशुराम जी आ गये।

धनुष टूटने की भयंकर आवाज सुनकर परशुराम जी यज्ञ-परिसर में पहुँच गये। भृगुकुल वह है जिसके पूर्वज भृगु जी का पद-चिह्न भगवान नारायण ने अपने वक्ष पर धारण किया हुआ है। उसी भृगुकुल रूपी कमल को विकसित करने के लिये सूर्य के समान भगवान के अवतार परशुराम जी हैं। उन्होंने भृगुकुल का नाम उज्ज्वल किया है।

परशुराम को देखकर सब राजा सकुचा गये

देखि महीप सकल सकुचाने। बाज झपट जनु लवा लुकाने ॥268:3॥

देखि = उन्हें देखकर, *महीप सकल सकुचाने* = सारे राजा संकुचित हो गये, *बाज झपट जनु* = जैसे बाज पक्षी के झपटने पर, *लवा लुकाने* = छोटा सा लवा पक्षी छिपने लगे।

जो राजा लोग कोलाहल कर रहे थे वे परशुराम जी को देखते ही एकदम से सकुचा गये। वे कैसे सकुचे? जैसे बाज पक्षी के झपटने पर, छोटा-सा कोमल लवा पक्षी छिपने लगता है, ऐसे ही सभी राजा कभी भी युद्ध में परशुराम जी से जीत नहीं पाये थे, इसलिये डरकर चुपचाप बैठ गये।

परशुराम जी ने मुनि के वेष में अस्त्र-शस्त्र धारण किये हैं

गौरि सरीर भूति भल भ्राजा। भाल बिसाल त्रिपुंड बिराजा ॥268:4॥
सीस जटा ससिबदनु सुहावा। रिसबस कछुक अरुन होइ आवा ॥268:5॥

गौरि सरीर = गोरे रंग के शरीर में, *भूति भल भ्राजा* = भभूति लगी है, *भाल बिसाल त्रिपुंड बिराजा* = विशाल माथे पर त्रिपुंड लगाये हैं, *सीस जटा* = सिर पर जटा है, *ससिबदनु सुहावा* = मुख चन्द्रमा के समान प्रकाशवान् है, *रिसबस* = क्रोध के कारण, *कछुक अरुन होइ आवा* = मुख में थोड़ी-सी लालिमा आ गयी है।

भृकुटी कुटिल नयन रिस राते। सहजहुँ चितवत मनहुँ रिसाते ॥268:6॥
बृषभ कंध उर बाहु बिसाला। चारु जनेउ माल मृगछाला ॥268:7॥
कटि मुनिबसन तून दुइ बाँधें। धनु सर कर कुठारु कल काँधें ॥268:8॥

भृकुटी कुटिल = भौंहें टेढ़ी हैं, *नयन रिस राते* = नेत्र क्रोध से लाल हैं, *सहजहुँ चितवत* = सहज ही देखते हैं, *मनहुँ रिसाते* = तो लगता है कि नाराज हैं, *बृषभ कंध* = बैल के समान ऊँचे कंधे हैं, *उर बाहु बिसाला* = छाती व भुजायें विशाल हैं, *चारु जनेउ माल* = सुंदर जनेऊ व माला पहने हैं, *मृगछाला कटि मुनिबसन* = कमर में मुनियों का वस्त्र मृगछाल बाँधे हैं, *तून दुइ बाँधें* = उसमें दो तरकस बँधे हैं, *धनु सर कर* = हाथ में धनुष बाण लिये हैं, *कुठारु कल काँधें* = सुंदर कंधे पर फरसा धारण किये हैं।

सांत बेषु करनी कठिन बरनि न जाइ सरूप ।
धरि मुनितनु जनु बीर रसु आयउ जहँ सब भूप ॥दोहा 268॥

सांत बेषु = शांत वेष है, *करनी कठिन* = परंतु कार्य कठिन हैं, *बरनि न जाइ सरूप* = स्वरूप का वर्णन नहीं किया जा सकता है, *धरि मुनितनु* = मुनि का शरीर धारण करके, *जनु बीर रसु आयउ* = मानो वीर रस ही आ गया हो, *जहँ सब भूप* = जहाँ सब राजा लोग बैठे हैं।

भृगुवंशी परशुराम जी को देखकर लगता है कि साक्षात् वीर रस ही मुनि का वेष धारण करके आ गया हो। इनका वेष तो मुनियों जैसा शांत है परंतु वीर क्षत्रियों की तरह युद्ध करते हैं। तुलसीदास जी कहते हैं कि इनका वर्णन कैसे करें? ऋषियों के जैसा या योद्धा के जैसा। दोनों रूपों को मिलाकर इस प्रकार वर्णन करते हैं:

1. तपस्वी: गोरे रंग के शरीर पर भभूति लगाये तपस्वी लगते हैं।
2. शिव के आराध्य: विशाल मस्तक पर त्रिपुंड लगाये हैं।
3. ऋषि लगते हैं: सिर पर जटायें धारण किये हैं।
4. मुख तेजस्वी: चन्द्रमा के समान मुख में प्रकाश व तेज है।
5. शरीर में क्रोध के लक्षण: चेहरे पर लालिमा हैं, भौहें टेढ़ी हैं, नेत्र लाल हैं। सहज ही किसी की ओर देखते हैं तो लगता है नाराज हैं।
6. शक्तिशाली हैं: बैल के समान ऊँचे व पुष्ट कंधे हैं, छाती व भुजायें विशाल हैं।
7. मुनि वेष: सुंदर यज्ञोपवीत व माला पहने हैं। कमर में मृगछाल लपेटे हैं।
8. अस्त्र-शस्त्र लिये हैं: कमर में दो तरकस बँधे हैं क्योंकि ये दोनों हाथों से धनुष चलाते हैं, हाथ में धनुष-बाण लिये हैं, फरसा कंधे पर रखा है।

भय से व्याकुल राजा परिचय देकर दंडवत् प्रणाम करते हैं

देखत भृगुपति बेषु कराला। उठे सकल भय बिकल भुआला ॥269:1॥
पितु समेत कहि कहि निज नामा। लगे करन सब दंड प्रनामा ॥269:2॥
जेहि सुभायँ चितवहिं हितु जानी। सो जानइ जनु आइ खुटानी ॥269:3॥

देखत भृगुपति बेषु कराला = परशुराम जी का भयानक वेष देखकर, *उठे सकल भय बिकल भुआला* = सब राजा भय से व्याकुल होकर उठकर खड़े हो गये, *पितु समेत कहि कहि निज नामा* = पिता सहित अपना नाम कह-कहकर, *लगे करन सब दंड प्रनामा* = सब दण्डवत् प्रणाम करने लगे, *जेहि सुभायँ चितवहिं* = जिसकी ओर सहज भाव से देख लेते हैं, *हितु जानी* = उसका हित समझकर, *सो जानइ जनु आइ खुटानी* = वह समझता है मेरी आयु अब खत्म हो गई है।

परशुराम जी को दूर से आते देखकर राजा लोग चुपचाप बैठ गये थे। जब निकट आये तो उनका भयानक वेष देखकर भय से व्याकुल होकर सब उठ कर खड़े हो गये। उन्हें डर था कि यदि बैठे रहे तो कहीं अभिमानी समझकर हमारा विनाश न कर दें। मुनिवेष के प्रति आदर दिखाते हुए अपना व पिता का नाम बताकर परिचय देते हुए साष्टांग प्रणाम करते हैं। जिन राजाओं के प्रति वे सहज भाव से भी देख लें वे समझते थे कि हमारी आयु अब खत्म हो गई है।

जनक जी ने प्रणाम किया, सीता से प्रणाम करवाया, आशीर्वाद दिया

जनक बहोरि आइ सिरु नावा। सीय बोलाइ प्रनामु करावा ॥269:4॥
आसिष दीन्हि सखीं हरषानीं। निज समाज लै गईं सयानीं ॥269:5॥

जनक बहोरि आइ सिरु नावा = फिर जनक जी ने आकर सिर झुकाकर प्रणाम किया, *सीय बोलाइ प्रनामु करावा* = सीता जी को बुलवाकर प्रणाम करवाया, *आसिष दीन्हि* = आशीर्वाद दिया, *सखीं हरषानीं* = सखियाँ हर्षित हुई, *निज समाज लै गईं सयानीं* = समझदार सखियाँ उन्हें अपने साथ ले गईं।

जनक जी ने आकर सिर झुकाकर प्रणाम किया, भय नहीं है इसलिये दंडवत् प्रणाम नहीं करते। सीता जी को बुलवाकर प्रणाम करवाया, परशुराम जी ने

आशीर्वाद दिया। प्रथा है कि एक बार किसी को आशीर्वाद दे दो तो वह उसे मारता नहीं, यह सोचकर सखियाँ निर्भय होकर हर्षित हो गईं। चतुर सखियाँ ज्यादा देर रुकी नहीं, तुरंत ही सीता जी को लेकर राजमहल के अंदर चली गयीं।

विश्वामित्र मिले, राम-लक्ष्मण को आशीर्वाद देकर देखते ही रह गये

बिस्वामित्रु मिले पुनि आई। पद सरोज मेले दोउ भाई ॥269:6॥
रामु लखनु दसरथ के ढोटा। दीन्हि असीस देखि भल जोटा ॥269:7॥
रामहि चितइ रहे थकि लोचन। रूप अपार माद मद लोचन ॥269:8॥

बिस्वामित्रु मिले पुनि आई = फिर विश्वामित्र आकर मिलते हैं, *पद सरोज मेले दोउ भाई* = दोनों भाइयों को उनके चरण कमलों में प्रणाम करवाया, *रामु लखनु दसरथ के ढोटा* = विश्वामित्र जी ने कहा ये राम व लक्ष्मण दशरथ के पुत्र हैं, *दीन्हि असीस देखि भल जोटा* = सुंदर जोड़ी देखकर परशुराम जी ने आशीर्वाद दिया, *रामहि चितइ* = राम को देखकर, *रहे थकि लोचन* = उनके नेत्र स्तब्ध रह गये, *रूप अपार* = उस अपार रूप को देख, *माद मद लोचन* = जो कामदेव के मद को भी मारने वाला है।

विश्वामित्र जी आकर मिलते हैं, दोनों में आपस में बहुत अंतर नहीं है, समानता है, इसलिये मिले, प्रणाम नहीं किया। दोनों भाइयों को परशुराम जी के चरण कमलों में सिर लगा कर प्रणाम करवाया। परिचय दिया कि ये राम व लक्ष्मण राजा दशरथ के पुत्र हैं। श्याम वर्ण के राम व गौर वर्ण के लक्ष्मण की सुंदर जोड़ी उन्हें बहुत अच्छी लगी, दोनों को आशीर्वाद दिया। प्रभु राम के अपार सौंदर्य, जो कामदेव के मद को भी नष्ट करने वाला है, को देखकर वे स्तब्ध होकर देखते ही रह गये।

जनक जी से पूछते हैं, यहाँ यह भीड़ क्यों है?

बहुरि बिलोकि बिदेह सन कहहु काह अति भीर ।
पूँछत जानि अजान जिमि ब्यापेउ कोपु सरीर ॥दोहा 269॥

बहुरि बिलोकि बिदेह सन = फिर जनक जी की ओर देखकर, *कहहु काह अति भीर* = कहते हैं कि बताओ यह भीड़ किसलिये है? *पूँछत जानि*

अजान जिमि = जानते हुए भी अनजान बनकर पूछते हैं, *ब्यापेउ कोपु सरीर* = उनके शरीर में क्रोध छा गया।

परशुराम जी ने राम से अपनी दृष्टि हटायी और जनक जी की तरफ दृष्टि डालकर कहा कि मुझे यह तो बताओ यहाँ पर इतनी भीड़ क्यों लगी है? परशुराम जी देख रहे हैं कि शिव जी का धनुष टूटा पड़ा है, प्रतिज्ञा के अनुसार जो शिव जी के धनुष को तोड़ेगा उसके साथ सीता का विवाह होना है। सब कुछ जानते हुए भी परशुराम जी अनजान की तरह क्रोधित होकर प्रश्न पूछ रहे हैं।

राजा जनक ने प्रतिज्ञा व स्वयंवर की बात बतायी

समाचार कहि जनक सुनाए। जेहि कारन महीप सब आए ॥270:1॥

समाचार कहि जनक सुनाए = जनक जी ने सभी बातें बतायीं, *जेहि कारन महीप सब आए* = जिस कारण से सब राजा लोग आये थे।

जनक जी ने कहा कि स्वयंवर की बात चल रही थी, प्रतिज्ञा की सूचना राजाओं को दी गई थी, इसी आधार पर सारे राजा एकत्रित हुए हैं। जनक जी ने उतना ही बताया जितना पूछा था। यह नहीं बताया कि धनुष को राम ने तोड़ा है, सीता का विवाह हो गया है।

टूटे धनुष को देख, धमकाते हुए पूछा किसने इसे तोड़ा है?

सुनत बचन फिरि अनत निहारे। देखे चापखंड महि डारे ॥270:2॥
अति रिस बोले बचन कठोरा। कहु जड़ जनक धनुष कै तोरा ॥270:3॥
बेगि देखाउ मूढ़ न त आजू। उलटउँ महि जहँ लहि तव राजू ॥270:4॥

सुनत बचन = जनक जी की बातें सुनकर, *फिरि अनत निहारे* = मुड़कर दूसरी तरफ देखा, *देखे चापखंड महि डारे* = तो धनुष के टुकड़े जमीन पर पड़े दिखाई दिये, *अति रिस बोले बचन कठोरा* = अत्यंत गुस्से से कठोर वचन बोलते हैं, *कहु जड़ जनक* = रे मूर्ख जनक! यह बताओ कि, *धनुष कै तोरा* = यह धनुष किसने तोड़ा है? *बेगि देखाउ मूढ़* = रे मूर्ख! उसे शीघ्रता से

दिखाओ, *न त आजू उलटउँ महि* = नहीं तो आज मैं वहाँ तक की पृथ्वी पलट दूँगा, *जहँ लहि तव राजू* = जहाँ तक तुम्हारा राज्य है।

यह सुनते ही परशुराम जी ने घूमकर दूसरी ओर देखा, तो धनुष के दो टुकड़े जमीन पर पड़े दिखे। अत्यंत गुस्से से कठोर वचन में जनक जी से पूछते हैं कि यह धनुष कैसे टूट गया, यह तो तुम्हारे पितामह को सुरक्षा के लिये दिया गया था। कहते हैं, रे मूर्ख! जनक, जल्दी बताओ कि किसने तोड़ा है? नहीं तो जहाँ तक तुम्हारा राज्य है वहाँ तक की पृथ्वी पलट दूँगा। आशय है जैसे तमाम राजाओं का हमने विनाश कर दिया वैसे ही तुम्हारा भी विनाश करके, दूसरा राजा बैठा देंगे।

जनक जी डरकर जवाब नहीं देते, सब लोग चिंतित

अति डरु उतरु देत नृपु नाहीं। कुटिल भूप हरषे मन माहीं ॥270:5॥
सुर मुनि नाग नगर नर नारी। सोचहिं सकल त्रास उर भारी ॥270:6॥

अति डरु उतरु देत नृपु नाहीं = अत्यंत डर के कारण राजा उत्तर नहीं देते हैं, *कुटिल भूप हरषे मन माहीं* = कुटिल राजा मन में बहुत प्रसन्न हुए, *सुर मुनि नाग नगर नर नारी* = देवता; मुनि; नाग व नगर के स्त्री-पुरुष, *सोचहिं सकल* = सभी चिंतित हो गये, *त्रास उर भारी* = हृदय में बहुत भय हो गया।

मन पछिताति सीय महतारी। बिधि अब सँवरी बात बिगारी ॥270:7॥
भृगुपति कर सुभाउ सुनि सीता। अरध निमेष कलप सम बीता ॥270:8॥

मन पछिताति सीय महतारी = सीता जी की माता मन में पछता रही हैं, *बिधि अब सँवरी बात बिगारी* = विधाता ने अब बनी-बनायी बात बिगाड़ दी, *भृगुपति कर सुभाउ सुनि* = परशुराम जी के स्वभाव के बारे में सुनकर, *सीता अरध निमेष* = सीता जी का आधा क्षण भी, *कलप सम बीता* = कल्प के समान बीतने लगा।

जनक जी डर गये, कुछ उत्तर नहीं देते हैं। कुटिल राजा प्रसन्न हो गये। देवता, मुनि, नाग व नगर के स्त्री-पुरुष, सभी चिंतित हो गये, हृदय में बहुत भय हो गया। सुनयना जी पछताने लगीं कि अब विधाता बनी हुई बात को बिगाड़ रहा है। सीता जी को जब परशुराम के स्वभाव के बारे में

पता चला तो वे भी व्याकुल हो गयीं, उनको आधा पल भी कल्प के समान लगने लगा कि अब पता नहीं क्या होगा?

राम ने घुमाकर कहा कि आपके दास ने तोड़ा है, क्या आज्ञा है?

सभय बिलोके लोग सब जानि जानकी भीरु ।
हृदयँ न हरषु बिषादु कछु बोले श्रीरघुबीरु ॥दोहा 270॥

सभय बिलोके लोग सब = सब लोगों को भयभीत देखकर, *जानि जानकी भीरु* = सीता को डरी हुई जानकर, *हृदयँ न हरषु बिषादु कछु बोले श्रीरघुबीरु* = मन में बिना हर्ष या विषाद के राम जी बोलते हैं।

नाथ संभुधनु भंजनिहारा। होइहि केउ एक दास तुम्हारा ॥271:1॥
आयसु काह कहिअ किन मोही। सुनि रिसाइ बोले मुनि कोही ॥271:2॥

नाथ संभुधनु भंजनिहारा = हे नाथ! शिव-धनुष को तोड़ने वाला, *होइहि केउ एक दास तुम्हारा* = आपका कोई एक दास ही होगा, *आयसु काह कहिअ किन मोही* = जो आज्ञा हो आप मुझसे कहिये, *सुनि रिसाइ बोले मुनि कोही* = यह सुनकर क्रोधी मुनि गुस्से से बोले।

राम ने देखा कि सब भयभीत हैं, राजा जनक भी कुछ बोल नहीं पा रहे हैं, सबसे ज्यादा सीता जी शंकित हैं। तब प्रभु अपनी विशिष्ट शैली में बोलते हैं, उन्हें न हर्ष है न विषाद। हे नाथ! शिव जी का धनुष तोड़ने वाला कोई आपका दास ही है। मतलब स्पष्ट है कि आपसे शत्रुता मानकर धनुष नहीं तोड़ा है, लड़ाई मोल नहीं लेना चाहता, वह आपका मित्र ही है। आप धनुष तोड़ने वाले को खोज रहे हो, उससे जो कहना है आप मुझे बतायें। इस प्रकार राम ने घुमाकर यह तो बता दिया कि हमने तोड़ा है, जो आज्ञा हो कहिये। इतनी बात सुनकर परशुराम का गुस्सा और बढ़ गया।

सेवक नहीं शत्रु है, उसे अलग करो वरना सब मारे जायेंगे

सेवकु सो जो करै सेवकाई। अरि करनी करि करिअ लराई ॥271:3॥
सुनहु राम जेहिं सिवधनु तोरा। सहसबाहु सम सो रिपु मोरा ॥271:4॥
सो बिलगाउ बिहाइ समाजा। न त मारे जैहहिं सब राजा ॥271:5॥

सेवकु सो जो करै सेवकाई = सेवक वह है जो सेवा का काम करे, *अरि करनी* = जो शत्रु का काम करे, *करि करिअ लराई* = उससे तो लड़ाई ही करनी चाहिये, *सुनहु राम जेहिं सिवधनु तोरा* = हे राम! सुनो जिसने शिव-धनुष तोड़ा है, *सहसबाहु सम सो रिपु मोरा* = सहस्रबाहु के समान वह मेरा शत्रु है, *सो बिलगाउ बिहाइ समाजा* = धनुष तोड़ने वाला इस समाज से अलग हो जाये, *न त मारे जैहहिं सब राजा* = नहीं तो सारे राजा मारे जायेंगे।

अरे! सेवक वह है जो सेवा करे। धनुष तोड़ने वाला तो सहस्रबाहु के समान मेरा शत्रु है। जिसने शिव-धनुष तोड़ा है उसे राजाओं के समाज से अलग करके दिखाओ, अन्यथा हम सबको मार देंगे। यहाँ पर लगता है कि राम के कहने पर परशुराम विश्वास नहीं करते कि इन्होंने ही धनुष तोड़ा है।

लक्ष्मण मुस्कुराते हुए कहते हैं इस धनुष पर इतना मोह क्यों?

सुनि मुनि बचन लखन मुसुकाने। बोले परसुधरहि अपमाने ॥271:6॥
बहु धनुहीं तोरीं लरिकाईं। कबहुँ न असि रिस कीन्हि गोसाईं ॥271:7॥
एहि धनु पर ममता केहि हेतू। सुनि रिसाइ कह भृगुकुलकेतू ॥271:8॥

सुनि मुनि बचन = मुनि की बातें सुनकर, *लखन मुसुकाने* = लक्ष्मण मुस्कुराते हैं, *बोले परसुधरहि अपमाने* = परशुराम जी का अपमान करते हुए कहते हैं, *बहु धनुहीं तोरीं लरिकाईं* = बचपन में बहुत सी धनुहियाँ तोड़ डाली, *कबहुँ न असि रिस* = पर कभी भी इस प्रकार का गुस्सा, *कीन्हि गोसाईं* = हे गोसाई आपने नहीं किया, *एहि धनु पर ममता केहि हेतू* = इस धनुष पर इतनी ममता किस कारण से है? *सुनि रिसाइ कह भृगुकुलकेतू* = यह सुनकर परशुराम जी कुपित होकर कहने लगे।

लक्ष्मण जी परशुराम जी की बातें सुनकर व्यंग्य से मुस्कुराकर कहते हैं कि बचपन में हमने बहुत से छोटे-छोटे धनुष तोड़े हैं, पर आपने ऐसा गुस्सा कभी नहीं किया। धनुष तो टूटते रहते हैं फिर नये बन जायेंगे, लेकिन आपको इस धनुष पर इतनी ममता क्यों है? इस प्रकार की बात लक्ष्मण जी ने चिढ़ाने के लिये कह दीया जिससे परशुराम जी का गुस्सा और बढ़ जाये। यह सुनकर परशुराम जी कुपित होकर कहने लगे।

रे बालक! संभलकर बोल, शिव-धनुष की तुलना किसी से नहीं

रे नृप बालक काल बस बोलत तोहि न सँभार ।
धनुही सम तिपुरारि धनु बिदित सकल संसार ॥दोहा 271॥

रे नृप बालक काल बस = अरे राजकुमार! काल के वश होने से, *बोलत तोहि न सँभार* = तू संभलकर नहीं बोल रहा है, *धनुही सम तिपुरारि धनु* = क्या यह शिव-धनुष धनुही के समान है? *बिदित सकल संसार* = यह धनुष तो सारे संसार में प्रसिद्ध है।

लक्ष्मण जी वास्तव में परशुराम का इलाज कर रहे हैं। दवाई कारगर हो रही है। परशुराम गुस्से से चिल्लाकर कहते हैं अरे! क्या शिव-धनुष की तुलना संसार के किसी अन्य धनुष से की जा सकती है? यह धनुही नहीं है, बहुत बड़ा है, सारे संसार में यह विख्यात धनुष है। ऐ राजकुमार, तेरी मृत्यु निकट आई है इसलिये काल के वश में होकर तू इस प्रकार बोल रहा है, संभल जा।

राम के छूते ही पुराना धनुष टूट गया, बेवजह क्रोध क्यों?

लखन कहा हँसि हमरें जाना। सुनहु देव सब धनुष समाना ॥272:1॥
का छति लाभु जून धनु तोरें। देखा राम नयन के भोरें ॥272:2॥
छुअत टूट रघुपतिहु न दोसू। मुनि बिनु काज करिअ कत रोसू ॥272:3॥

लखन कहा हँसि = लक्ष्मण जी हँसकर कहते हैं, *हमरें जाना सुनहु देव* = हे देव! सुनिये; हमारी समझ में तो, *सब धनुष समाना* = सभी धनुष एक जैसे होते हैं, *का छति लाभु* = क्या हानि या लाभ है, *जून धनु तोरें* = पुराने धनुष के तोड़ने पर, *देखा राम नयन के भोरें* = राम ने तो इसे नया समझकर देखा था, *छुअत टूट* = यह तो छूने से ही टूट गया, *रघुपतिहु न दोसू* = राम का कोई दोष नहीं है, *मुनि बिनु काज* = हे मुनि! बिना कारण के, *करिअ कत रोसू* = किसलिये क्रोध करते हैं।

लक्ष्मण जी हँसकर कहते हैं, मेरी समझ में तो सभी धनुष एक ही समान हैं। चाहे छोटा हो या बड़ा। शक्तिशाली के लिये क्या छोटा, क्या बड़ा, पर कमजोर के लिये फर्क हो सकता है, वह बड़ा न चला पाये। इतना पुराना धनुष

टूट गया तो उससे क्या लाभ? क्या हानि? वैसे भी पुराना था, बेकार रखा था। राम ने सोचा कि यह नया धनुष है, इसलिये उठाया, प्रत्यंचा चढ़ायी, पर यह तो निकला पुराना। राम के छूते ही टूट गया। इसमें उनका कोई दोष नहीं है। यहाँ पर यह बात और स्पष्ट हो गई कि राम ने ही धनुष तोड़ा है। बिना बात के क्रोध की क्या आवश्यकता है? टूट गया तो टूट गया।

परशुराम अपना नकारात्मक परिचय देकर लक्ष्मण को धमकाते हैं

बोले चितइ परसु की ओरा। रे सठ सुनेहि सुभाउ न मोरा ॥272:4॥
बालकु बोलि बधउँ नहिं तोही। केवल मुनि जड़ जानहि मोही ॥272:5॥

बोले चितइ परसु की ओरा = फरसे की तरफ देखकर कहते हैं, *रे सठ सुनेहि सुभाउ न मोरा* = रे मूर्ख! लगता है तूने मेरा स्वभाव नहीं सुना है, *बालकु बोलि बधउँ नहिं तोही* = बालक समझकर तुझे मारा नहीं, *केवल मुनि जड़ जानहि मोही* = क्या मुझे केवल जड़ मुनि समझता है?

बाल ब्रह्मचारी अति कोही। बिस्व बिदित छत्रियकुल द्रोही ॥272:6॥
भुजबल भूमि भूप बिनु कीन्ही। बिपुल बार महिदेवन्ह दीन्ही ॥272:7॥
सहसबाहु भुज छेदनिहारा। परसु बिलोकु महीपकुमारा ॥272:8॥

बाल ब्रह्मचारी = मैं बचपन से ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करता हूँ, *अति कोही* = बहुत ही क्रोधी हूँ, *बिस्व बिदित छत्रियकुल द्रोही* = सारा संसार जानता है मैं क्षत्रिय कुल का दुश्मन हूँ, *भुजबल* = अपनी भुजाओं के बल से, *भूमि भूप बिनु कीन्ही* = पृथ्वी को राजाओं से विहीन करके, *बिपुल बार* = अनेकों बार, *महिदेवन्ह दीन्ही* = पृथ्वी के देवताओं को दान कर दी है, *सहसबाहु भुज छेदनिहारा* = सहस्रबाहु की भुजाओं को काटने वाले, *परसु बिलोकु महीपकुमारा* = मेरे इस फरसे की ओर ऐ राजकुमार देख।

मातु पितहि जनि सोचबस करसि महीसकिसोर ।
गर्भन्ह के अर्भक दलन परसु मोर अति घोर ॥दोहा 272॥

मातु पितहि जनि सोचबस करसि महीसकिसोर = ऐ राजकुमार अपने माता-पिता को चिंता में मत डाल, *गर्भन्ह के अर्भक दलन* = यह गर्भ के बच्चों का भी नाश करने वाला, *परसु मोर अति घोर* = मेरा फरसा बहुत ही भयानक है।

परशुराम जी अपने फरसे की तरफ लक्ष्मण जी का ध्यान आकृष्ट करते हुए कहते हैं कि क्या तुमने कभी मेरा फरसा नहीं देखा? क्या तुमने मेरे स्वभाव के बारे में कभी सुना नहीं? बालक समझकर तुम्हें मार नहीं रहा हूँ। तुम यह समझते होगे कि हम केवल एक मुनि हैं, पर ऐसा नहीं है। परशुराम जी अपनी शक्ति, स्वभाव व वीरता के कार्यों का इस प्रकार वर्णन करते हैं:

1. बचपन से ही ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करता हूँ, उसकी शक्ति मेरे पास है।
2. मैं बहुत ही क्रोधी हूँ। यह दुर्गुण है, पर लोग गुण समझकर वर्णन करते हैं।
3. मैं क्षत्रियकुल का दुश्मन हूँ। अपनी भुजाओं के बल से पृथ्वी के राजाओं को मार डाला। उनका राज्य विप्रों को अनेकों बार दान दे दिया।
4. सहस्त्रबाहु की हजार भुजायें थीं, इसी फरसे से मैंने भुजाओं को काट दिया।
5. मेरा फरसा बहुत भयानक है, यह गर्भ के बच्चों का भी नाश कर देता है।

इस प्रकार अपने मुँह से अपनी प्रशंसा करके लक्ष्मण जी को धमकाते हुए कहते हैं कि रे राजकुमार! तू क्यों अपने माता-पिता को सोच में डाल रहा है? अनुचित कार्य करोगे तो मेरे हाथों मारे जाओगे।

परशुराम ने प्रजा का शोषण करने वाले क्षत्रियों का विनाश किया

क्षत्रियों में जब पाप वृत्ति आ गई, वे प्रजा पालन की जगह उसका शोषण करने लगे तो परशुराम ने उन राजाओं को मार डाला। उनका राज्य छीन कर ब्राह्मणों को दान दे दिया, उन्हें राजा बना दिया। इसलिये वे स्वयं को क्षत्रियकुल का द्रोही बताते हैं। परंतु द्रोही किसी कुल का नहीं होना चाहिये, क्षत्रियों की पापवृत्ति, भोगवृत्ति का विरोध करना चाहिये, न कि क्षत्रियकुल का।

लक्ष्मण कहते हैं हम आपकी धमकी से डरने वाले नहीं हैं

बिहसि लखनु बोले मृदु बानी। अहो मुनीसु महा भटमानी ॥273:1॥
पुनि पुनि मोहि देखाव कुठारू। चहत उड़ावन फूँकि पहारू ॥273:2॥
इहाँ कुम्हड़बतिया कोउ नाहीं। जे तरजनी देखि मरि जाहीं ॥273:3॥

बिहसि लखनु बोले मृदु बानी = लक्ष्मण जी हँसकर मधुर वाणी में बोले, *अहो मुनीसु महा भटमानी* = अहो! हे मुनि आप अपने को योद्धा मानकर, *पुनि पुनि मोहि देखाव कुठारू* = बार-बार मुझे फरसा दिखाकर, *चहत उड़ावन फूँकि पहारू* = फूँक से पहाड़ उड़ाना चाहते हैं, *इहाँ कुम्हड़बतिया*

कोउ नाहीं = मैं कुम्हड़ का छोटा-सा फूल नहीं हूँ, *जे तरजनी देखि मरि जाहीं* = जो अंगुली दिखा देने मात्र से सूख जाता है।

लक्ष्मण हँसकर आश्चर्य प्रकट करते हुए कहते हैं अरे! ऐसे भी मुनि होते हैं जो योद्धा भी हों। आप हैं तो विप्र पर मुझे फरसा दिखाकर इस प्रकार डरा रहे हैं जैसे फूँक मारकर पहाड़ उड़ाना चाहते हैं। कुम्हड़ का छोटा सा फूल होता है जिसे यदि अंगुली दिखा दें तो वह सूख जाता है। लक्ष्मण जी कहते हैं आप तो हमें कुम्हड़ का फूल समझकर अंगुली दिखाकर डराकर मार देना चाहते हैं। पर हम डरने वालों में से नहीं हैं।

क्षत्रिय समझकर आपसे कुछ बातें कही थीं

देखि कुठारु सरासन बाना। मैं कछु कहा सहित अभिमाना ॥273:4॥

देखि कुठारु सरासन बाना = आपके फरसा व धनुष-बाण को देखकर, *मैं कछु कहा सहित अभिमाना* = मैंने अभिमान सहित कुछ बातें कही हैं।

लक्ष्मण जी कहते हैं कि हमने देखा कि आप फरसा व धनुष लिये हैं तो क्षत्रिय मानकर हमारा अभिमान जाग गया इसलिये इस प्रकार की बातें कहीं। यदि आप केवल विप्र वेष में होते तो कुछ नहीं बोलते। क्षत्रियों का स्वभाव होता है कि जब एक क्षत्रिय दूसरे से मिलता है तो अपने आप को बलशाली बताकर दूसरे को छोटा मानता है।

विप्र मानकर धमकी सुनकर भी युद्ध नहीं कर रहे हैं

भृगुसुत समुझि जनेउ बिलोकी। जो कछु कहहु सहउँ रिस रोकी ॥273:5॥
सुर महिसुर हरिजन अरु गाई। हमरें कुल इन्ह पर न सुराई ॥273:6॥
बधें पापु अपकीरति हारें। मारतहूँ पा परिअ तुम्हारें ॥273:7॥

भृगुसुत समुझि = भृगुवंशी समझकर, *जनेउ बिलोकी* = जनेऊ देखकर, *जो कछु कहहु* = आप जो कुछ कहते हैं, *सहउँ रिस रोकी* = क्रोध को रोककर उसे मैं सह लेता हूँ, *सुर महिसुर हरिजन अरु गाई* = देवता; विप्र; भक्त और गाय, *हमरें कुल इन्ह पर न सुराई* = इन पर हमारे कुल में वीरता नहीं दिखाई

जाती है, *बधें पापु* = क्योंकि इन्हें मारने में पाप लगता है, *अपकीरति हारें* = इनसे हार जाने में अपयश है, *मारतहूँ* = इसलिये यदि आप मारें, *पा परिअ तुम्हारें* = तो भी हमें आपके पाँव ही पकड़ना चाहिये।

लक्ष्मण जी कहते हैं कि महाराज! भृगु-पुत्र समझकर, जनेऊ धारण किये हैं, इसलिए विप्र मानकर आपकी कही हुई बातों को मैं अपना गुस्सा रोककर सह रहा हूँ। हमारे कुल का धर्म है कि देवता, विप्र, भक्त और गाय की रक्षा करो। इनसे हम युद्ध नहीं करते, इन पर अपनी वीरता नहीं दिखाते। युद्ध में इन्हें मारा तो पाप लगेगा, यदि इनसे युद्ध में हम हार जायें तो अपयश होगा। इसलिये आप हमें मारेंगे तो भी हम आपके पैर ही पकड़ेंगे, युद्ध नहीं करेंगे, मार खा लेंगे।

वाणी ही वज्र है, फिर शस्त्र क्यों लिये हैं? गलती माफ करें

कोटि कुलिस सम बचनु तुम्हारा। ब्यर्थ धरहु धनु बान कुठारा ॥273:8॥

कोटि कुलिस सम बचनु तुम्हारा = आपके वचन ही करोड़ों वज्रों के समान हैं, *ब्यर्थ धरहु धनु बान कुठारा* = आप व्यर्थ ही धनुष-बाण व फरसा धारण किये हैं।

जो बिलोकि अनुचित कहेउँ छमहु महामुनि धीर ।
सुनि सरोष भृगुबंसमनि बोले गिरा गभीर ॥दोहा 273॥

जो बिलोकि अनुचित कहेउँ = इन्हें देखकर यदि मैंने अनुचित कहा हो, *छमहु महामुनि धीर* = तो हे धीर महामुनि! मुझे क्षमा कीजिये, *सुनि सरोष* = यह सुन क्रोध से, *भृगुबंसमनि* = परशुराम जी, *बोले गिरा गभीर* = गंभीर वाणी में कहते हैं।

लक्ष्मण जी व्यंग्य में कहते हैं कि आपकी वाणी ही करोड़ों वज्रों के समान है, फिर फरसा व धनुष-बाण धारण करने की क्या आवश्यकता है? अरे! आप श्राप दे दो, उसी से सब नष्ट हो जायेगा, ये सब अस्त्र-शस्त्रों का बोझा लिये क्यों घूम रहे हैं? यदि हमने आपका क्षत्रिय वेष देखकर कोई गलत बात कह दी हो तो क्षमा करें। आप तो श्रेष्ठ मुनि हैं, मुनि भाव को धारण करके हमें क्षमा करें। लक्ष्मण जी की बातें सुनकर परशुराम जी गंभीर वाणी में बोलते हैं।

ब्राह्मण शिक्षा से, क्षत्रिय भय से समाज को सही रास्ते पर लाते हैं

प्राचीनकाल की वर्ण व्यवस्था के अनुसार जो व्यक्ति तपस्या, साधना करके, अध्ययन करके ज्ञान प्राप्त करे फिर समाज को शिक्षा देकर सही रास्ते पर चलाये वह ब्राह्मण कहलाता था। जिस व्यक्ति के पास शस्त्र हो, जो दंड देने का अधिकारी हो, दुष्टों को दंड दे, जिसके भय से लोग सही रास्ते पर चलें और समाज को एक व्यवस्था में रखता हो वह क्षत्रिय कहलाता था। जहाँ ब्राह्मण का बल न चले वहाँ क्षत्रिय बल प्रयोग से समाज को सही रास्ते पर लायें। ये दोनों एक दूसरे के पूरक थे।

परशुराम ने विश्वामित्र से कहा कि यह मेरे हाथों मारा जायेगा

कौसिक सुनहु मंद यहु बालकु। कुटिल कालबस निज कुल घालकु ॥274:1॥
भानु बंस राकेस कलंकू। निपट निरंकुस अबुध असंकू ॥274: 2॥
काल कवलु होइहि छन माहीं। कहउँ पुकारि खोरि मोहि नाहीं ॥274:3॥

कौसिक सुनहु = हे विश्वामित्र सुनो, *मंद यहु बालकु कुटिल* = यह बालक कम बुद्धि का है व कुटिल है, *कालबस* = यह मरना चाहता है, *निज कुल घालकु* = अपने वंश का ही नाश करना चाहता है, *भानु बंस राकेस कलंकू* = यह सूर्यवंश के चन्द्रमा का कलंक है, *निपट निरंकुस* = पूरी तरह मनमानी करने वाला, *अबुध* = अज्ञानी, *असंकू* = निडर है, *काल कवलु होइहि छन माहीं* = अभी क्षण मात्र में ही यह काल का ग्रास बन जायेगा, *कहउँ पुकारि* = मैं बार-बार यह बोल रहा हूँ, *खोरि मोहि नाहीं* = कोई मुझे दोष मत देना।

परशुराम ने अब विश्वामित्र जी का सहारा लिया, उनकी ओर देखकर गंभीर वाणी में कहते हैं कि यह बालक हमारी सुनता नहीं है। यह अज्ञानी व कुटिल बालक काल के बस में है, मेरे हाथों मरना चाहता है। यह है तो सूर्यवंश का, पर चन्द्रमा के कलंक के समान है। यह पूरी तरह मनमानी करने पर उतर आया है, इसके ऊपर किसी का नियंत्रण नहीं है। तुम्हें इसे रोकना चाहिये, अन्यथा मैं क्षण भर में इसे मारकर काल का ग्रास बना दूँगा। बार-बार बोलकर सावधान कर रहा हूँ, बाद में दोष मत देना कि बिना चेतावनी दिये बालक को मार दिया।

यदि बचाना है तो मेरा बल-प्रताप-क्रोध इसे समझा दो

तुम्ह हटकहु जौं चहहु उबारा। कहि प्रतापु बलु रोषु हमारा ॥274:4॥

तुम्ह हटकहु जौं चहहु उबारा = तुम इसे मरने से बचाना चाहते हो, *कहि प्रतापु बलु रोषु हमारा* = तो इसे हमारा प्रताप; बल व क्रोध के बारे में समझा दो।

तुम इसे मरने से बचाना चाहते हो तो इसे रोककर रखो, यह हमारे मुँह न लगे। तुम इसे समझा दो कि हम कितने शक्तिशाली हैं, कैसा हमारा क्रोध है, और हम कितने प्रतापी हैं। अब धनुष की बात एक किनारे हो गयी, अहंकार, क्रोध प्रमुख हो गया।

लक्ष्मण कहते हैं, स्वयं की तारीफ से जी नहीं भरा तो और कर लें

लखन कहेउ मुनि सुजसु तुम्हारा। तुम्हहि अछत को बरनै पारा ॥274:5॥
अपने मुँह तुम्ह आपनि करनी। बार अनेक भाँति बहु बरनी ॥274:6॥
नहिं संतोषु त पुनि कछु कहहू। जनि रिस रोकि दुसह दुख सहहू ॥274:7॥
बीरब्रती तुम्ह धीर अछोभा। गारी देत न पावहु सोभा ॥274:8॥

लखन कहेउ =लक्ष्मण कहते हैं, *मुनि सुजसु तुम्हारा* = हे मुनि! आपका यश, *तुम्हहि अछत* = आपके रहते हुए, *को बरनै पारा* = दूसरा कौन वर्णन कर सकता है, *अपने मुँह तुम्ह* = अपने मुख से ही आपने, *आपनि करनी* = अपनी करनी का, *बार अनेक* = अनेकों बार, *भाँति बहु बरनी* = अनेकों प्रकार से वर्णन किया है, *नहिं संतोषु* = यदि संतोष न हुआ हो, *त पुनि कछु कहहू* = तो फिर कुछ कहिये, *जनि रिस रोकि* = क्रोध को रोककर, *दुसह दुख सहहू* = भारी दु:ख मत सहिये, *बीरब्रती तुम्ह धीर अछोभा* = आप वीरता का व्रत धारण करने वाले, धैर्यवान् व दु:ख रहित हैं, *गारी देत न पावहु सोभा* = तो गालियाँ देकर बात करना आपको शोभा नहीं देता है।

लक्ष्मण जी कहते हैं आपके रहते हुए, आपके यश का वर्णन दूसरा कौन कर सकता है? आशय है विश्वामित्र जी कितना भी बल-प्रताप समझा देंगे, अंत में आप यही कहेंगे कि मुझे ठीक से नहीं समझा, इसलिये फिर से आपको ही अपने बारे में बताना पड़ेगा। अनेकों बार, अनेकों प्रकार से अपने मुँह से

अपनी तारीफ कर चुके हैं, यदि अभी भी कुछ कहना शेष है तो और कह लें। क्रोध के वेग को रोककर उससे दु:खी होना ठीक नहीं है। आपने वीरता का व्रत ले रखा है, धैर्यवान् हैं, मन में क्षोभ नहीं है, इन सब गुणों से भरपूर व्यक्ति यदि अपशब्द कहते हुए बातें करे तो उसे शोभा नहीं देता है।

'कायर' व 'तुम' का संबोधन कर परशुराम के क्रोध को बढ़ाते हैं

सूर समर करनी करहिं कहि न जनावहिं आपु ।
बिद्यमान रन पाइ रिपु कायर कथहिं प्रतापु ॥दोहा 274॥

सूर समर करनी करहिं = वीर लोग युद्ध में वीरता करके दिखाते हैं, *कहि न जनावहिं आपु* = कहकर वीरता नहीं समझाते हैं, *बिद्यमान रन पाइ रिपु* = शत्रु को युद्ध में सामने देखकर, *कायर कथहिं प्रतापु* = कायर ही कहकर अपना प्रताप बताते हैं।

तुम्ह तौ कालु हाँक जनु लावा। बार बार मोहि लागि बोलावा ॥275:1॥

तुम्ह तौ कालु = तुम तो काल को, *हाँक जनु लावा* = मानों हाँककर ले आ रहे हो, *बार बार मोहि लागि बोलावा* = बार-बार मेरे लिये बुला रहे हो।

वीर लोग युद्ध में वीरता करके बताते हैं, कहकर नहीं। मुँह से अपनी वीरता का वर्णन करने से कोई वीर नहीं हो जाता है। युद्ध में शत्रु को सामने देखकर, स्वयं की महिमा बता-बताकर कायर लोग युद्ध से बचने का प्रयास करते हैं। ऐसा लगता है कि तुम तो काल को हाँककर मेरे लिये बुला रहे हो। शब्द योजना को देखें, पहले कायर कहा, अब अनादर से तुम कहा, ये सब उनके गुस्से को बढ़ाने के लिये कहते हैं। जैसे चरवाहा पशु को हाँककर यानि घेर-घारकर चारे के पास लाता है, जिससे पशु चारा खा ले, उसी तरह लक्ष्मण कहते हैं कि मानो हम चारा हों, काल एक पशु हो, उसे तुम बार-बार मेरे पास बुलाकर ला रहे हो, जिससे वह हमें खा ले, पर हमसे काल डरता है, वह बार-बार भाग जाता है।

परशुराम का ध्यान अपनी ओर खींचकर राम को बचाने का प्रयास

भरी सभा में यदि परशुराम राम को कुछ कहते तो उनका अपमान होता, यह बात लक्ष्मण से सहन नहीं होती। राम को बचाये रखने के लिये लक्ष्मण सोचते हैं कि

हमारा जितना अपमान करना हो कर लो, मारने-काटने की बातें भी सब सह लेते हैं। कायर व तुम शब्दों का प्रयोग करके परशुराम का क्रोध इतना बढ़ा देते हैं कि उनका ध्यान पूरी तरह राम से हटकर लक्ष्मण के प्रति ही केन्द्रित रह जाये।

क्रोध को नियंत्रित करने का तरीका लक्ष्मण जी से सीखें

जैसे-जैसे तकरार होती है लक्ष्मण जी के मन में क्रोध सा आता है, परंतु वे इस पर नियंत्रण रखे हैं, बीच-बीच में मुस्कुराते भी जाते हैं। दूसरी ओर परशुराम से क्रोध दबाये नहीं दबता है, उनकी पीड़ा बढ़ती जाती है। इस प्रसंग में क्रोध करने से नुकसान, क्रोध पर नियंत्रण रखने के तरीके, क्रोधी से कैसे निपटें, इन सब बातों को भी समझते जायें।

फरसा लक्ष्मण की तरफ तानकर कहा कि अब वध कर देंगे

सुनत लखन के बचन कठोरा। परसु सुधारि धरेउ कर घोरा ॥275:2॥
अब जनि देइ दोसु मोहि लोगू। कटुबादी बालकु बधजोगू ॥275:3॥
बाल बिलोकि बहुत मैं बाँचा। अब यहु मरनिहार भा साँचा ॥275:4॥

सुनत लखन के बचन कठोरा = लक्ष्मण जी के कठोर वचन सुनकर, *परसु सुधारि* = फरसे को ठीक करके, *धरेउ कर घोरा* = भयानक फरसे को हाथ में लेकर कहते हैं, *अब जनि देइ दोसु मोहि लोगू* = अब कोई भी मुझे दोष न देना, *कटुबादी बालकु बधजोगू* = कटु वचन बोलने वाला यह बालक मरने योग्य ही है, *बाल बिलोकि बहुत मैं बाँचा* = बालक देखकर इसे बहुत बचाया, *अब यहु मरनिहार भा साँचा* = अब यह सचमुच मरने ही आ गया है।

लक्ष्मण जी के अपमानजनक कठोर वचनों को सुनकर परशुराम ने अपना फरसा उठाया, उसकी धार देखी, चारों तरफ घुमाया, लक्ष्मण की तरफ तान कर दिखाया। फिर कहते हैं अब मुझे कोई दोष न दे, वैसे तो बालक को मारना नहीं चाहिये, पर जब वह इस प्रकार से कटुवादी हो जाये तो वह मारने योग्य हो जाता है। परशुराम ने पहले विश्वामित्र जी से कहा था, पर जब वे चुप रहे तो अब सभा में बैठे सभी लोगों से कहते हैं कि तुम लोग इस बालक को रोकना चाहते हो तो रोक लो अन्यथा मैं इसे दंड अवश्य दूँगा। ध्यान दें कि परशुराम जान से मारने की बात करते हैं, पर लक्ष्मण जी मारने की बात

न कहकर उनकी वीरता का उपहास उड़ाते हैं। क्यों? सम्मानित व्यक्ति का अपमान भी वध के बराबर ही है।

विश्वामित्र जी ने कहा बालक को क्षमा करें

कौसिक कहा छमिअ अपराधू। बाल दोष गुन गनहिं न साधू ॥275:5॥

कौसिक कहा = विश्वामित्र जी कहते हैं, *छमिअ अपराधू* = अपराध क्षमा करें, *बाल दोष गुन* = बालक के गुण व दोष, *गनहिं न साधू* = साधु लोग ध्यान नहीं देते हैं।

विश्वामित्र जी ने परशुराम को साधु संबोधित करके प्रशंसा की, लक्ष्मण को बालक कहकर बचाने की कोशिश की। कहते हैं कि साधु लोग बालक के गुणों व दोषों पर ध्यान नहीं देते हैं, इसे बालक समझकर इसके अपराध को क्षमा कर दें। लक्ष्मण जी से विश्वामित्र ने यह नहीं कहा कि तुम गलत बोल रहे हो।

परशुराम कहते हैं, सिर्फ तुम्हारे कारण ही अभी तक इसे मारा नहीं है

खर कुठार मैं अकरुन कोही। आगें अपराधी गुरुद्रोही ॥275:6॥
उतर देत छोड़उँ बिनु मारें। केवल कौसिक सील तुम्हारें ॥275:7॥
न त एहि काटि कुठार कठोरें। गुरहि उरिन होतेउँ श्रम थोरें ॥275:8॥

खर कुठार = तेज धार का फरसा, *मैं अकरुन कोही* = मैं करुणारहित व क्रोधी स्वभाव का, *आगें अपराधी गुरुद्रोही* = मेरे सामने गुरु द्रोह का अपराधी खड़ा है, *उतर देत* = वह मुझे उत्तर भी दे रहा है, *छोड़उँ बिनु मारें* = उसे मैं बिना मारे छोड़ रहा हूँ, *केवल कौसिक सील तुम्हारें* = हे विश्वामित्र केवल तुम्हारे शीलवान् होने के कारण, *न त एहि काटि कुठार कठोरें* = नहीं तो इसे इस कठोर फरसे से काटकर, *गुरहि उरिन होतेउँ श्रम थोरें* = थोड़े ही परिश्रम से गुरु के कर्ज से मुक्त हो जाता।

परशुराम जी कहते हैं, मेरे पास इतना धारदार फरसा है, मैं दयारहित व गुस्सैल स्वभाव का व्यक्ति हूँ, गुरुद्रोह का अपराधी व्यक्ति मेरे सामने खड़ा है और वह मुझे उत्तर भी दे रहा है, फिर भी हम उसे मार नहीं रहे हैं, आखिर

क्यों? विश्वामित्र केवल तुम्हारे शील को देखकर, अन्यथा इसे हम अपने इस कठोर फरसे से काटकर थोड़े ही परिश्रम से गुरु के कर्ज से मुक्त हो जाते। तुम्हारे जैसे शीलवान् के संरक्षण में यह बालक है इसलिये इसे हम बिना मारे छोड़ रहे हैं।

राम की जगह अपने को अपराधी बनवाने में लक्ष्मण सफल

परशुराम के गुरु शंकर जी हैं, शिव का धनुष टूटा है, इसलिये गुरु का अपमान हुआ है। धनुष तोड़ा राम ने, गुरुद्रोही राम हुए, परंतु परशुराम लक्ष्मण को गुरुद्रोह का अपराधी बताने लगे। मतलब इतने विवाद के बाद राम का दोष लक्ष्मण पर आ गया, लक्ष्मण यही चाहते थे।

परशुराम की नासमझी पर विश्वामित्र जी मन में हँसे

गाधिसूनु कह हृदयँ हँसि मुनिहि हरिअरइ सूझ ।
अयमय खाँड़ न ऊखमय अजहुँ न बूझ अबूझ ।।दोहा 275।।

गाधिसूनु कह हृदयँ हँसि = विश्वामित्र जी मन में हँसकर कहते हैं, *मुनिहि हरिअरइ सूझ* = मुनि को हरियाली ही दिख रही है, *अयमय खाँड़* = यह तलवार लोहे की है, *न ऊखमय* = गन्ने की नहीं, *अजहुँ न बूझ अबूझ* = यह बात अभी भी समझ में नहीं आ रही है।

विश्वामित्र जी मन में हँसते हैं, उन्हें दो कहावतें याद आती हैं, जिसका सुंदर प्रस्तुतीकरण तुलसीदास जी करते हैं। सावन में व्यक्ति अंधा हो जाये, उसने आखिरी बार हरियाली देखी थी, इसलिये सब जगह हरा ही हरा दिखता है। इसी प्रकार परशुराम ने क्षत्रियों पर विजय पायी है, इन्हें सर्वत्र विजय ही विजय दिखती है, ये राम-लक्ष्मण को भी साधारण क्षत्रिय ही समझने की भूल कर रहे हैं। खाँड़ के दो अर्थ हैं, एक लोहे की तलवार, दूसरा ऊख यानि गन्ने से बनी खाँड़ जो खाने के काम आती है। परशुराम ने अभी तक जितने युद्ध किये उनमें क्षत्रियों को गन्ने की बनी खाँड़ समझकर खा लिया, यानि हरा दिया। परंतु अब लक्ष्मण जी के सामने हैं जो लोहे की बनी खाँड़ हैं, इन्हें चबा नहीं सकते, हरा नहीं सकते। विश्वामित्र जी को लगा अभी भी परशुराम को राम-लक्ष्मण के बारे में कुछ समझ ही नहीं आ रहा है।

माता-पिता के ऋण से मुक्त हो, गुरु का ऋण मुझ पर लादते हो?

कहेउ लखन मुनि सीलु तुम्हारा। को नहिं जान बिदित संसारा ॥276:1॥
माता पितहि उरिन भए नीकें। गुर रिनु रहा सोचु बड़ जी कें ॥276:2॥
सो जनु हमरेहि माथे काढ़ा। दिन चलि गए ब्याज बड़ बाढ़ा ॥276:3॥
अब आनिअ ब्यवहरिआ बोली। तुरत देउँ मैं थैली खोली ॥276:4॥

कहेउ लखन = लक्ष्मण जी कहते हैं, *मुनि सीलु तुम्हारा* = हे मुनि! आपके शील को, *को नहिं जान* = कौन नहीं जानता है, *बिदित संसारा* = वह तो सारे संसार में प्रसिद्ध है, *माता पितहि उरिन भए नीकें* = माता-पिता ऋण से आप ठीक से मुक्त हो गये हैं, *गुर रिनु रहा* = अब गुरु का ऋण बचा है, *सोचु बड़ जी कें* = जिसकी आपके मन में बहुत चिंता है, *सो जनु हमरेहि माथे काढ़ा* = वह मानो हमारे ऊपर चढ़ा था, *दिन चलि गए* = बहुत दिन व्यतीत हो गये, *ब्याज बड़ बाढ़ा* = इससे ब्याज भी बहुत बढ़ गया है, *अब आनिअ ब्यवहरिआ बोली* = अब किसी हिसाब करने वाले को बुलाओ, *तुरत देउँ मैं थैली खोली* = मैं तुरंत थैली खोलकर दे दूँगा।

लक्ष्मण जी कहते हैं कि आप कितने शीलवान् हो यह तो सारे संसार में प्रसिद्ध है, आशय है इतना गुस्सा, इतने सारे राजाओं को मारा फिर भी अपने आपको शीलवान् समझते हो। माता-पिता के ऋण से तो तुम मुक्त हो चुके हो, गुरु का ही ऋण खटक रहा है, जिसे हमसे वसूल करना चाहते हो। ऋण पुराना हो गया है, इस पर ब्याज भी चढ़ गया है, इसलिये किसी हिसाब करने वाले को बुला लो, मैं अभी चुकाये देता हूँ।

कड़वे वचन सुन फरसा ताना, सब लोग डरकर चिल्लाने लगे

सुनि कटु बचन कुठार सुधारा। हाय हाय सब सभा पुकारा ॥276:5॥

सुनि कटु बचन = कड़वे वचन सुनकर, *कुठार सुधारा* = फरसे को आक्रमण की मुद्रा में पकड़ा, *हाय हाय सब सभा पुकारा* = सारी सभा हाय-हाय! करने लगी।

लक्ष्मण के इन वचनों पर परशुराम ने बिना बोले सीधा फरसा को ऐसा संभाला, मानो बस आक्रमण करने वाले हैं। सारी सभा हाय-हाय करने लगी, कहने लगे कि परशुराम को रोको, अब क्या होगा? लक्ष्मण डरे नहीं पर लोग डर गये।

लक्ष्मण बोले, विप्र समझ छोड़ दिया, असली योद्धा से सामना नहीं

भृगुबर परसु देखावहु मोही। बिप्र बिचारि बचउँ नृपद्रोही ॥276:6॥
मिले न कबहुँ सुभट रन गाढ़े। द्विज देवता घरहि के बाढ़े ॥276:7॥

भृगुबर परसु देखावहु मोही = हे भृगुश्रेष्ठ आप मुझे फरसा दिखा रहे हैं, *बिप्र बिचारि* = विप्र समझकर, *बचउँ नृपद्रोही* = हे राजाओं के द्रोही हम तुम्हें बचा रहे हैं, *मिले न कबहुँ सुभट रन गाढ़े* = अभी तुम्हें युद्ध में बलवान् योद्धा नहीं मिला, *द्विज देवता घरहि के बाढ़े* = हे द्विज देव! आप घर में ही बड़े हैं।

लक्ष्मण जी नृपवंश में हैं, क्षत्रिय हैं, इसलिये कहते हैं कि तुमको विप्र समझकर हम बिना युद्ध किये बचाये दे रहे हैं, अन्यथा इस प्रकार बार-बार फरसा दिखाने और अनुचित बातें कहने पर हम युद्ध करके फैसला कर देते। अभी तक तुम्हें असली वीर मिला नहीं, घर में ही आदर-सत्कार होता रहा, घर के ही द्विज देव हो। मैदान में निकलकर देखा नहीं वीर कैसे होते हैं।

राम ने इशारे से लक्ष्मण को रोक दिया

अनुचित कहि सब लोग पुकारे। रघुपति सयनहिं लखनु नेवारे ॥276:8॥

अनुचित कहि सब लोग पुकारे = सब लोग अनुचित है कहकर बोलने लगे, *रघुपति सयनहिं* = राम ने इशारे से, *लखनु नेवारे* = लक्ष्मण को रोक दिया।

यहाँ पर परशुराम के फरसे व लक्ष्मण के कटु वचनों में टक्कर है। दोनों एक दूसरे को परास्त करने में लगे हैं। समाज के जो लोग अभी परशुराम को हाय-हाय कह रहे थे, अब लक्ष्मण को कहते हैं कि अनुचित है, अनुचित है। बात यहाँ तक पहुँच गयी कि राम ने इशारे से लक्ष्मण को रोका कि बस अब इससे ज्यादा आगे मत बढ़ो। राम ने नेत्रों से इशारा किया।

बढ़ती क्रोध की ज्वाला में राम ने शीतल वचनों का जल डाला

लखन उतर आहुति सरिस भृगुबर कोपु कृसानु ।
बढ़त देखि जल सम बचन बोले रघुकुलभानु ॥दोहा 276॥

लखन उतर = लक्ष्मण जी के उत्तर, *आहुति सरिस* = आहुति के समान हैं, *भृगुबर कोपु कृसानु* = परशुराम के क्रोध की अग्नि में, *बढ़त देखि* = अग्नि को बढ़ता देखकर, *जल सम बचन* = जल के समान वचन, *बोले रघुकुलभानु* = रघुकुल के सूर्य प्रभु राम बोलते हैं।

जैसे जलती अग्नि में थोड़ा-थोड़ा घी डालते जायें तो उसकी ज्वाला तेज होती जाती है, वैसे ही परशुराम के अंदर जो क्रोध की अग्नि जल रही थी, लक्ष्मण जी थोड़ा-थोड़ा कटु वचन बोलकर उसकी ज्वाला को तेज करते जा रहे थे। राम क्रोध की अग्नि को शांत करने के लिये जल सींचने जैसे शीतल वचन बोलते हैं।

बच्चे को क्षमा करें, नासमझ है, आपका प्रभाव नहीं जानता

नाथ करहु बालक पर छोहू। सूध दूधमुख करिअ न कोहू ॥277:1॥
जौं पै प्रभु प्रभाउ कछु जाना। तौ कि बराबरि करत अयाना ॥277:2॥

नाथ करहु बालक पर छोहू = हे नाथ! बालक पर कृपा कीजिये, *सूध दूधमुख* = यह सीधा व बहुत ही बच्चा है, *करिअ न कोहू* = इस पर गुस्सा मत करिये, *जौं पै प्रभु प्रभाउ* = हे प्रभु! यदि यह आपका प्रभाव, *कछु जाना* = थोड़ा भी जानता, *तौ कि बराबरि करत अयाना* = तो यह नासमझ आपसे इस प्रकार की बराबरी न करता।

जौं लरिका कछु अचगरि करहीं। गुर पितु मातु मोद मन भरहीं ॥277:3॥
करिअ कृपा सिसु सेवक जानी। तुम्ह सम सील धीर मुनि ग्यानी ॥277:4॥

जौं लरिका = यदि बालक, *कछु अचगरि करहीं* = कुछ अनुचित करता है , *गुर पितु मातु* = तो उसके गुरु माता व पिता, *मोद मन भरहीं* = मन में प्रसन्न होते हैं, *करिअ कृपा* = इस पर कृपा करिये, *सिसु सेवक जानी* = छोटा बालक व अपना सेवक समझकर, *तुम्ह सम सील धीर मुनि ग्यानी* = आप तो शील निधान हो, बहुत धैर्यवान् हो, मुनि व ज्ञानी हो।

राम बचन सुनि कछुक जुड़ाने। कहि कछु लखनु बहुरि मुसुकाने ॥277:5॥

राम बचन सुनि कछुक जुड़ाने = राम जी की बातें सुनकर कुछ शांत हुए, *कहि कछु लखनु बहुरि मुसुकाने* = इतने में लक्ष्मण जी कुछ कहकर फिर मुस्कुरा दिये।

राम कहते हैं कि इस बालक को क्षमा करें, यह बहुत सीधा है, दुधमुँहाँ है। यह आपकी महिमा व शक्ति को जानता तो इस प्रकार से बराबरी न करता। यह नासमझ है। यदि बच्चा कुछ अनुचित बात कहता है तो गुरु, माता व पिता उस पर नाराज नहीं होते, उसे अच्छा ही मानकर आनंदित होते हैं। यदि इसने कुछ अनुचित कह दिया है तो आप बुरा न मानें, नाराज न हों, इसे शिशु समझकर कृपा करें।

क्रोधी से उलझना न हो तो उसकी प्रशंसा करके शांत कर दो

परशुराम की प्रशंसा करते हुए राम ने कहा कि आप तो शीलनिधान हो, बहुत धैर्यवान् हो, मुनि हो, ज्ञानी हो। प्रशंसा का असर हुआ, परशुराम के क्रोध की ज्वाला कम हुई। क्रोध की उत्पत्ति अहंकार से होती है, प्रशंसा से अहंकार को संतुष्ट कर दो, क्रोधी शांत हो जायेगा। यदि आपको क्रोधी से उलझना न हो तो यह उपाय करके देख सकते हैं।

लक्ष्मण मुस्कुराये, परशुराम फिर क्रोधित हो कहते हैं यह पापी है

हँसत देखि नख सिख रिस ब्यापी। राम तोर भ्राता बड़ पापी ॥277:6॥
गौर सरीर स्याम मन माहीं। कालकूटमुख पयमुख नाहीं ॥277:7॥
सहज टेढ़ अनुहरइ न तोही। नीचु मीचु सम देख न मोही ॥277:8॥

हँसत देखि = लक्ष्मण को हँसता देखकर, *नख सिख रिस ब्यापी* = पैर से सिर तक क्रोध छा गया, *राम तोर भ्राता बड़ पापी* = राम, तुम्हारा भाई बहुत पापी है, *गौर सरीर* = शरीर तो गोरा है, *स्याम मन माहीं* = पर मन से काला है, *कालकूटमुख* = इसके मुख पर जहर है, *पयमुख नाहीं* = यह दुध-मुँहाँ नहीं है, *सहज टेढ़* = यह स्वभाव से ही टेढ़ा है, *अनुहरइ न तोही* = तुम्हारे जैसा सीधा नहीं है, *नीचु मीचु सम देख न मोही* = यह नीच मुझे काल के समान नहीं देखता।

लक्ष्मण ने धीरे से कुछ कहा, लोग सुन नहीं पाये, शायद तुलसीदास जी भी नहीं सुन पाये, सिर्फ लक्ष्मण को मुस्कुराते हुए देखा। परशुराम ने देखा मेरी प्रशंसा सुनकर यह बालक व्यंग्य से हँस रहा है, फिर से उनके पूरे शरीर में क्रोध की ज्वाला धधकने लगी। राम की ओर देखकर बोलने लगे, तुम्हारा भाई बहुत पापी है, ऊपर से तो गोरा दिखाई देता है पर मन में बहुत काला है। तुम

इसे 'दूधमुख' कहते हो, पर इसके मुँह में तो विष भरा है। यह तुम्हारे जैसा सीधा नहीं है, स्वभाव से ही टेढ़ा है। इसे इतना भी नहीं पता कि इसके सामने काल के समान मैं खड़ा हूँ।

लक्ष्मण कहते हैं, हे मुनि! क्रोध ही पाप की जड़ है

लखन कहेउ हँसि सुनहु मुनि क्रोधु पाप कर मूल ।
जेहि बस जन अनुचित करहिं चरहिं बिस्व प्रतिकूल ।।277।।

लखन कहेउ हँसि = लक्ष्मण जी मुस्कुराकर कहते हैं, *सुनहु मुनि* = हे मुनि! सुनिये, *क्रोधु पाप कर मूल* = क्रोध पाप की जड़ है, *जेहि बस जन अनुचित करहिं* = जिसके वश में होकर लोग अनुचित कार्य करते हैं, *चरहिं बिस्व प्रतिकूल* = विश्व के प्रतिकूल आचरण करते हैं।

परशुराम ने कहा तुम्हारा भाई पापी है, इसके प्रत्युत्तर में लक्ष्मण कहते हैं कि पापी वह है जो क्रोध करता है। तुम्हारा क्रोध ही तुमसे पाप करा रहा है। इसके वश में आकर लोग अनुचित कार्य करते हैं, विश्व के प्रतिकूल आचरण करते हैं। इस प्रसंग का पाठ करते समय प्रभु से प्रार्थना करें कि हमें क्रोध से मुक्ति दिलाये ताकि पापों से छुटकारा मिले। क्रोध के वश में परशुराम ये गल्तियाँ करते हैं:

1. क्षत्रियों को पृथ्वी पर न रहने देने का संकल्प लिया, जो प्रकृति के नियम के विरुद्ध है। पापकर्म करने वाले क्षत्रियों को सजा हो, पर पूरा समाज दोषी नहीं।
2. परशुराम के गुरु शिव हैं, शिव के इष्ट राम हैं, गुरु के इष्ट का अपमान करना पाप कर्म है।
3. मिथ्या वचन, कटु वचन, माता-पिता संतानहीन हो जायेंगे, मैं काल हूँ, सिर काट दूँगा, इस प्रकार की बातें करना गलत है।

क्रोध के दोषों, अपने को बचाने व निपटने का सुंदर चित्रण

परशुराम जी का चरित्र क्रोध के दोषों का सटीक वर्णन है। इससे बचे रहने की प्रभु राम से प्रार्थना करें। यदि क्रोधी से उलझना न हो तो राम जैसे विनम्र बनकर उसकी प्रशंसा करके उसे शांत कर दें। यदि क्रोधी को बिना युद्ध किये परास्त करना हो तो लक्ष्मण जैसे कटु वचन, उपहास, व्यंग्य करके उसके क्रोध को इतना प्रदीप्त कर दें कि वह स्वयं उसकी अग्नि में भस्म हो जाये।

ध्यान रखें लक्ष्मण ने क्रोध पर नियंत्रण रखा, वे कठोर वचन बोलते हैं, उपहास व अपमान करते हैं पर क्रोध नहीं करते हैं।

क्रोध त्यागकर सेवक पर दया करें, क्रोध से धनुष जुड़ेगा नहीं

मैं तुम्हार अनुचर मुनिराया। परिहरि कोपु करिअ अब दाया ॥278:1॥
टूट चाप नहिं जुरिहि रिसाने। बैठिअ होइहिं पाय पिराने ॥278:2॥
जौं अति प्रिय तौ करिअ उपाई। जोरिअ कोउ बड़ गुनी बोलाई ॥278:3॥

मैं तुम्हार अनुचर मुनिराया = हे मुनिराज हम तो आपके सेवक हैं, *परिहरि कोपु करिअ अब दाया* = क्रोध को त्याग कर अब दया कीजिये, *टूट चाप* = टूटा हुआ धनुष, *नहिं जुरिहि रिसाने* = क्रोध करने से जुड़ नहीं जायेगा, *बैठिअ* = आप बैठ जाइये, *होइहिं पाय पिराने* = खड़े-खड़े पैर दुखने लगे होंगे, *जौं अति प्रिय* = यदि धनुष अत्यन्त ही प्रिय हो, *तौ करिअ उपाई* = तो उपाय करें, *जोरिअ कोउ बड़ गुनी बोलाई* = किसी अच्छे कारीगर को बुलवाकर इसे जुड़वा दें।

लक्ष्मण कहते हैं हे मुनिराज! हम तो आपके सेवक हैं, क्रोध को छोड़िये, अब हमारे ऊपर दया करिये, बात समाप्त हो। आशय है यदि आप मुनि हैं तो हम आपके सेवक हैं। शिक्षा देते हुए कहते हैं कि धनुष टूटने के कारण क्रोध कर रहे हो, परंतु क्रोध करने से तो यह जुड़ेगा नहीं, इसलिये इसे त्यागिये। फिर उपहास करते हुए कहते हैं कि आप बहुत देर से खड़े हैं, पैर दुखने लगे होंगे, अब बैठ जाइये, आराम करिये। यदि धनुष बहुत ही प्रिय है, इसे बनाये रखना है, तो बुद्धि से काम लें, किसी अच्छे कारीगर को बुलवाकर इसे जुड़वा दिया जाये।

जनक जी डरे, कहते हैं अब चुप रहिये, जनकपुरवासी काँपने लगे

बोलत लखनहिं जनकु डेराहीं। मष्ट करहु अनुचित भल नाहीं ॥278:4॥
थर थर काँपहिं पुर नर नारी। छोट कुमार खोट बड़ भारी ॥278:5॥

बोलत लखनहिं = लक्ष्मण जी के बोलने से, *जनकु डेराहीं* = जनक जी डर जाते हैं, *मष्ट करहु* = कहते हैं बस चुप रहिये, *अनुचित भल नाहीं* = अनुचित बोलना ठीक नहीं, *थर थर काँपहिं पुर नर नारी* = जनकपुर के स्त्री-पुरुष काँपने लगे, *छोट कुमार खोट बड़ भारी* = कहते हैं छोटा राजकुमार बहुत खोटा है।

परशुराम को शिक्षा देने के साथ उपहास करते हुए जब लक्ष्मण जी बोलते ही चले जाते हैं तब जनक जी डर गये। कहते हैं अब चुप हो जाओ, अनुचित बोल रहे हो, जो ठीक नहीं है। नगरवासी भी बातें सुनकर व क्रोध देखकर डरकर थर-थर काँपने लगे। कहते हैं कि छोटा राजकुमार तो बहुत खोटा है। रामचरितमानस के इसी प्रसंग में लक्ष्मण बोलते हैं। उनके भावों को व्यक्त किया गया है।

राम, तुम्हारा भाई समझकर बचाता हूँ, यह स्वर्ण कलश में विष है

भृगुपति सुनि सुनि निरभय बानी। रिस तन जरइ होइ बल हानी ॥278:6॥
बोले रामहि देइ निहोरा। बचउँ बिचारि बंधु लघु तोरा ॥278:7॥
मनु मलीन तनु सुंदर कैसें। बिष रस भरा कनक घटु जैसें ॥278:8॥

भृगुपति = परशुराम जी का, *सुनि सुनि निरभय बानी* = लक्ष्मण जी के निर्भय वचन सुन-सुन कर, *रिस तन जरइ* = क्रोध से शरीर जल रहा है, *होइ बल हानी* = बल की हानि हो रही है, *बोले रामहि देइ निहोरा* = राम पर एहसान जताकर कहते हैं, *बचउँ* = इसे बचा रहा हूँ, *बिचारि बंधु लघु तोरा* = तुम्हारा छोटा भाई है यह सोचकर, *मनु मलीन* = इसका मन मैला है, *तनु सुंदर* = शरीर सुंदर है, *कैसें* = किस प्रकार?, *बिष रस भरा कनक घटु जैसें* = जैसे स्वर्ण के घड़े में विष भरा हो।

लक्ष्मण की निर्भय वाणी सुन-सुनकर परशुराम जी का शरीर जलता है, बल की हानि होती है। क्रोध व्यक्ति को दुर्बल बनाता है, शारीरिक व मानसिक शक्ति क्षीण करता है, बुद्धि को काम नहीं करने देता। परशुराम राम के प्रति एहसान जताते हुए कहते हैं, तुमने विनती की थी, तुम्हारा छोटा भाई है यह सोचकर इसे मार नहीं रहा हूँ, छोड़ देता हूँ। लक्ष्मण के दोष बताते हैं कि यह ऊपर से गोरा है पर मन का खराब है, मन काला है, जैसे स्वर्ण के कलश में विष भरा हो।

लक्ष्मण हँसे, राम ने नजरें तिरछी कीं, चुप हो गुरु के पास गये

सुनि लछिमन बिहसे बहुरि नयन तरेरे राम ।
गुर समीप गवने सकुचि परिहरि बानी बाम ॥दोहा 278॥

सुनि लछिमन बिहसे बहुरि = यह सुनकर लक्ष्मण जी फिर हँसे, *नयन तरेरे राम* = राम ने नजरें टेढ़ी कीं, *गुर समीप गवने सकुचि* = लक्ष्मण जी सकुचाकर गुरु के पास चले गये, *परिहरि बानी बाम* = टेढ़ा वचन बोलना बंद कर दिया।

लक्ष्मण हँसे, कुछ कहने ही वाले थे, इतने में राम ने उनकी तरफ तिरछी नजर से देखा, सकुचा गये। तुरंत टेढ़ा वचन बोलना बंद कर दिया। चुपचाप राम के पास से हटकर गुरु के पास जाकर बैठ गये।

राम ने विनम्रता से कहा, आप ज्ञानी हैं, बालक की बात पर ध्यान न दें

अति बिनीत मृदु सीतल बानी। बोले रामु जोरि जुग पानी ॥279:1॥
सुनहु नाथ तुम्ह सहज सुजाना। बालक बचनु करिअ नहिं काना ॥279:2॥
बररै बालकु एकु सुभाऊ। इन्हहि न संत बिदूषहिं काऊ ॥279:3॥

अति बिनीत = अत्यंत विनम्रता से, *मृदु सीतल बानी* = कोमल व शीतल वचन, *बोले रामु* = राम जी बोलते हैं, *जोरि जुग पानी* = दोनों हाथों को जोड़कर, *सुनहु नाथ तुम्ह सहज सुजाना* = हे नाथ! सुनिये आप तो सहज ही ज्ञानवान् हैं, *बालक बचनु करिअ नहिं काना* = बालक के वचनों पर ध्यान मत दीजिये, *बररै* = ततैया, *बालकु* = व बालक का, *एकु सुभाऊ* = एक जैसा स्वभाव होता है, *इन्हहि न संत बिदूषहिं काऊ* = संत लोग इन्हें दोष नहीं देते हैं।

दोनों हाथों को अत्यंत विम्रता से जोड़कर कोमल व शीतल वाणी से राम कहते हैं–हे नाथ! आप तो सहज ही ज्ञानवान् हैं, बालक की बातों की तरफ ध्यान न दें। जैसे ततैया डंक मारती है, गिन्न करती है पर लोग उससे भिड़ते नहीं हैं, अपने को बचाये रखते है। वैसे ही बालक से मुँह नहीं लगना चाहिये, उसकी बातों की तरफ ध्यान नहीं देना चाहिये। संत लोग बालकों को दोष नहीं देते हैं। प्रभु ने संकेत दे दिया कि आपने विप्रवंश में अवतीर्ण होकर, निरंकुश व अहंकारी क्षत्रिय राजाओं को अपने बल से पराजित कर उन्हें सही मार्ग में लाकर समाज के लिये अच्छा कार्य किया। पर लक्ष्मण कहते हैं कि यह सब आपने क्रोध के वशीभूत होकर किया, तो बालक की नासमझी की तरफ ध्यान न दें।

अपराधी मैं हूँ, जो सजा देनी हो दें, क्रोध शांति का उपाय बतायें

तेहिं नाहीं कछु काज बिगारा। अपराधी मैं नाथ तुम्हारा ॥279:4॥
कृपा कोपु बधु बँधब गोसाईं। मो पर करिअ दास की नाईं ॥279:5॥
कहिअ बेगि जेहि बिधि रिस जाई। मुनिनायक सोइ करौं उपाई ॥279:6॥

तेहिं नाहीं कछु काज बिगारा = उसने आपका कोई कार्य नहीं बिगाड़ा है, *अपराधी मैं नाथ तुम्हारा* = हे नाथ! मैं आपका अपराधी हूँ, *कृपा कोपु* = मुझ पर कृपा करो या गुस्सा, *बधु बँधब गोसाईं* = हे गोसाईं! मुझे मारो या बाँधो, *मो पर करिअ दास की नाईं* = जो कुछ करना है अपना सेवक समझकर करिये, *कहिअ बेगि जेहि बिधि* = शीघ्र वह उपाय बताइये, *रिस जाई* = जिससे आपका गुस्सा शांत हो, *मुनिनायक सोइ करौं उपाई* = हे मुनियों के नायक मैं वही उपाय करूँगा।

आपको लक्ष्मण से वैर हो रहा है, पर उसने तो कुछ काम बिगाड़ा नहीं है, वह केवल बातें कर रहा है। धनुष टूटने को आप अपराध मानते हो, तो वह मैंने किया है, जो दण्ड देना है मुझे दें। हे गोसाईं! आप मुझ पर कृपा करो या क्रोध करो, मुझे मारो या बाँध लो। जो व्यवहार करना है यह सोचकर करो कि मैं आपका दास हूँ, सेवक हूँ। अंत में प्रभु कहते हैं कि हे मुनिनायक! जिस प्रकार से आपका क्रोध दूर हो, वह उपाय शीघ्र बताइये, मैं वही करूँ।

अभी भी वह टेढ़ी नजर से देखता है, क्रोध कैसे शांत हो?

कह मुनि राम जाइ रिस कैसें। अजहुँ अनुज तव चितव अनैसें ॥279:7॥

कह मुनि = परशुराम कहते हैं, *राम जाइ रिस कैसें* = हे राम! मेरा क्रोध जाये कैसें? *अजहुँ अनुज तव* = अब भी तुम्हारा छोटा भाई, *चितव अनैसें* = तिरछी नजर से मुझे देख रहा है।

राम जब विनम्रता से बोल रहे थे, तब परशुराम की दृष्टि लक्ष्मण की तरफ थी, जो उनकी तरफ देखकर मुस्कुरा रहे थे। परशुराम कहते हैं कि मेरा क्रोध जाये कैसे? तुम्हारा छोटा भाई अभी भी टेढ़ी नजर से मुझे देख रहा है।

गर्दन काटने से क्रोध शांत होगा, पर फरसा चलता क्यों नहीं!

एहि कें कंठ कुठारु न दीन्हा। तौ मैं काह कोपु करि कीन्हा ॥279:8॥

एहि कें कंठ कुठारु न दीन्हा = इसकी गर्दन पर फरसा नहीं चलाया, *तौ मैं काह कोपु करि कीन्हा* = तो मैंने क्रोध करके किया ही क्या?

गर्भ स्रवहिं अवनिप रवनि सुनि कुठार गति घोर ।
परसु अछत देखउँ जिअत बैरी भूपकिसोर ॥दोहा 279॥

गर्भ स्रवहिं अवनिप रवनि = राजाओं की स्त्रियों के गर्भ गिर जाते हैं, *सुनि कुठार गति घोर* = मेरे फरसे की भयंकर करनी सुनकर, *परसु अछत* = उसी फरसे के रहते हुए, *देखउँ जिअत* = मैं जीवित देख रहा हूँ, *बैरी भूपकिसोर* = इस राजा के पुत्र को जो मेरा शत्रु है।

हमारा क्रोध तो तब शांत हो जब फरसे से तुम्हारे भाई की गर्दन काट दें। जब इतना भी नहीं किया तो क्रोध करना ही बेकार है। इस फरसे की कठोर गति सुनकर राजाओं की स्त्रियाँ काँपती हैं, उनके गर्भ तक गिर जाते हैं। परंतु इस समय न जाने क्या हो गया है! वही फरसा मेरे हाथ में है, राज-पुत्र मेरा शत्रु सामने है, मैं उसे मार नहीं रहा हूँ, वह अभी तक जीवित है।

मेरे मन में दया कैसे? हाथ चलता नहीं, सीने में जलन

बहइ न हाथु दहइ रिस छाती। भा कुठारु कुंठित नृपघाती ॥280:1॥
भयउ बाम बिधि फिरेउ सुभाऊ। मोरे हृदयँ कृपा कसि काऊ ॥280:2॥
आजु दया दुखु दुसह सहावा। सुनि सौमित्रि बिहसि सिरु नावा ॥280:3॥

बहइ न हाथु = हाथ चलता नहीं, *दहइ रिस छाती* = क्रोध से छाती जली जाती है, *भा कुठारु कुंठित नृपघाती* = राजाओं का घातक यह फरसा भी चल नहीं रहा है, *भयउ बाम बिधि* = विधाता विपरीत हो गया है, *फिरेउ सुभाऊ* = मेरा स्वभाव बदल गया है, *मोरे हृदयँ कृपा कसि काऊ* = मेरे हृदय में कृपा कैसे आ गयी? *आजु दया* = आज यह दया, *दुखु दुसह सहावा* = हमें दुसह दुःख सहन करवा रही है, *सुनि सौमित्रि बिहसि सिरु नावा* = यह सुनकर लक्ष्मण ने मुस्कुराकर सिर झुकाया।

परशुराम कहते हैं मेरा हाथ इस बालक पर चल नहीं रहा है, क्रोध से छाती जल रही है। राजाओं को मारने वाला यह फरसा भी कुंठित हो गया है। लगता है विधाता हमारे विपरीत हो गया है, मेरा स्वभाव ही बदल गया है। मेरे मन में कृपा कैसे आ गयी जो इस बालक को बचाये जा रही है। आज इस दया के कारण ही हमें भारी दु:ख सहना पड़ रहा है। यह सुन लक्ष्मण मुस्कुराकर सिर झुकाते हैं।

क्रोध में व्यक्ति की बुद्धि विपरीत होकर दुःख देती है

क्रोध से व्यक्ति को सुख की प्राप्ति नहीं होती, दु:ख ही मिलता है। विधाता तो अनुकूल है, वह अनुचित कार्य करने नहीं दे रहा है, पर क्रोध के वशीभूत परशुराम को विधाता विपरीत दिखता है। क्रोध दु:ख दे रहा है पर समझ रहे हैं कि दया भारी दु:ख दे रही है। यह बात समझ कर जीवन में अपनाने की है।

लक्ष्मण का व्यंग्य-दया से शरीर में जलन तो गुस्से में क्या होगा!

बाउ कृपा मूरति अनुकूला। बोलत बचन झरत जनु फूला ॥280:4॥
जौं पै कृपाँ जरिहिं मुनि गाता। क्रोध भएँ तनु राख बिधाता ॥280:5॥

बाउ कृपा = यह कृपा की वायु, *मूरति अनुकूला* = आपके स्वरूप के अनुसार ही है, *बोलत बचन* = जब बोलते हैं, *झरत जनु फूला* = लगता है फूल झड़ रहे हैं, *जौं पै कृपाँ* = यदि कृपा करने से, *जरिहिं मुनि गाता* = हे मुनि! आपका शरीर जल रहा है, *क्रोध भएँ* = तब क्रोध करने से, *तनु राख बिधाता* = आपके शरीर की रक्षा विधाता ही कर पायेंगे।

लक्ष्मण ने जब यह सब सुना तो वे सिर झुकाकर, मुँह छिपाकर हँस रहें हैं। दूसरा कोई बोला नहीं और लक्ष्मण से रहा नहीं गया, वे परशुराम का उपहास करते हुए कहते हैं– यह कृपा की वायु तो आपके शरीर के अनुकूल है, जैसा सुंदर शरीर वैसी सुंदर कृपा, जब आप बोलते हैं तो वाणी से जैसे फूल झर रहे हों। यदि कृपा करने से शरीर जलता है, तो जब वास्तव में क्रोध करेंगे तो आपकी क्या दशा होगी? विधाता ही आपके शरीर को बचा सकता है।

अरे! जनक, इसे रोको, यहाँ से हटाओ, यह मरना चाहता है

देखु जनक हठि बालकु एहू। कीन्ह चहत जड़ जमपुर गेहू ॥280:6॥
बेगि करहु किन आँखन्हि ओटा। देखत छोट खोट नृपु ढोटा ॥280:7॥
बिहसे लखनु कहा मन माहीं। मूदें आँखि कतहुँ कोउ नाहीं ॥280:8॥

देखु जनक = हे जनक! देखो, *हठि बालकु एहू* = इस बालक को रोको, *कीन्ह चहत जड़ जमपुर गेहू* = यह मूर्ख यमपुरी जाना चाहता है, *बेगि करहु किन आँखन्हि ओटा* = इसे शीघ्र ही मेरी आँखों के सामने से हटाते क्यों नहीं, *देखत छोट खोट नृपु ढोटा* = यह राज-पुत्र देखने में छोटा है पर है दुष्ट, *बिहसे लखनु कहा मन माहीं* = लक्ष्मण हँसकर मन में कहते हैं, *मूदें आँखि कतहुँ कोउ नाहीं* = आँख बंद कर लें तो कोई दिखाई नहीं देगा।

परशुराम जनक से कहते हैं, देख जनक, यह बालक ऐसी बातें कर रहा है मानो मरना चाहता है, ज्यादा गुस्सा आया तो इसे मार देंगे। इसे रोको, मेरी आँखों के सामने से दूर करो। यह राज-पुत्र देखने में छोटा है, पर है बहुत ही दुष्ट स्वभाव का। लक्ष्मण फिर हँसे, मन में ही बोले, आँखें बंद कर लो तो कहीं कोई नहीं दिखेगा।

अब परशुराम राम पर क्रोधित– धनुष तोड़कर ज्ञान सिखाता है!

परसुरामु तब राम प्रति बोले उर अति क्रोधु ।
संभु सरासनु तोरि सठ करसि हमार प्रबोधु ॥दोहा 280॥

परसुरामु तब राम प्रति = तब परशुराम राम से, *बोले उर अति क्रोधु* = मन में अत्यंत गुस्सा भरकर बोलते हैं, *संभु सरासनु तोरि सठ* = रे शठ! शिव का धनुष तोड़कर, *करसि हमार प्रबोधु* = मुझे ही ज्ञान सिखाता है।

परशुराम मन में बहुत क्रोध भरकर अब राम से कहते हैं कि– रे शठ! तूने शिव का धनुष तोड़ दिया, अब हमें ज्ञान सिखाता है, शिक्षा देता है। प्रभु राम परशुराम का नाथ कहकर संबोधन करते हैं, पर वे राम को शठ कहते हैं, यह है क्रोध का दुष्परिणाम। यदि लक्ष्मण कुछ नहीं बोलते तो परशुराम राम से भिड़ेंगे ही, इसलिये राम से ध्यान हटाने के लिये लक्ष्मण उन्हें बातों में उलझाये रखते हैं।

राम पर आरोप–कटु वचन कहलवाकर विनती करते हो

बंधु कहइ कटु संमत तोरें। तू छल बिनय करसि कर जोरें ॥281:1॥

बंधु कहइ कटु = भाई कटु वचन बोलता है, *संमत तोरें* = तुम्हारी ही सहमति से, *तू छल बिनय करसि कर जोरें* = तू छलपूर्वक हाथ जोड़कर विनती करता है।

राम पर आरोप लगाते हैं कि तुम्हारी सहमति से ही छोटा भाई कटु वचन बोल रहा है। भाई से कटु वचन कहलवाते हो, तुम स्वयं छलपूर्वक हाथ जोड़कर विनती करते हो, क्षमा माँगते हो, प्रार्थना करते हो। परशुराम ने देखा कि जब राम मना कर देते हैं तो छोटा भाई चुप हो जाता है, इसलिये उन्हें लगा कि इसकी स्वीकृति से वह बोलता है।

राम को युद्ध के लिये ललकारते हैं, अन्यथा मारने की धमकी

करु परितोषु मोर संग्रामा। नाहिं त छाड़ कहाउब रामा ॥281:2॥
छलु तजि करहि समरु सिवद्रोही। बंधु सहित न त मारउँ तोही ॥281:3॥

करु परितोषु मोर संग्रामा = युद्ध करके मुझे संतुष्ट करो, *नाहिं त छाड़ कहाउब रामा* = नहीं तो राम कहलाना छोड़ दो, *छलु तजि* = छल त्यागकर, *करहि समरु सिवद्रोही* = रे शिवद्रोही! मेरे साथ युद्ध कर, *बंधु सहित न त मारउँ तोही* = नहीं तो भाई सहित तुम्हें मार दूँगा।

यदि तुम या तुम्हारा भाई अपने को हमसे शक्तिशाली समझते हो तो मेरे साथ युद्ध करो। यदि हम हार जाते हैं तो तुम वीर कहलाओगे, यदि तुम हारे तो राम कहलाना छोड़ दो। फिर राम को ललकारते हुए कहते हैं–रे शिवद्रोही! तू छल त्यागकर मेरे साथ युद्ध कर। इतना कहने पर भी यदि तुम युद्ध नहीं करते तो भाई सहित तुम्हें मार देंगे। परशुराम को लगता है राम वही हो सकता है जो मेरे जैसा वीर हो, युद्ध करे, यह हाथ जोड़कर विनती करने वाला राम नहीं हो सकता। इसने अपना झूठा नाम रख लिया है, इसलिये कहते हैं राम कहलाना छोड़ो।

राम सिर झुकाये, मुस्कुराकर सोचते हैं, सीधा होना भी दोष है

भृगुपति बकहिं कुठार उठाएँ। मन मुसुकाहिं रामु सिर नाएँ ॥281:4॥
गुनह लखन कर हम पर रोषू। कतहुँ सुधाइहु ते बड़ दोषू ॥281:5॥
टेढ़ जानि सब बंदइ काहू। बक्र चंद्रमहि ग्रसइ न राहू ॥281:6॥

भृगुपति बकहिं कुठार उठाएँ = परशुराम फरसा उठाये बक रहे हैं, *मन मुसुकाहिं रामु सिर नाएँ* = प्रभु राम सिर झुकाये मन में मुस्कुरा रहे हैं, *गुनह लखन कर* = मन में सोचते हैं, दोष लक्ष्मण का, *हम पर रोषू* = गुस्सा हमारे ऊपर कर रहे हैं, *कतहुँ सुधाइहु ते* = कहीं-कहीं सीधापन भी, *बड़ दोषू* = बहुत बड़ा दोष होता है, *टेढ़ जानि* = यदि टेढ़ा व्यक्ति होता है, *सब बंदइ काहू* = तो सब उसकी वंदना करते हैं, *बक्र चंद्रमहि ग्रसइ न राहू* = टेढ़ा चन्द्रमा को राहु भी ग्रसता नहीं।

तुलसीदास जी को अपने इष्ट प्रभु राम का अपमान सहन नहीं होता, इसलिये वे टिप्पणी कर देते हैं कि परशुराम फरसा उठाये बक रहे हैं। परशुराम की धमकियाँ राम सुन रहे हैं, सिर झुकाये मन में मुस्कुरा रहे हैं, मर्यादा में हैं। वे जानते हैं विप्र से युद्ध कर नहीं सकते हैं, इन पर हमें क्रोध करने का भी अधिकार नहीं है। धर्म पालन की शिक्षा राम स्वयं करके बताते हैं, अवतार लेने का यह भी कारण होता है। राम के मन में चल रहे विचारों का तुलसीदास जी काव्यात्मक चित्रण इस प्रकार करते हैं:

1. लक्ष्मण ने तर्क-वितर्क किया है, दोष उसका है पर ये क्रोध हम पर कर रहे हैं।
2. क्रोध करना दोष है पर कई बार सीधापन भी बहुत बड़ा दोष होता है।
3. टेढ़े व्यक्ति की हाथ जोड़कर सब वंदना करते हैं।
4. द्वितीया का चन्द्रमा टेढ़ा होता है, सब उसकी वंदना करते हैं। राहु भी उसे डरकर ग्रसता नहीं है। पूर्णिमा का चन्द्रमा सीधा दिखता है, राहु उसे ग्रस लेता है।

मेरा सिर फरसे के सामने झुका है, जैसे क्रोध शांत हो वही करिये

राम कहेउ रिस तजिअ मुनीसा। कर कुठारु आगें यह सीसा ॥281:7॥
जेहिं रिस जाइ करिअ सोइ स्वामी। मोहि जानिअ आपन अनुगामी ॥281:8॥

राम कहेउ = अब राम बोलते हैं, *रिस तजिअ मुनीसा* = हे श्रेष्ठमुनि! आप क्रोध त्यागिये, *कर कुठारु* = आपके हाथ में कुठार है, *आगें यह सीसा* = मेरा सिर इसके

आगे है, *जेहिं रिस जाइ करिअ सोइ स्वामी* = हे स्वामी! जिस प्रकार गुस्सा दूर हो वही करिये, *मोहि जानिअ आपन अनुगामी* = और मुझे अपना सेवक समझिये।

प्रभुहि सेवकहि समरु कस तजहु बिप्रबर रोसु ।
बेषु बिलोकें कहेसि कछु बालकहू नहिं दोसु ॥दोहा 281॥

प्रभुहि सेवकहि = स्वामी व सेवक में, *समरु कस* = युद्ध कैसा? *तजहु बिप्रबर रोसु* = हे विप्रवर गुस्सा त्यागिये, *बेषु बिलोकें* = क्षत्रिय वेष देखकर, *कहेसि कछु* = कुछ कह दिया है, *बालकहू नहिं दोसु* = वह बालक का दोष नहीं है।

अभी तक राम मन में सोच रहे थे, अब बोलते हैं कि हे मुनियों में श्रेष्ठ, आप क्रोध को छोड़ मुनि धर्म का पालन करें। मैंने अपना सिर ही फरसे के आगे झुका दिया है, यदि सिर काटने से क्रोध शांत हो तो काट दीजिये, क्षमा से शांत हो तो क्षमा करें। हम आपके सेवक हैं, आपके अनुयायी हैं, इसलिये युद्ध तो कर नहीं सकते हैं। आपका क्षत्रिय वेष देखकर ही लक्ष्मण ने कुछ कह दिया है, उस बालक का दोष नहीं है। आशय स्पष्ट है, विप्र-क्षत्रिय एक दूसरे के विरोधी नहीं बल्कि पूरक हैं। दोनों का कार्य समाज को सही दिशा देना है, क्षत्रिय-धर्म विप्र की रक्षा करना व विप्र-धर्म समाज को सन्मार्ग दिखाकर उसकी रक्षा करना है।

क्रोध करना गौरव नहीं, दोष है

परशुराम क्रोध को गौरव की बात समझ रहे हैं। राम कहते हैं यह दोष है। भृगुवंश जैसे विप्रों के श्रेष्ठ वंश में अवतरित होकर क्रोध करना तो और भी बड़ा दोष है, इसलिये इसे त्यागें। समाज में भी लोग दुर्गुण को अपना गुण समझने लगते हैं।

क्षत्रिय वेष देखकर लक्ष्मण ने कटु वचन कहे

देखि कुठार बान धनु धारी। भै लरिकहि रिस बीरु बिचारी ॥282:1॥
नामु जान पै तुम्हहि न चीन्हा। बंस सुभायँ उतरु तेहिं दीन्हा ॥282:2॥

देखि कुठार बान धनु धारी = फरसा; धनुष व बाण धारण किये आपको देखकर, *भै लरिकहि रिस* = बालक को गुस्सा आ गया, *बीरु बिचारी* = क्योंकि उसने आपको योद्धा समझ लिया, *नामु जान* = आपका नाम तो जानता

था, *पै तुम्हहि न चीन्हा* = परंतु आपको पहचान नहीं पाया, *बंस सुभायँ* = वंश की परंपरा के अनुसार, *उतरु तेहिं दीन्हा* = उसने उत्तर दिया है।

राम कहते हैं कि फरसा, धनुष व बाण साथ में देखकर लक्ष्मण ने समझा कि आप वीर क्षत्रिय हैं। उसकी बाल-बुद्धि है इसलिये क्षत्रिय वेष देखकर उसे गुस्सा आ गया। क्षत्रिय वंश में जब कोई दूसरे वीर को देखता है तो उसका अभिमान जाग जाता है। आपका नाम तो उसने सुना था, देखा नहीं था, पहचान नहीं पाया इसलिये वंश की परंपरा के अनुसार उसने आपकी बातों का उत्तर दिया है।

विप्र वेष में आते तो चरण-धूलि माथे पर रखता, उसे क्षमा करें

जौं तुम्ह औतेहु मुनि की नाईं। पद रज सिर सिसु धरत गोसाईं ॥282:3॥
छमहु चूक अनजानत केरी। चहिअ बिप्र उर कृपा घनेरी ॥282:4॥

जौं तुम्ह औतेहु मुनि की नाईं = यदि आप मुनि की तरह आते, *पद रज* = आपके चरणों की धूलि, *सिर सिसु धरत गोसाईं* = हे स्वामी यह बालक अपने सिर पर रखता, *छमहु चूक अनजानत केरी* = अनजाने में हुई भूल को क्षमा करें, *चहिअ बिप्र उर कृपा घनेरी* = विप्र के हृदय में बहुत दया होनी चाहिये।

यदि आप एक मुनि की तरह आते तो वह बालक आपके चरणों की धूलि अपने मस्तक पर लगाता। उसने अनजाने में आपको पहचानने में चूक की है। विप्र का स्वभाव तो बहुत ही दयावान् होता है, इसलिये उसकी भूल को क्षमा करें।

आपसे कैसे बराबरी कर सकते हैं? चरण व सिर जितना फर्क है

हमहि तुम्हहि सरिबरि कसि नाथा। कहहु न कहाँ चरन कहँ माथा ॥282:5॥

हमहि तुम्हहि = हमारी व आपकी, *सरिबरि कसि नाथा* = हे नाथ! बराबरी कैसे हो सकती है, *कहहु न कहाँ चरन कहँ माथा* = कहिये, कहाँ चरण व कहाँ मस्तक।

हे नाथ! आप हमसे युद्ध करने के लिये कह रहे हैं, पर युद्ध तो बराबरी वालों से होता है। हमारी आपकी बराबरी कैसे हो सकती है? जहाँ आपके चरण वहाँ हमारा सिर, इतना फर्क है।

नाम, गुण, पद सबमें हम छोटे हैं, अपराध को क्षमा करें

राम मात्र लघु नाम हमारा। परसु सहित बड़ नाम तोहारा ॥282:6॥
देव एकु गुनु धनुष हमारें। नव गुन परम पुनीत तुम्हारें ॥282:7॥
सब प्रकार हम तुम्ह सन हारे। छमहु बिप्र अपराध हमारे ॥282:8॥

राम मात्र लघु नाम हमारा = हमारा तो छोटा सा नाम राम है, *परसु सहित बड़ नाम तोहारा* = आपका परशु सहित बड़ा नाम है, *देव एकु गुनु धनुष हमारें* = हे देव! हमारा एक ही गुण धनुष है, *नव गुन परम पुनीत तुम्हारें* = आपके पास परमपुनीत नव गुण हैं, *सब प्रकार हम तुम्ह सन हारे* = हम तो सभी प्रकार से आपसे हारे हैं, *छमहु बिप्र अपराध हमारे* = विप्र हमारे अपराध को क्षमा करें।

मेरा तो छोटा नाम राम, आपका परशु सहित बड़ा नाम है। नाम में हम छोटे हैं। हमारा धनुष ही एकमात्र गुण है, आप विप्र हैं इसलिये आपके पास नौ गुण हैं। गीता में भगवान ने विप्रों के नौ गुण बताये है–1. अंतःकरण का निग्रह, 2. इन्द्रियों का दमन, 3. धर्मपालन में कष्ट सहना, 4. बाहर भीतर से शुद्ध रहना, 5. दूसरों के अपराधों को क्षमा करना, 6. मन की सरलता, 7. वेद-शास्त्रों का अध्ययन व अध्यापन, 8. ईश्वर में श्रद्धा, 9. परमात्मा के तत्त्वों का अनुभव करना। हम तो सब प्रकार से आपसे हारे हैं। हे विप्र! हमारे अपराधों को क्षमा कीजिये।

परशुराम बोले, तू भी भाई के समान टेढ़ा है

बार बार मुनि बिप्रबर कहा राम सन राम ।
बोले भृगुपति सरुष हसि तहूँ बंधु सम बाम ॥दोहा 282॥

बार बार मुनि बिप्रबर कहा = बार-बार मुनि व विप्र कहकर, *राम सन राम* = राम परशुराम को संबोधित करते हैं, *बोले भृगुपति सरुष हसि* = परशुराम गुस्सा होकर कहते हैं, *तहूँ बंधु सम बाम* = तू भी भाई के समान टेढ़ा है।

जब राम ने कहा कि आप विप्र हो, दयालु हो, श्रेष्ठ मुनि हो तो परशुराम को लगा कि राम ने हमारी वीरता और शौर्य की प्रशंसा तो की नहीं, उल्टा हमारा उपहास कर रहे हैं। वे पुनः कुपित होकर कहते हैं कि तू भी अपने भाई के

समान ही टेढ़ी बातें करता है। 'हसि' से लगता है हँसकर बोले, पर ऊपर बिंदु नहीं है इसलिये इसका आशय है 'होकर', कुपित होकर बोले।

मुझे छोटा सा विप्र मात्र मत समझ!

निपटहिं द्विज करि जानहि मोही। मैं जस बिप्र सुनावउँ तोही ॥283:1॥

निपटहिं द्विज करि = मात्र विप्र ही, *जानहि मोही* = तू मुझे समझता है, *मैं जस बिप्र सुनावउँ तोही* = मैं किस प्रकार का विप्र हूँ तुम्हें बताता हूँ।

राम विप्र की हीन भावना को समाप्त करने के लिये यह समझाते हैं कि विप्र के गुण सर्वश्रेष्ठ गुण हैं, उसकी शक्ति सबसे बड़ी शक्ति है, उसका धर्म सबसे बड़ा धर्म है, वह अपने को छोटा न समझे। पर परशुराम उल्टा मतलब समझकर कहते हैं कि मुझे छोटा-मोटा विप्र मत समझो, मैं कैसा विप्र हूँ वह तुम्हें समझाता हूँ।

मैं समर-यज्ञ में राजाओं की बलि देने वाला विप्र हूँ

चाप स्रुवा सर आहुति जानू। कोपु मोर अति घोर कृसानू ॥283:2॥
समिधि सेन चतुरंग सुहाई। महा महीप भए पसु आई ॥283:3॥
मैं एहिं परसु काटि बलि दीन्हे। समर जग्य जप कोटिन्ह कीन्हे ॥283:4॥

चाप स्रुवा = धनुष तो पात्र है, *सर आहुति जानू* = बाण को घी की आहुति समझो, *कोपु मोर अति घोर कृसानू* = मेरे क्रोध को भयंकर अग्नि समझो, *समिधि सेन चतुरंग सुहाई* = सुंदर चतुरंगी सेना उसकी लकड़ी है, *महा महीप भए पसु आई* = बड़े-बड़े राजा उसमें आकर बलि के पशु बने हैं, *मैं एहिं परसु काटि* = मैंने इसी फरसे से काटकर, *बलि दीन्हे* = उनकी बलि दी है, *समर जग्य जप* = इस प्रकार के युद्ध के जप यज्ञ, *कोटिन्ह कीन्हे* = मैंने करोड़ों किये हैं।

विप्र यज्ञ करते हैं, पर हमने दूसरे प्रकार का यज्ञ किया है।
1. *धनुष*– यज्ञ सामग्री रखने का पात्र है जिसे स्रुवा कहते हैं।
2. *बाण*– यज्ञ में दी जाने वाली घी की आहुति है।
3. *क्रोध*– मेरा क्रोध यज्ञ में जलने वाली भयंकर अग्नि है।

4. *सेनायें*– चतुरंगी सेनायें यज्ञ में डाली जाने वाली लकड़ियाँ हैं।
5. *राजा*– बड़े-बड़े राजाओं को मैंने फरसे से काटकर इसमें बलि चढ़ाया है।
इस प्रकार के युद्ध के जपयज्ञ मैंने अनेकों किये हैं।

तुझे मेरी महिमा नहीं मालूम, धनुष तोड़कर बहुत घमंड आ गया है

मोर प्रभाउ बिदित नहिं तोरें। बोलसि निदरि बिप्र के भोरें ॥283:5॥
भंजेउ चापु दापु बड़ बाढ़ा। अहमिति मनहुँ जीति जगु ठाढ़ा ॥283:6॥

मोर प्रभाउ बिदित नहिं तोरें = मेरा प्रभाव तुझे पता नहीं है, *बोलसि निदरि बिप्र के भोरें* = केवल विप्र समझकर, निरादर करके बोलता है, *भंजेउ चापु* = धनुष तोड़ डाला, *दापु बड़ बाढ़ा* = इससे अभिमान बहुत बढ़ गया है, *अहमिति* = इस प्रकार का अभिमान है, *मनहुँ जीति जगु ठाढ़ा* = मानो विश्व विजय करके खड़े हो।

परशुराम कहते हैं कि तुझे मेरा प्रभाव नहीं मालूम, मात्र विप्र कहकर मेरा अपमान करते हो। धनुष क्या तोड़ लिया, इतना घमंड आ गया कि अपने आप को विश्व-विजयी समझने लगे।

हे मुनि! छोटी सी चूक के लिये इतना बड़ा क्रोध

राम कहा मुनि कहहु बिचारी। रिस अति बड़ि लघु चूक हमारी ॥283:7॥
छुअतहिं टूट पिनाक पुराना। मैं केहि हेतु करौं अभिमाना ॥283:8॥

राम कहा = राम कहते हैं, *मुनि कहहु बिचारी* = हे मुनि! विचार करके बोलिये, *रिस अति बड़ि* = आपका क्रोध बहुत बड़ा है, *लघु चूक हमारी* = हमारी गलती बहुत छोटी है, *छुअतहिं टूट पिनाक पुराना* = छूते ही पुराना धनुष टूट गया, *मैं केहि हेतु करौं अभिमाना* = मैं किस बात का अभिमान करूँ?

परशुराम अपने को वीर बताते रहे पर प्रभु राम उन्हें मुनि ही कहकर संबोधित करते हुए कहते हैं कि थोड़ा विचार करके तो बोलिये। छोटी-सी गलती के लिये आप ज्यादा ही क्रोध कर रहे हैं। अरे! वह तो पुराना जीर्ण-शीर्ण धनुष था, छूते ही टूट गया, मैं इसमें क्या अभिमान करूँ?

हम विप्र के अलावा किसी के आगे सिर नहीं झुकाते!

जौं हम निदरहिं बिप्र बदि सत्य सुनहु भृगुनाथ ।
तौ अस को जग सुभटु जेहि भय बस नावहिं माथ ॥दोहा 283॥

जौं हम निदरहिं = यदि हम निरादर करें, *बिप्र बदि* = विप्र जानकर भी, *सत्य सुनहु भृगुनाथ* = तो हे भृगुनाथ! सत्य सुनिये, *तौ अस को जग सुभटु* = तो संसार में ऐसा कौन-सा वीर है, *जेहि भय बस* = जिससे भयभीत होकर, *नावहिं माथ* = हम सिर झुकायें।

यदि विप्र को पहचानते हुए भी उनका हम निरादर करें तो हे भृगुनाथ! मैं सत्य कहता हूँ संसार में ऐसा कौन सा वीर है जिसके सामने भय के कारण हम सिर झुकायेंगे? हमारे लिये तो विप्र ही वंदनीय हैं।

युद्ध के लिये कोई भी ललकारे हम उससे युद्ध करते हैं

देव दनुज भूपति भट नाना। समबल अधिक होउ बलवाना ॥284:1॥
जौं रन हमहि पचारै कोऊ। लरहिं सुखेन कालु किन होऊ ॥284:2॥

देव दनुज भूपति = देवता; दैत्य; राजा, *भट नाना* = या बहुत से योद्धा, *समबल* = वे बल में हमारे बराबर हों, *अधिक होउ बलवाना* = या हमसे ज्यादा बलवान् हों, *जौं रन हमहि पचारै कोऊ* = जो युद्ध में हमें ललकारता है, *लरहिं सुखेन* = तो हम उससे सुखपूर्वक युद्ध करेंगे, *कालु किन होऊ* = चाहे काल ही क्यों न हो।

छत्रिय तनु धरि समर सकाना। कुल कलंकु तेहिं पावँर आना ॥284:3॥
कहउँ सुभाउ न कुलहि प्रसंसी। कालहु डरहिं न रन रघुबंसी ॥284:4॥

छत्रिय तनु धरि = क्षत्रिय शरीर धारण करके, *समर सकाना* = जो युद्ध में डर गया, *कुल कलंकु* = वह कुल का कलंक है, *तेहिं पावँर आना* = उसके समान पामर कौन होगा? *कहउँ सुभाउ* = मैं स्वभाव से ही कहता हूँ, *न कुलहि प्रसंसी* = कुल की प्रशंसा करके नहीं, *कालहु डरहिं न* = काल से भी नहीं डरते हैं, *रन रघुबंसी* = युद्ध में रघुवंश के लोग।

परशुराम जी बार-बार राम जी को युद्ध के लिये ललकारते हैं, उसके जवाब में राम जी कहते हैं– चाहे देवता हो या राक्षस, चाहे हमारे बराबर बलवान् हो या हमसे ज्यादा बलवान् हो, जो युद्ध में हमें ललकारता है हम उससे सुखपूर्वक युद्ध करते हैं। यदि काल भी सामने आ जाये तो भी हम उससे अवश्य युद्ध करेंगे। क्षत्रिय शरीर धारण करके जो व्यक्ति युद्ध से डर गया हो तो वह क्षत्रिय-कुल का कलंक है, उससे अधिक पापी कौन होगा? मैं अपने कुल की प्रशंसा न करके सहज स्वभाव से ही कहता हूँ कि रघुवंशी काल से भी नहीं डरते हैं। काल सबसे ज्यादा भयंकर है, उससे भी जो युद्ध करे वह हिम्मती है।

क्षत्रियों में उत्साह लाने के लिये क्षत्रिय-धर्म की घोषणा

क्षत्रिय युद्ध क्यों करता है? 1. धर्म की रक्षा के लिये, 2. न्याय व्यवस्था बनाये रखने के लिये, 3. देश की रक्षा के लिये। वह बेमतलब में दूसरों को कष्ट पहुँचाने के लिये युद्ध नहीं करता है। वह शांति बनाये रखने के लिये युद्ध करता है। प्रभु राम ये सब बातें क्षत्रिय धर्म मानने वालों के अंदर बल व उत्साह लाने के लिये कहते हैं। आज के युग में सेना व पुलिस जो काम करती है, प्राचीन वर्ण व्यवस्था में उस कार्य को करने वाले क्षत्रिय कहलाते थे।

शास्त्र के ज्ञाता ही विप्र हैं, उनसे जो डर गया वह अभय हो गया

बिप्रबंस कै असि प्रभुताई। अभय होइ जो तुम्हहि डेराई॥284:5॥

बिप्रबंस कै असि प्रभुताई = विप्रवंश की ऐसी महानता है, *अभय होइ जो तुम्हहि डेराई* = जो विप्रों से डरता है वह अभय हो जाता है।

राम कहते हैं कि विप्रवंश की ऐसी महानता है कि जो उनसे डरता है उसे किसी से डरने की आवश्यकता नहीं होती। प्राचीनकाल की वर्ण व्यवस्था में समाज को जो धर्म का ज्ञान कराये, उसे सही रास्ते पर चलने की शिक्षा दे, जो शास्त्रों को स्वयं पढ़े व दूसरों को पढ़ाये उसे विप्र कहते थे। यहाँ पर डरने का आशय है कि जो विप्रों द्वारा बतायी शास्त्र की बात माने व जीवन में उसका पालन करे। जब आप धर्म का पालन करेंगे तब अभय तो होना ही है।

राम की गूढ़ बातें परशुराम की समझ में आ गयीं

सुनि मृदु गूढ़ बचन रघुपति के। उघरे पटल परसुधर मति के ॥284:6॥

सुनि मृदु गूढ़ बचन रघुपति के = प्रभु राम की कोमल व रहस्यपूर्ण बातें सुनकर, *उघरे पटल परसुधर मति के* = परशुराम की बुद्धि के परदे खुल गये।

प्रभु राम की ये सब बातें सुनते-सुनते परशुराम जी को धीरे-धीरे समझ में आने लगा। बुद्धि के ऊपर का पर्दा हट गया। पर्दा क्या था? विप्र कुछ नहीं होता, क्षत्रिय ही सबसे बड़ा होता है, जो वीर हो, जो युद्ध जीते वही महान् है। विप्रत्व की महिमा समझ में आ गयी। समस्या आने पर हमने क्षत्रिय धर्म स्वीकार किया था, कार्य पूरा हो गया तो अब वापस अपने विप्र धर्म में आ जाओ। यही सर्वश्रेष्ठ है। उन्हें यह भी समझ आया कि आज तक हम जिस क्षत्रिय को ललकारते थे वह युद्ध के लिये तैयार हो जाता था, पर ये नहीं हुए, क्योंकि इन्हें पता था कि विप्र से युद्ध नहीं करना चाहिये।

विष्णु-धनुष राम को देने लगे जो अपने आप चला गया

राम रमापति कर धनु लेहू। खैंचहु मिटै मोर संदेहू ॥284:7॥
देत चापु आपुहिं चलि गयऊ। परसुराम मन बिसमय भयऊ ॥284:8॥

राम = परशुराम बोले हे राम!, *रमापति* = लक्ष्मी के पति विष्णु जी का, *कर धनु लेहू* = धनुष हाथ में लीजिये, *खैंचहु* = इसे खींचिये, *मिटै मोर संदेहू* = जिससे मेरा संदेह दूर हो जाये, *देत चापु* = परशुराम जी धनुष देने लगे, *आपुहिं चलि गयऊ* = वह अपने आप चला गया, *परसुराम मन बिसमय भयऊ* = परशुराम के मन में आश्चर्य हुआ।

परशुराम जी को जब बात समझ में आ गयी तो लगा ये कोई साधारण मनुष्य नहीं हो सकते। तब अपना संदेह दूर करने के लिये कहते हैं– हे राम! आप लक्ष्मी पति विष्णु जी का धनुष अपने हाथ में लेकर चलाओ। जैसे ही परशुराम ने धनुष देने के लिये हाथ बढ़ाया और राम ने लेने के लिये हाथ फैलाया, धनुष अपने आप राम के पास चला गया। परशुराम यह देख आश्चर्यचकित रह गये।

पौराणिक कथा के अनुसार परशुराम जी धनुष विद्या सीखने शिव जी के पास गये। शिव जी जो भी धनुष सिखाने के लिये देते वह परशुराम के खींचते ही टूट जाता। फिर शिव ने अपना धनुष दिया जिसे परशुराम उठा नहीं पाये। तब शिव के कहने से परशुराम ने तपस्या करके विष्णु जी को प्रसन्न करके उनका सारंग धनुष प्राप्त किया। विष्णु जी ने कहा कि यह धनुष जब तक तुम्हें आवश्यकता है तुम्हारे पास रहेगा। जब मैं अवतार लूँगा, तुम्हारा कार्य पूरा होगा तो यह अपने आप मेरे पास चला आयेगा।

राम का प्रभाव समझकर परशुराम राम से प्रार्थना करते हैं

जाना राम प्रभाउ तब पुलक प्रफुल्लित गात ।
जोरि पानि बोले बचन हृदयँ न प्रेमु अमात ।। दोहा 284 ।।

जाना राम प्रभाउ तब = तब उन्होंने राम की महिमा जानी, *पुलक प्रफुल्लित गात* = उनका शरीर पुलकित व प्रफुल्लित हो गया, *जोरि पानि बोले बचन* = वे हाथ जोड़कर बोले, *हृदयँ न प्रेमु अमात* = प्रेम उनके हृदय में समा नहीं रहा था।

जय रघुबंस बनज बन भानू। गहन दनुज कुल दहन कृसानू ।।285:1 ।।
जय सुर बिप्र धेनु हितकारी। जय मद मोह कोह भ्रम हारी ।।285:2 ।।
बिनय सील करुना गुन सागर। जयति बचन रचना अति नागर ।।285:3 ।।

जय रघुबंस बनज बन भानू = हे रघुकुल के कमल के वन के सूर्य आपकी जय हो, *गहन दनुज कुल* = घोर राक्षसों के कुल के वन को, *दहन कृसानू* = जलाने के लिये आप अग्नि के समान हैं, *जय सुर बिप्र धेनु हितकारी* = आप देवता; विप्र; गाय का हित करने वाले हो आपकी जय हो, *जय मद मोह कोह भ्रम हारी* = आप मद; मोह; क्रोध व भ्रम को दूर करने वाले हैं आपकी जय हो, *बिनय सील करुना गुन सागर* = आप विनय; शील व करुणा के सागर हैं, *जयति* = आपकी जय हो, *बचन रचना अति नागर* = वचनों की रचना करने में आप निपुण हो।

सेवक सुखद सुभग सब अंगा। जय सरीर छबि कोटि अनंगा ।।285:4 ।।
करौं काह मुख एक प्रसंसा। जय महेस मन मानस हंसा ।।285:5 ।।
अनुचित बहुत कहेउँ अग्याता। छमहु छमा मंदिर दोउ भ्राता ।।285:6 ।।

सेवक सुखद = सेवकों को सुख प्रदान करने वाले हो, *सुभग सब अंगा* = आपके सभी अंग शुभ हैं, सुंदर हैं, *जय सरीर छबि कोटि अनंगा* = आपकी जय हो, आपकी सुंदरता करोड़ों कामदेव के समान है, *करौं काह मुख एक प्रसंसा* = मैं एक मुख से आपकी क्या प्रशंसा करूँ, *जय महेस मन मानस हंसा* = आप तो शिव जी के मन के मानसरोवर के हंस हो, आपकी जय हो, *अनुचित बहुत कहेउँ अग्याता* = अज्ञान के कारण मैंने आपको बहुत अनुचित कहा है, *छमहु छमा मंदिर दोउ भ्राता* = हे क्षमा के मंदिर दोनों भाई मुझे क्षमा करें।

परशुराम ने राम का रहस्य, प्रभाव समझा। विष्णु का अवतार समझकर शरीर प्रफुल्लित हो गया। मन में राम के प्रति प्रेम जागृत हो गया। जैसा अभी अनुभव किया उसी के अनुसार प्रार्थना करके राम की जय-जयकार करते हैं।

1. रघुकुल-वंश कमलों का वन है, जैसे सूर्य के प्रकाश से कमल खिलते हैं वैसे ही आप सूर्य के समान रघुकुल को प्रकाशित करने वाले हो।
2. घोर राक्षसों के वंश को जलाकर राख कर देने के लिये आप अग्नि के समान हो। परशुराम समझ गये कि निशाचरों को मारने के लिये ये अवतार लिये हैं।
3. धर्म की प्रतीक गाय, धर्म का प्रचार करने वाले विप्र व सदगुण रूपी देवता की आप रक्षा करते हैं, क्योंकि इन तीनों का संबंध धर्म से है।
4. मद, मोह, क्रोध व भ्रम इन चारों को आप दूर करने वाले हैं। परशुराम के ये चारों अवगुण समाप्त हो गये।
5. विनम्रता, शीलता, करुणा, ये सब गुण आप में कूट-कूट कर भरे हैं। परशुराम को लगा कि हमने इतने कटु वचन कहे पर ये विनम्र बने रहे, ये बड़ों से आदर से बात करते हैं, छोटों से स्नेह रखते हैं, दूसरों के दु:ख से दु:खी होते हैं।
6. आप शब्द रचना करके बोलने में बहुत ही कुशल हो। राम ने जो भी कहा वह परशुराम के समझ में ठीक से आ गया।
7. अपने सेवकों को आप सुख प्रदान करते हो।
8. सिर से लेकर पैर तक आपके सभी अंग सुंदर हैं। आपकी छवि कोटियों कामदेव के बराबर है।
9. हम एक मुख से आपकी कितनी प्रशंसा कर पायेंगे?

10. आप शिव जी के हृदय रूपी मानसरोवर में हंस की तरह से विचरण करने वाले हो। शिव जी सदा आपका ध्यान करते हैं, आपका वहीं नित्य वास है। अभी तक परशुराम इन्हें शिव शत्रु समझ रहे थे।
11. हमें ज्ञान नहीं था, समझ नहीं थी इसलिये आपको व छोटे भाई को बहुत अनुचित बातें कही, आप दोनों तो क्षमा के मंदिर हो, मुझे क्षमा करें। जो अज्ञानी होगा वही आपका विरोध करेगा, आप यह सोचकर क्षमा करें कि इसे ज्ञान नहीं है।

परशुराम तप के लिये वन गये, कुटिल राजा भाग गये

कहि जय जय जय रघुकुलकेतू। भृगुपति गए बनहि तप हेतू ॥285:7॥
अपभयँ कुटिल महीप डेराने। जहँ तहँ कायर गवँहिं पराने ॥285:8॥

कहि जय जय जय रघुकुलकेतू = बार-बार राम की जय, रघुबीर की जय, रघुकुल की जय कहकर, *भृगुपति गए बनहि तप हेतू* = परशुराम जी तप के लिये वन चले गये, *अपभयँ कुटिल महीप डेराने* = दुष्ट राजा बिना किसी कारण के डरकर, *जहँ तहँ कायर गवँहिं पराने* = वे कायर चुपचाप वहाँ से चले गये।

देवन्ह दीन्हीं दुंदुभीं प्रभु पर बरषहिं फूल ।
हरषे पुर नर नारि सब मिटी मोहमय सूल ॥दोहा 285॥

देवन्ह दीन्हीं दुंदुभीं = देवताओं ने बाजे बजाये, *प्रभु पर बरषहिं फूल* = प्रभु पर फूलों की वर्षा की, *हरषे पुर नर नारि सब* = जनकपुर के सब स्त्री-पुरुष प्रसन्न हो गये, *मिटी मोहमय सूल* = उनका अज्ञान से उत्पन्न दु:ख दूर हो गया।

बार-बार जय-जयकार करते हुए परशुराम तप करने वन को चले गये। विप्र परशुराम जी ने राम से प्रार्थना की, जय-जयकार की, परंतु प्रणाम नहीं किया, क्यों? उन्हें समझ में आ गया कि हम विप्र हैं, ये क्षत्रिय हैं, विप्र क्षत्रिय को प्रणाम नहीं करेगा। विप्र का कार्य है तप करे, उससे बल अर्जित करे, ज्ञान प्राप्त करके समाज में ज्ञान का प्रचार करे। इसलिये वे तप करने के लिये वन चले गये। कुटिल राजा अपने आप ही डर गये, बिना बताये ही चुपचाप वहाँ से चले गये। देवता आकाश से फूलों की वर्षा करके बाजे बजाने लगे। नगर के स्त्री-पुरुषों का मोह से उत्पन्न अज्ञान दूर हो गया, वे सब प्रसन्न हो गये।

2. दूत अयोध्या चले, जनकपुर में विवाह-मंडप तैयार

(दोहा 286 से 289)

परशुराम जी के जाने के बाद जनक जी के पूछने पर विश्वामित्र कहते हैं कि अब कुल व वेद रीति से विवाह संपन्न करो। महाराज दशरथ को बारात सहित आमंत्रित करने हेतु दूतों को अयोध्या भेजा जाता है। इस बीच जनकपुर में विवाह की तैयारियाँ पूरी हो जाती हैं। मणियों व स्वर्ण से सजावट कर राज-महल में बहुत विचित्र विवाह मंडप बनाया जाता है। पूरा नगर अंदर से व बाहर से अच्छी तरह सजाया जाता है। नगर में इतनी भव्यता, संपन्नता व सुंदरता है कि उसका वर्णन नहीं किया जा सकता है।

नगर में धूम, जनक जी व सीता सुखी

अति गहगहे बाजने बाजे। सबहिं मनोहर मंगल साजे ॥286:1॥
जूथ जूथ मिलि सुमुखि सुनयनीं। करहिं गान कल कोकिलबयनीं ॥286:2॥

अति गहगहे बाजने बाजे = खूब जोर से बाजे बजने लगे, *सबहिं मनोहर मंगल साजे* = सब लोग मनोहर मंगल साज सजाने लगे, *जूथ जूथ मिलि* = झुंड का झुंड बनाकर, *सुमुखि सुनयनीं* = सुंदर मुख व सुंदर नेत्रों वाली स्त्रियाँ, *करहिं गान कल कोकिलबयनीं* = कोयल के समान मधुर वाणी वाली सुंदर गीत गाने लगीं।

सुखु बिदेह कर बरनि न जाई। जन्मदरिद्र मनहुँ निधि पाई ॥286:3॥
बिगत त्रास भइ सीय सुखारी। जनु बिधु उदयँ चकोरकुमारी ॥286:4॥

सुखु बिदेह कर बरनि न जाई = जनक जी के सुख का वर्णन नहीं किया जा सकता है, *जन्मदरिद्र मनहुँ निधि पाई* = मानो जन्म से दरिद्र को बहुत संपत्ति मिल गई हो, *बिगत त्रास* = सीता जी का भय दूर हो गया, *भइ सीय सुखारी* = वे वैसे सुखी हो गईं, *जनु बिधु उदयँ चकोरकुमारी* = जैसे चन्द्रमा के उदय होने से चकोर की कन्या सुखी हो जाती है।

नगर में जितने तरह के बाजे बज सकते थे सब बजने लगे। चारों ओर मंगल साज सजने लगे। स्त्रियाँ तैयार होकर झुंड का झुंड बनाकर मंगल गीत गाने लगीं। प्रभु राम के दर्शन से इनके नेत्र सुंदर हैं, राम गुण गान करने से वाणी

सुंदर है, प्रभावशाली सुंदरता है। महाराज जनक इस प्रकार सुखी हैं मानो जन्मजात दरिद्र को अपार संपत्ति मिल गयी हो। सीता जी का भय दूर हो गया, वे इस प्रकार सुखी हैं जैसे चन्द्रमा के उदय होने पर चकोरी सुखी होकर उसकी तरफ देखने लगती है।

विश्वामित्र जी से जनक जी आगे कार्य के लिये आदेश मांगते हैं

जनक कीन्ह कौसिकहि प्रनामा। प्रभु प्रसाद धनु भंजेउ रामा ॥286:5॥
मोहि कृतकृत्य कीन्ह दुहुँ भाईं। अब जो उचित सो कहिअ गोसाईं ॥286:6॥

जनक कीन्ह कौसिकहि प्रनामा = जनक जी ने विश्वामित्र जी को प्रणाम किया, *प्रभु प्रसाद धनु भंजेउ रामा* = कहते हैं हे प्रभु! आपकी कृपा से ही राम ने धनुष तोड़ा है, *मोहि कृतकृत्य कीन्ह दुहुँ भाईं* = दोनों भाइयों ने मुझे कृतकृत्य कर दिया है, *अब जो उचित सो कहिअ गोसाईं* = हे स्वामी! अब जो उचित हो वह बताइये।

विश्वामित्र जी के पास जाकर जनक जी प्रणाम करके कहते हैं कि आपकी कृपा से राम ने धुनष भंग कर दिया है। दोनों भाइयों ने मुझे कृतकृत्य कर दिया है। अब आप बताइये मुझे आगे क्या करना है। जनक जी अपने से निर्णय नहीं लेते हैं।

दशरथ जी को आमंत्रित करके कुलरीति से विवाह करो

कह मुनि सुनु नरनाथ प्रबीना। रहा बिबाहु चाप आधीना ॥286:7॥
टूटतहीं धनु भयउ बिबाहू। सुर नर नाग बिदित सब काहू ॥286:8॥

कह मुनि सुनु नरनाथ प्रबीना = मुनि ने कहा हे प्रवीण राजा सुनो, *रहा बिबाहु चाप आधीना* = विवाह धनुष के अधीन था, *टूटतहीं धनु भयउ बिबाहू* = धनुष के टूटते ही विवाह संपन्न हो गया है, *सुर नर नाग बिदित सब काहू* = देवता; मनुष्य व नाग सब लोगों को यह बात पता चल गयी है।

तदपि जाइ तुम्ह करहु अब जथा बंस ब्यवहारु ।
बूझि बिप्र कुलबृद्ध गुर बेद बिदित आचरु ॥दोहा 286॥

तदपि जाइ तुम्ह = फिर भी तुम जाकर के, *करहु अब जथा बंस ब्यवहारु* = अपने वंश के अनुसार कार्य संपन्न करो, *बूझि बिप्र कुलबृद्ध गुर* = विप्र; कुल के बुजुर्ग व गुरु से पूछकर, *बेद बिदित आचरु* = वेदों में बताये अनुसार कार्य करो।

दूत अवधपुर पठवहु जाई। आनहिं नृप दसरथहि बोलाई ॥287:1॥

दूत अवधपुर पठवहु जाई = अयोध्या में दूत भेजकर, *आनहिं नृप दसरथहि बोलाई* = महाराज दशरथ को आमंत्रित करो।

विश्वामित्र जी कहते हैं, हे प्रवीण राजा! विवाह तो धनुष के टूटने के साथ ही संपन्न हो गया है। विवाह की सूचना सबको मालूम होनी चाहिये तो वह भी स्वर्ग-लोक से लेकर पाताल-लोक तक के वासियों को पता चल गया है कि सीता का राम के साथ विवाह हो गया है। फिर भी तुम कुलरीति से विवाह संपन्न करो। दूतों को अयोध्या भेजकर महाराज दशरथ को बारात लेकर आने का निमंत्रण भेजो। चार प्रकार के लोगों से पूछकर विवाह कार्य करो।

1. विप्र : इनसे लग्न व मुहूर्त पूछना चाहिये।
2. कुल के वृद्ध : इनसे कुलरीति पूछकर परिवार की प्रथा का पालन करो।
3. गुरु : इनसे आशीर्वाद प्राप्त करके कार्य करो।
4. वेद : इनमें वर्णित विवाह की रीति का पालन करो।

तुरंत ही दूतों को पत्र देकर अयोध्या भेजा गया

मुदित राउ कहि भलेहिं कृपाला। पठए दूत बोलि तेहि काला ॥287:2॥

मुदित राउ कहि = राजा ने प्रसन्न होकर कहा, *भलेहिं कृपाला* = हे कृपालु! हम ऐसा ही करेंगे, *पठए दूत बोलि तेहि काला* = उसी समय दूतों को बुलवाकर भेजा गया।

तुलसीदास जी समस्याओं का समाधान बहुत सुंदरता से करते हैं। महाराज दशरथ चक्रवर्ती राजा हैं, जनक जी उनके अधीनस्थ राजा हैं। छोटा राजा अपने से बड़े राजा को कैसे आमंत्रित करे? यह समस्या थी। सहारा लिया विश्वामित्र जी का। पत्र में लिखा गया कि विश्वामित्र जी ने इच्छा प्रगट की है कि आप बारात लेकर आयें। विश्वामित्र जी की महानता प्रगट हुई, जनक जी

की लघुता दब गई। पत्र व उसमें लिखी बातों का वर्णन यहाँ नहीं करते, जब महाराज दशरथ पत्र पढ़ेंगे तब पता चलेगा।

नगर को सजाने व विवाह-मंडप बनाने का आदेश जनक जी देते हैं

बहुरि महाजन सकल बोलाए। आइ सबन्हि सादर सिर नाए ॥287:3॥
हाट बाट मंदिर सुरबासा। नगरु सँवारहु चारिहुँ पासा ॥287:4॥
हरषि चले निज निज गृह आए। पुनि परिचारक बोलि पठाए ॥287:5॥
रचहु बिचित्र बितान बनाई। सिर धरि बचन चले सचु पाई ॥287:6॥
पठए बोलि गुनी तिन्ह नाना। जे बितान बिधि कुसल सुजाना ॥287:7॥

बहुरि महाजन सकल बोलाए = फिर नगर के सब विशिष्ट पुरुषों को बुलवाया, *आइ सबन्हि सादर सिर नाए* = सबने आकर आदरपूर्वक सिर झुकाकर प्रणाम किया, *हाट बाट मंदिर सुरबासा* = बाजार; सड़कें; घर व मंदिर, *नगरु सँवारहु चारिहुँ पासा* = नगर को चारों तरफ से सजाने का आदेश दिया, *हरषि चले निज निज गृह आए* = वे सब हर्षित होकर अपने-अपने घर आ गये, *पुनि परिचारक बोलि पठाए* = फिर राजा ने सेवकों को बुलवाकर कहा, *रचहु बिचित्र बितान बनाई* = विवाह मंडप विचित्र तरीके से सजाकर बनवाओ, *सिर धरि बचन चले सचु पाई* = वे सुखी होकर आज्ञा को शिरोधार्य करके चले, *पठए बोलि गुनी तिन्ह नाना* = उन्होंने अनके कारीगरों को बुलावा भेजा, *जे बितान बिधि कुसल सुजाना* = जो विवाह मंडप बनाने में कुशल व चतुर थे।

यज्ञशाला का कार्यक्रम यहीं समाप्त हो गया। विश्वामित्र जी राम-लक्ष्मण के साथ निवास में चले गये। महाराज जनक राज सभा में आकर विवाह की तैयारी शुरू करने का आदेश देते हैं।

1. नगर के विशिष्ट लोगों को बुलवाया गया, उन्होंने राजा को सिर झुकाकर प्रणाम करके कहा, क्या आज्ञा है? राजा ने कहा कि बाजार, सड़कें, देवताओं के रहने के स्थान यानि मंदिर और सारे नगर को चारों ओर से सजाओ। जब बारात आये तो नगर की सजावट बाहर से ही दिखने लगे। भारतीय संस्कृति में विवाह के बाद वर-वधू को मंदिर अवश्य ले जाते हैं, इसलिये अपने घर के साथ-साथ मंदिर की सफाई व सजावट की ओर भी ध्यान देना चाहिये। वे सब प्रसन्नतापूर्वक अपने कार्य में लग गये।

2. महाराज जनक ने अपने सेवकों को बुलवाकर कहा कि विवाह मंडप बनवाओ जो बहुत ही विचित्र हो। वे सब राजा का वचन सिर पर रखकर प्रसन्न होकर वहाँ से चले। सेवकों ने अनेक कारीगरों को बुलवाया जो मंडप बनाने में कुशल व चतुर थे।

स्वर्ण के केले के खंभे, पन्ना के फल व पत्ते, लालमणि के फूल

बिधिहि बंदि तिन्ह कीन्ह अरंभा। बिरचे कनक कदलि के खंभा ॥287:8॥

बिधिहि बंदि = ब्रह्माजी की वंदना करके, *तिन्ह कीन्ह अरंभा* = उन्होंने कार्य प्रारंभ किया, *बिरचे कनक कदलि के खंभा* = पहले स्वर्ण से केले के खंभे बनाये।

हरित मनिन्ह के पत्र फल पदुमराग के फूल ।
रचना देखि बिचित्र अति मनु बिरंचि कर भूल ॥दोहा 287॥

हरित मनिन्ह के पत्र फल = उसमें पत्ते व फल हरी मणियों के बनाये, *पदुमराग के फूल* = माणिक से फूल बनाये, *रचना देखि बिचित्र अति* = अत्यंत विचित्र रचना देखकर, *मनु बिरंचि कर भूल* = ब्रह्मा जी का मन भी भुला गया।

ब्रह्मा जी की वंदना करके कुशल कारीगरों ने मंडप बनाना आरंभ किया। मांगलिक कार्य का प्रारंभ तो गणेश की वंदना से होता है, पर निर्माण का कार्य ब्रह्मा जी की वंदना से करना चाहिये। मंडप में केले के पेड़ का प्रयोग करते हैं, परंतु यह तो सीता जी के विवाह का मंडप है इसलिये केले के पेड़ के तने स्वर्ण से बनाये गये, पत्ते व फल हरे होते हैं इसलिये हरी मणि यानि पन्ना से बनाये गये। केले का फूल लाल रंग का होता है, उसके लिये लालमणि यानि पद्मराग का प्रयोग किया गया। यह रचना इतनी सुंदर बनने लगी कि ब्रह्माजी भी इसे देखकर आश्चर्यचकित रह गये।

हरी-मणि के बाँस, उस पर स्वर्ण की लतायें, मोती की झालरें

बेनु हरित मनिमय सब कीन्हे। सरल सपरब परहिं नहिं चीन्हे ॥288:1॥
कनक कलित अहिबेलि बनाई। लखि नहिं परइ सपरन सुहाई ॥288:2॥
तेहि के रचि पचि बंध बनाए। बिच बिच मुकुता दाम सुहाए ॥288:3॥

बेनु = बाँस, *हरित मनिमय सब कीन्हे* = हरी-हरी मणियों से सभी बनाये गये, *सरल सपरब* = लंबे सीधे व गाँठ से युक्त, *परहिं नहिं चीन्हे* = उन्हें पहचान नहीं सकते, *कनक* = स्वर्ण से, *कलित अहिबेलि बनाई* = पान की सुंदर लता बनायी गयी, *लखि नहिं परइ* = उसे पहचान नहीं सकते, *सपरन सुहाई* = पत्तों सहित इतनी सुंदर बनी थी, *तेहि के रचि* = उस बेल को बाँधने के लिये, *पचि बंध बनाए* = रेशमी डोरी के सुंदर बंध बनाये गये, *बिच बिच मुकुता दाम सुहाए* = बीच-बीच में मोतियों की सुंदर झालरें रस्सी के सहारे लटका दी गईं।

मंडप में बाँस भी लगते हैं, तभी तो मजबूती आयेगी, उसी के सहारे केले के खंभे टिकेंगे। बाँस कैसे हैं? हरी मणियों से बनाये गये सीधे व लंबे हैं, बीच-बीच में गाँठें भी बना दी गई हैं। असली बाँस जैसे ही दिखते हैं। स्वर्ण से पके पान की सुंदर बेल बनाकर, रेशमी डोरी से बाँस के चारों ओर लपेट दिया है। बीच-बीच में मोतियों की सुंदर झालरें लटका दी गई हैं।

रंग-बिरंगे कमल, भौंरें व पक्षी भी मणियों से बनाये गये

मानिक मरकत कुलिस पिरोजा। चीरि कोरि पचि रचे सरोजा ॥288:4॥
किए भृंग बहुरंग बिहंगा। गुंजहिं कूजहिं पवन प्रसंगा ॥288:5॥

मानिक = लाल मणि, *मरकत* = नीली मणि, *कुलिस* = सफेद हीरा, *पिरोजा* = फिरोजी रंग की मणि, *चीरि कोरि पचि* = इनको चीरकर; कोरकर व पच्चीकारी करके, *रचे सरोजा* = कमल के फूल बनाये गये, *किए भृंग बहुरंग बिहंगा* = भौंरें व बहुत रंगों के पक्षी बनाये, *गुंजहिं कूजहिं पवन प्रसंगा* = हवा के चलने से ये गुंजते व कूजते थे।

मंडप के खंभे बनाकर उस पर वितान तान दिया गया। उसके नीचे मणियों को काटकर, कोरकर व नक्काशी करके रंग-बिरंगे कमल के फूल बनाये गये। माणिक से लाल कमल, मरकत से नीला कमल, हीरा से सफेद कमल व पिरोजा से फिरोजी रंग के कमल के सुंदर फूल बनाये गये। कमल के साथ भौंरें व रंग-बिरंगी जल पक्षी इस प्रकार बनाये गये कि इनके बीच से वायु निकलने से ध्वनि उत्पन्न होती है।

खंभों में देवताओं की मूर्ति व गजमुक्ता से चौक बनी

सुर प्रतिमा खंभन गढ़ि काढ़ीं। मंगल द्रब्य लिएँ सब ठाढ़ीं ॥288:6॥
चौकें भाँति अनेक पुराईं। सिंधुर मनिमय सहज सुहाईं ॥288:7॥

सुर प्रतिमा = देवताओं की मूर्तियाँ, *खंभन गढ़ि काढ़ीं* = खंभों में गढ़कर निकाली गईं, *मंगल द्रब्य लिएँ सब ठाढ़ीं* = वे सब मंगल द्रव्य लिये खड़ी थीं, *चौकें भाँति अनेक पुराईं* = अनेक तरह की चौकें बनायी गयीं, *सिंधुर मनिमय* = गजमुक्ता को पीसकर, *सहज सुहाईं* = जो सहज ही सुंदर हैं।

सुंदर खंभे में देवताओं की मूर्तियाँ बनायी गयीं, जो पूजन के लिये मंगल द्रव्य थाली में लिये खड़ें हैं। आँटे से चौकें बनायी जाती हैं, परंतु यहाँ गजमुक्ता को पीसकर उसके चमचमाते चूर्ण से अनेक प्रकार की चौकें बनायी गईं।

नीलमणि से आम के पत्ते बनाकर बंदनवार लटकायी गयी

सौरभ पल्लव सुभग सुठि किए नीलमनि कोरि ।
हेम बौर मरकत घवरि लसत पाटमय डोरि ॥दोहा 288॥

सौरभ पल्लव = आम के पत्ते, *सुभग सुठि* = अत्यंत सुंदर, *किए नीलमनि कोरि* = नीलमणि को कोरकर बनाये गये, *हेम बौर* = स्वर्ण से बौरें, *मरकत घवरि* = पन्ना से फलों के गुच्छे बनाये गये, *लसत पाटमय डोरि* = रेशम की डोरी से बाँधकर दरवाजों मे लटका दिया गया।

बंदनवार आम के पत्तों से बनाकर दरवाजों पर लटकाये जाते हैं। नीली मणि को काट-छाँटकर आम के पत्ते बनाये गये, स्वर्ण से पीले रंग की बौरें बनायी गयीं, हरे रंग के पन्ना से आम के फल बनाये गये। इन सबको रेशम की डोरी से बाँधकर दरवाजों पर बंदनवार जैसे लटका दिया गया।

मणियों के दीप, अनेकों कलश, ध्वजाओं से सजावट

रचे रुचिर बर बंदनिवारे। मनहुँ मनोभवँ फंद सँवारे ॥289:1॥
मंगल कलस अनेक बनाए। ध्वज पताक पट चमर सुहाए ॥289:2॥
दीप मनोहर मनिमय नाना। जाइ न बरनि बिचित्र बिताना ॥289:3॥

रचे रुचिर बर बंदनिवारे = बहुत सुंदर बंदनवार सजाकर बाँध दिये गये, *मनहुँ मनोभवँ फंद सँवारे* = मानो कामदेव ने सौंदर्य का फंदा सजाया हो, *मंगल कलस अनेक बनाए* = अनेकों मंगल कलश बनाये गये, *ध्वज पताक पट चमर सुहाए* = ध्वजा, पताकायें, रंग-बिरंगे वस्त्रों व चँवर से सजावट की गयी, *दीप मनोहर मनिमय नाना* = मणियों के अनेकों सुंदर दीपक हैं, *जाइ न बरनि बिचित्र बिताना* = उस विचित्र मंडप का तो वर्णन ही नहीं किया जा सकता है।

बहुत सुंदर बंदनवार चारों तरफ सजाकर बाँध दी गई। सजावट इतनी सुंदर व मन को लुभाने वाली है कि लगता है कि कामदेव ने चारों ओर अपना सौंदर्य बिखेर दिया हो। जिधर देखो वहीं नजर टिकी रह जाये। अनेकों मंगल कलश, ध्वजा,पताका, रंग-बिरंगे वस्त्रों व चँवरों से खूब सजावट की गई है। मणियों के दीपक सजाये गये हैं। बहुत विचित्र मंडप बनकर तैयार हो गया है जिसका वर्णन नहीं किया जा सकता है।

सीता दुल्हन व राम दूल्हा हों, ऐसे मंडप का वर्णन संभव नहीं

जेहिं मंडप दुलहिनि बैदेही। सो बरनै असि मति कबि केही ॥289:4॥
दूलहु रामु रूप गुन सागर। सो बितानु तिहुँ लोक उजागर ॥289:5॥

जेहि मंडप दुलहिनि बैदेही = जिस मंडप में सीताजी दुलहन होंगी, *सो बरनै* = उसका वर्णन करने की, *असि मति कबि केही* = किस कवि की इतनी बुद्धि है? *दूलहु रामु रूप गुन सागर* = रूप व गुण के समुद्र राम जी दूल्हा होंगे, *सो बितानु* = उस मंडप को तो, *तिहुँ लोक उजागर* = तीनो लोकों में प्रसिद्ध होना ही चाहिये।

जिस मंडप में सीता जी दुल्हन बनकर बैठने वाली हैं, उस मंडप का वर्णन कोई कवि करे तो कैसे करे? जिस मंडप में रूप व गुणों के सागर राम जी दूल्हा बनने वाले हों उससे सुंदर तो तीनो लोकों में कोई वस्तु नहीं होगी।

जनकपुर में लक्ष्मी का वास, भव्यता व संपन्नता की तुलना नहीं

जनक भवन कै सोभा जैसी। गृह गृह प्रति पुर देखिअ तैसी ॥289:6॥
जेहिं तेरहुति तेहि समय निहारी। तेहि लघु लगहिं भुवन दस चारी ॥289:7॥
जो संपदा नीच गृह सोहा। सो बिलोकि सुरनायक मोहा ॥289:8॥

जनक भवन कै सोभा जैसी = जनक जी के महल की जैसी शोभा है, *गृह गृह प्रति पुर देखिअ तैसी* = वैसी ही शोभा नगर के प्रत्येक घर की दिखायी देती है, *जेहिं तेरहुति* = जिसने जनकपुर को, *तेहि समय निहारी* = उस समय देखा, *तेहि लघु लगहिं भुवन दस चारी* = उस चौदहों भुवन तुच्छ लगने लगा, *जो संपदा नीच गृह सोभा* = निम्न स्तर के व्यक्ति के यहाँ भी जो संपत्ति शोभायमान थी, *सो बिलोकि सुरनायक मोहा* = उसे देखकर इन्द्र भी मोहित हो गया।

बसइ नगर जेहिं लच्छि करि कपट नारि बर बेषु ।
तेहि पुर कै सोभा कहत सकुचहिं सारद सेषु ॥दोहा 289॥

बसइ नगर जेहिं लच्छि = जिस नगर में लक्ष्मी स्वयं वास करें, *करि कपट नारि बर बेषु* = कपट से सुंदर स्त्री का वेष बनाकर, *तेहि पुर कै सोभा कहत* = उस नगर की सुंदरता का वर्णन करने में, *सकुचहिं सारद सेषु* = सरस्वती व शेषनाग भी संकोच करते हैं।

जनक जी के राजभवन में जैसी सजावट हो गई, वैसी ही सबों ने अपने-अपने घरों में की। मानो सारा नगर ही धनी है। उस समय जिसने जनकपुरी को देखा उसे चौदह भुवनों में ऐसा सुन्दर कोई स्थान नहीं दिखाई दिया। उस समय जनकपुर के निम्न घर में भी जो संपत्ति थी, जो शोभा थी, वैसी इन्द्र के पास भी नहीं थी। इसका कारण तुलसीदास जी बताते हैं कि जनकपुर में लक्ष्मी जी स्वयं साधारण स्त्री का रूप धारण करके वास कर रही हैं। यही कारण है कि इस नगर की संपन्नता व सुंदरता का वर्णन करने में शेषनाग व सरस्वती भी संकोच करते हैं।

3. दूतों ने सूचना दी, अयोध्या में सजावट, भारी उत्साह

(दोहा 290 से 297)

जनकपुर से दूत अयोध्या पहुँचकर महाराज दशरथ को राम-सीता के विवाह हेतु बारात लेकर चलने का पत्र देते हैं। राम-लक्ष्मण के तेज, प्रताप, ऐश्वर्य का सुंदर वर्णन सुनकर राजा सहित पूरी सभा प्रेम में मग्न हो जाती है। गुरु के पास राजा स्वयं जाकर सूचना देते हैं। सब रानियाँ प्रेम में मुदित होकर खूब दान व न्योछावर देती हैं। बाजे बजाकर सारे नगर में विवाह की खबर दी जाती

है। राजमहल से लेकर प्रत्येक घर में मंगलमय सजावट की जाती है। पूरे नगर में उत्साह का वातावरण छा जाता है। जैसे दशरथ जी राम की खबर का पत्र बार-बार पढ़ते हैं, मातायें पत्र हृदय से लगाती हैं, वैसे ही रामकथा का पाठ प्रेम से बार-बार करना चाहिये।

दूत अयोध्या पहुँचे, महाराज दशरथ ने अपने पास बुलवाया

पहुँचे दूत राम पुर पावन। हरषे नगर बिलोकि सुहावन ॥290:1॥
भूप द्वार तिन्ह खबरि जनाई। दसरथ नृप सुनि लिए बोलाई ॥290:2॥

पहुँचे दूत राम पुर पावन = राम के पवित्र नगर में दूत पहुँच गये, *हरषे नगर बिलोकि सुहावन* = सुंदर नगर देखकर वे हर्षित हुए, *भूप द्वार तिन्ह खबरि जनाई* = राजद्वार पर जाकर उन्होंने सूचना भेजी, *दसरथ नृप सुनि लिए बोलाई* = राजा दशरथ ने सुनकर दूतों को बुलवा लिया।

राम की नगरी अयोध्या में दूत पहुँच गये। दूतों को लगा कि अभी तक हम सीता की नगरी में थे, अब राम की नगरी में हैं। यह परम पवित्र नगर है। सुंदरता देखकर वे प्रसन्न हो जाते हैं। जहाँ कहीं भी अयोध्या का नाम आया है तुलसीदास जी ने पावन शब्द जरूर लगाया है। यह बहुत महत्त्वपूर्ण है। दूतों ने द्वारपालों को सूचना दी। उन्होंने महाराज दशरथ को बताया, तुरंत ही दूतों को महाराज ने सीधे अपने पास बुलवा लिया। ये सामान्य दूत नहीं हैं, जनकपुर से आये हैं, राम-लक्ष्मण की खबर लाये हैं।

महाराज मन में पत्र पढ़कर रोमांचित, फिर सभा को सुनाया

करि प्रनामु तिन्ह पाती दीन्ही। मुदित महीप आपु उठि लीन्ही ॥290:3॥

करि प्रनामु तिन्ह पाती दीन्ही = दूतों ने प्रणाम करके पत्रिका दी, *मुदित महीप आपु उठि लीन्ही* = प्रसन्न होकर राजा ने स्वयं उठकर पत्रिका ली।

बारि बिलोचन बाँचत पाती। पुलक गात आई भरि छाती ॥290:4॥
रामु लखनु उर कर बर चीठी। रहि गए कहत न खाटी मीठी ॥290:5॥
पुनि धरि धीर पत्रिका बाँची। हरषी सभा बात सुनि साँची ॥290:6॥

बारि बिलोचन बाँचत पाती = पत्रिका पढ़ते समय उनके नेत्रों में जल भर आया, *पुलक गात* = शरीर रोमांचित हो गया, *आई भरि छाती* = गला भर आया, *रामु लखनु उर* = हृदय में राम-लखन का वास है, *कर बर चीठी* = हाथ में सुंदर पत्र है, *रहि गए कहत न खाटी मीठी* = पत्र लिये रह गये अच्छा-बुरा क्या है कुछ बोल ही नहीं पाये, *पुनि धरि धीर पत्रिका बाँची* = फिर धैर्य धारण करके पत्र को पढ़कर सुनाया, *हरषी सभा बात सुनि साँची* = सच्ची बात सुनकर सभा हर्षित हो गई।

दूतों ने महाराज दशरथ को प्रणाम करके बताया कि हम पत्र लाये हैं। महाराज ने मंत्रियों से नहीं कहा कि पत्र लो, स्वयं अपने सिंहासन से उठकर दूतों के पास जाकर पत्र लिया। उसी समय प्रेम उमड़ने लग गया। मन में ही पढ़ने लगे। नेत्रों से आँसू आ गये। शरीर रोमांचित हो गया। छाती भर आई यानि गला भर आया। प्रेम का संवेग इतना ज्यादा है कि बोल नहीं पाये। मन मे राम-लक्ष्मण का वास और हाथ में विशेष पत्र है, पत्र में भला-बुरा क्या लिखा है कुछ कह नहीं पा रहे हैं। संवेग को रोककर धैर्य धारण किया, फिर जोर से पत्र पढ़कर पूरी सभा को सुनाया। पत्र सुनकर उसमें लिखी सच्ची बात जानकर सब लोग प्रसन्न हो गये।

भरत-शत्रुघ्न उत्सुकता से आये, समाचार सुन पुलकित हो गये

खेलत रहे तहाँ सुधि पाई। आए भरतु सहित हित भाई ॥290:7॥
पूछत अति सनेहँ सकुचाई। तात कहाँ तें पाती आई ॥290:8॥

खेलत रहे तहाँ सुधि पाई = जहाँ खेल रहे थे वहाँ समाचार मिला, *आए भरतु सहित हित भाई* = भरत अपने भाई शत्रुघ्न व मित्रों सहित आ गये, *पूछत अति सनेहँ सकुचाई* = बहुत प्रेम से सकुचाकर पूछते हैं, *तात कहाँ तें पाती आई* = पिता जी पत्र कहाँ से आया है?

कुसल प्रानप्रिय बंधु दोउ अहहिं कहहु केहिं देस ।
सुनि सनेह साने बचन बाची बहुरि नरेस ॥दोहा 290॥

कुसल प्रानप्रिय बंधु दोउ = प्राणों के समान प्रिय दोनों भाई कुशल से तो हैं, *अहहिं कहहु केहिं देस* = अभी वे किस देश में हैं? *सुनि सनेह साने बचन* = स्नेह से सने वचन सुनकर, *बाची बहुरि नरेस* = राजा ने फिर से पत्रिका पढ़ी।

सुनि पाती पुलके दोउ भ्राता। अधिक सनेहु समात न गाता ॥291:1॥
प्रीति पुनीत भरत कै देखी। सकल सभाँ सुखु लहेउ बिसेषी ॥291:2॥

सुनि पाती पुलके दोउ भ्राता = पत्र सुनकर दोनों भाई पुलकित हो गये, *अधिक सनेहु* = इतना स्नेह हो गया कि, *समात न गाता* = शरीर में समाता ही नहीं, *प्रीति पुनीत भरत कै देखी* = भरत जी का पवित्र प्रेम देखकर, *सकल सभाँ सुखु लहेउ बिसेषी* = पूरी सभा को विशेष सुख प्राप्त हुआ।

जब यह पत्रिका पढ़ी जा रही थी उसी समय सूचना पहुँच गयी भरत जी के पास। वे भाई शत्रुघ्न व मित्रों के साथ खेल रहे थे। उन्हें जिज्ञासा हुई, क्या समाचार आया। वे सब पहुँचे दशरथ जी के पास। भरत जी संकोचपूर्वक पूछते हैं, हे तात! यह पत्र कहाँ से आया है, हमारे प्राणप्रिय दोनों भाई किस देश में हैं? कुशलपूर्वक हैं न, हमें बताइये। भरत के संकोच व प्रेम को देखकर महाराज दशरथ को लगा कि अपने से बताना ठीक नहीं। पत्र को फिर से पढ़कर, जो लिखा है इन्हें भी सुनाओ। इस प्रकार वे तीसरी बार पत्र पढ़ते हैं। राम का नाम, उनका वर्णन जहाँ लिखा है उसे बार-बार हमें भी पढ़ना चाहिये। विवाह की बात सुनकर इतना प्रेम उमड़ा कि वह शरीर में समाता ही नहीं है। भरत का राम के प्रति परम पवित्र प्रेम देखकर पूरी सभा हर्षित हो गई।

दूतों को पास में बैठाकर राम-लक्ष्मण के बारे में राजा पूछते हैं

तब नृप दूत निकट बैठारे। मधुर मनोहर बचन उचारे ॥291:3॥
भैआ कहहु कुसल दोउ बारे। तुम्ह नीकें निज नयन निहारे ॥291:4॥
स्यामल गौर धरें धनु भाथा। बय किसोर कौसिक मुनि साथा ॥291:5॥

तब नृप दूत निकट बैठारे = तब राजा ने दूतों को अपने पास बैठाया, *मधुर मनोहर बचन उचारे* = मीठी व मनोहर वाणी से पूछते हैं, *भैआ कहहु कुसल दोउ बारे* = हे भाई बताओ तो दोनों बालक कुशल से तो हैं, *तुम्ह नीकें निज नयन निहारे* = क्या तुमने अपनी आँखों से उन्हें ठीक से देखा है? *स्यामल गौर* = श्यामल व गोरे शरीर वाले हैं, *धरें धनु भाथा* = वे धनुष-बाण लिये रहते हैं, *बय किसोर* = उनकी किशोर अवस्था है, *कौसिक मुनि साथा* = साथ में मुनि विश्वामित्र हैं।

पहिचानहु तुम्ह कहहु सुभाऊ। प्रेम बिबस पुनि पुनि कह राऊ ॥291:6॥
जा दिन तें मुनि गए लवाई। तब तें आजु साँचि सुधि पाई ॥291:7॥
कहहु बिदेह कवन बिधि जाने। सुनि प्रिय बचन दूत मुसुकाने ॥291:8॥

पहिचानहु तुम्ह = तुम उनको पहचानते हो? *कहहु सुभाऊ* = तो उनका स्वभाव बताओ, *प्रेम बिबस पुनि पुनि कह राऊ* = प्रेम के वश में होकर राजा बार-बार यही पूछते हैं, *जा दिन तें मुनि गए लवाई* = जिस दिन से मुनि उन्हें लेकर गये हैं, *तब तें आजु साँचि सुधि पाई* = तब से आज ही हमने सही सूचना पाई है, *कहहु* = यह बताओ कि, *बिदेह कवन बिधि जाने* = जनक जी ने उन्हें कैसे पहचाना, *सुनि प्रिय बचन* = प्रेम भरी बातें सुनकर, *दूत मुसुकाने* = दूत मुस्कुराते हैं।

राम-लक्ष्मण के बारे में विस्तार से जानकारी लेने के लिये महाराज दशरथ ने दूतों को सिंहासन के पास बैठा लिया। इतना अच्छा समाचार लाने के लिये आदर देते हैं। भैया कहकर संबोधन करते हुए मधुर वाणी में दूतों से पूछते हैं, हमारे दोनों बालक किशोर अवस्था के हैं। वे कुशल से तो हैं? क्या तुमने अपनी आँखों से ठीक से उन्हें देखा है? महाराज पहचान बताते हुए कहते हैं कि एक श्याम वर्ण का व दूसरा गौरवर्ण का है। वे हाथ में धुनष बाण लिये हैं। उनके साथ में विश्वामित्र जी हैं। यदि तुमने देखा है तो बताओ उनका स्वभाव कैसा है? राजा प्रेम के विवश वही-वही बातें बार-बार पूछकर कहते हैं कि हम इसलिये पूछ रहे हैं क्योंकि जिस दिन से विश्वामित्र उन्हें लिवा गये हैं तब से आज ही उनकी प्रामाणिक खबर मिली है। पत्र में लिखी हुई पक्की सूचना आज मिली है।

दूत कहते हैं कि आपके पुत्रों का व्यक्तित्व अद्वितीय है

सुनहु महीपति मुकुट मनि तुम्ह सम धन्य न कोउ ।
रामु लखनु जिन्ह के तनय बिस्व बिभूषन दोउ ॥दोहा 291॥

सुनहु महीपति मुकुट मनि = हे राजाओं के मुकुटमणि सुनिये, *तुम्ह सम धन्य न कोउ* = आपके समान धन्य और कोई नहीं है, *रामु लखनु जिन्ह के तनय* = जिनके राम व लक्ष्मण जैसे पुत्र हों, *बिस्व बिभूषन दोउ* = ये दोनों विश्व के विभूषण हैं।

पूछन जोग न तनय तुम्हारे। पुरुषसिंघ तिहु पुर उजिआरे ॥292:1॥
जिन्ह के जस प्रताप कें आगे। ससि मलीन रबि सीतल लागे ॥292:2॥
तिन्ह कहँ कहिअ नाथ किमि चीन्हे। देखिअ रबि कि दीप कर लीन्हे ॥292:3॥

पूछन जोग न तनय तुम्हारे = आपके पुत्र पूछने योग्य नहीं हैं, *पुरुषसिंघ* = वे पुरुषों में सिंह के समान हैं, *तिहु पुर उजिआरे* = तीनों लोकों में वे प्रकाशित हैं, *जिन्ह के जस प्रताप कें आगे* = जिनके यश व प्रताप के सामने, *ससि मलीन* = चन्द्रमा मलिन लगता है, *रबि सीतल लागे* = सूर्य फीका लगता है, *तिन्ह कहँ कहिअ नाथ किमि चीन्हे* = हे नाथ! आप कहते हैं उन्हें हमने पहचाना कैसे? *देखिअ रबि कि दीप कर लीन्हे* = क्या सूर्य को हाथ में दीपक लेकर देखा जाता है?

महाराजा दशरथ के पूछने पर दूत मुस्कुराकर कहते हैं कि हे राजन्! आप तो राजाओं के राजा हैं, मुकुटों के मुकुट हैं, परंतु आपके पुत्र तो तीनों लोकों के भूषण हैं। आप परमधन्य हैं, परम सौभाग्य शाली हैं। राम-लक्ष्मण जैसे आपके पुत्र हैं। राम की महिमा बताते हुए दूत कहते हैं कि वे ऐसे नहीं हैं कि उन्हें अलग से ढूँढ़ा या पहचाना जाये। वे सिंह के समान निर्भय व शक्तिशाली हैं। वे दिव्य प्रकाशमान हैं। उनका तेज तीनो लोकों में प्रकाशित है। उनके यश की तुलना के लिये चन्द्रमा मलिन लगता है। उनके तेज व प्रताप के सामने सूर्य फीका लगता है। वे बहुत यशस्वी व प्रतापी हैं। जैसे सूर्य को देखने के लिये दीपक की आवश्यकता नहीं, वह स्वयं चमकता है, वैसे ही आपके पुत्रों को पहचानने में कोई कठिनाई नहीं, वे सबसे अलग ही दिखते हैं।

सीता स्वयंवर में वीर से वीर राजा शिव-धनुष को हिला नहीं पाये

सीय स्वयंबर भूप अनेका। समिटे सुभट एक तें एका ॥292:4॥
संभु सरासनु काहुँ न टारा। हारे सकल बीर बरिआरा ॥292:5॥
तीनि लोक महँ जे भटिमानी। सभ कै सकति संभु धनु भानी ॥292:6॥

सीय स्वयंबर = सीताजी के स्वयंवर में, *भूप अनेका समिटे* = अनेकों राजा एकत्रित हुए, *सुभट एक तें एका* = जो एक से बढ़कर एक योद्धा थे, *संभु सरासनु* = शिव जी के धनुष को, *काहुँ न टारा* = कोई हिला तक नहीं सका,

हारे सकल बीर बरिआरा = सारे बलवान् वीर हार गये, *तीनि लोक महँ जे भटिमानी* = तीनो लोकों में जो वीरता के अभिमानी थे, *सभ कै सकति* = उन सब की शक्ति, *संभु धनु भानी* = शिव-धनुष ने तोड़ दी।

सीता जी के स्वयंवर में एक से एक शक्तिशाली राजा आये थे। पर वे धनुष को तोड़ना तो दूर, उसे तिल भर हिला भी नहीं पाये। तीनो लोकों के वीरों ने अपनी-अपनी ताकत लगाकर शक्ति को क्षीण कर लिया। शिव-धनुष ने सबकी शक्ति का घमंड तोड़ दिया।

बाणासुर व रावण ने तो शिव-धनुष देखकर ही हार मान ली

सकइ उठाइ सरासुर मेरू। सोउ हियँ हारि गयउ करि फेरू ॥292:7॥
जेहिं कौतुक सिवसैलु उठावा। सोउ तेहि सभाँ पराभउ पावा ॥292:8॥

सकइ उठाइ सरासुर मेरू = बाणासुर जो सुमेरु को भी उठा सकता था, *सोउ हियँ हारि* = वो तो मन में ही हार मानकर, *गयउ करि फेरू* = धनुष की परिक्रमा करके चला गया, *जेहिं कौतुक सिवसैलु उठावा* = जिसने खेल में ही कैलास उठा लिया, *सोउ तेहि सभाँ पराभउ पावा* = वह भी उस सभा में पराजय प्राप्त किया।

सीता स्वयंवर में रावण व बाणासुर के आने की बातों का वर्णन तुलसीदास जी दूतों के द्वारा कहलवाते हैं। बाणासुर इतना शक्तिशाली राजा था कि अपनी शक्ति से वह सुमेरु पर्वत को भी उठा सकता था। वह भी समझ गया कि हम शिव-धनुष को नहीं उठा पायेंगे, हार के डर से बचने के लिये धनुष को बिना उठाये ही उसकी परिक्रमा करके चला गया। रावण ने खेल ही खेल में कैलास पर्वत का उठा लिया था, परंतु वह भी धनुष उठाने का साहस नहीं कर पाया, बिना उठाये ही हार मानकर उस सभा से चला गया।

उस धनुष को राम ने सहज ही तोड़ दिया

तहाँ राम रघुबंसमनि सुनिअ महा महिपाल ।
भंजेउ चाप प्रयास बिनु जिमि गज पंकज नाल ॥दोहा 292॥

तहाँ राम रघुबंसमनि = वहाँ रघुवंशमणि राम ने, *सुनिअ महा महिपाल* = हे महाराज सुनिये, *भंजेउ चाप प्रयास बिनु* = बिना प्रयास के ही धनुष भंग कर दिया, *जिमि गज पंकज नाल* = जैसे हाथी कमल की डंडी को तोड़ डालता है।

दूत कहते हैं, हे महिपाल! उस महान् शिव-धनुष को रघुवंश के मणि श्रीराम ने इतनी सहजता से तोड़ दिया जैसे हाथी कमल की डंडी को तोड़ देता है।

क्रोध से परशुराम आये, पर राम की विनती कर चले गये

सुनि सरोष भृगुनायकु आए। बहुत भाँति तिन्ह आँखि देखाए ॥293:1॥
देखि राम बलु निज धनु दीन्हा। करि बहु बिनय गवनु बन कीन्हा ॥293:2॥

सुनि = धनुष भंग सुनकर, *सरोष भृगुनायकु आए* = क्रोध में भरे हुए परशुराम जी आते हैं, *बहुत भाँति तिन्ह आँखि देखाए* = बहुत प्रकार से वे आँखें दिखलाते हैं, *देखि राम बलु* = राम की शक्ति देखकर, *निज धनु दीन्हा* = अपना धनुष ही दे दिया, *करि बहु बिनय* = बहुत विनती करके, *गवनु बन कीन्हा* = वे वन को चले गये।

शिव-धनुष भंग सुनकर परशुराम बहुत क्रोध में भरकर आये, बहुत प्रकार से डाँटा-फटकारा। फिर उन्हें राम की शक्ति समझ में आयी, हार मानकर अपना धनुष ही राम को दे दिया। हारा हुआ व्यक्ति शस्त्र समर्पित कर देता है। परशुराम राम की विनती करते हुए, क्षमा माँगते हुए, तपस्या करने वन को चले गये।

लक्ष्मण भी बहुत तेजस्वी हैं, दोनों को देखकर अब क्या देखें?

राजन रामु अतुलबल जैसें। तेज निधान लखनु पुनि तैसें ॥293:3॥
कंपहि भूप बिलोकत जाकें। जिमि गज हरि किसोर के ताकें ॥293:4॥
देव देखि तव बालक दोऊ। अब न आँखि तर आवत कोऊ ॥293:5॥

राजन रामु अतुलबल जैसें = हे राजन्! राम जैसे अतुलनीय बलशाली हैं, *तेज निधान लखनु पुनि तैसें* = वैसे ही तेजनिधान लक्ष्मण जी हैं, *कंपहि भूप बिलोकत जाकें* = उनके देखने से राजा वैसे काँप उठते हैं, *जिमि गज हरि*

किसोर के ताकें = जैसे शेर के बच्चे के देखने से हाथी काँप उठते हैं, *देव देखि तव बालक दोऊ* = हे देव! आपके दोनों बालकों को देखकर, *अब न आँखि तर आवत कोऊ* = अब हमारी दृष्टि में कोई चढ़ता ही नहीं है।

दूत कहते हैं जैसे राम तेजनिधान हैं वैसे ही लक्ष्मण भी तेजस्वी हैं। धनुष टूटने के पहले ही उनकी शक्ति सबको पता चल गयी। जैसे शेर के बच्चे के देखने मात्र से हाथी डर से काँप जाता है वैसे ही लक्ष्मण जब राजाओं की तरफ देखते हैं वे काँप उठते हैं। हे देव! इस प्रकार से आपके दोनों बालकों को देखकर अब आँखों को कुछ अच्छा ही नहीं लगता है। इस प्रसंग के पाठ से यह भाव आये कि राम व लक्ष्मण की सुंदरता के आगे सब फीका है।

प्रिय बातों से प्रसन्न हो न्योछावर देते हैं, दूत लेते नहीं

दूत बचन रचना प्रिय लागी। प्रेम प्रताप बीर रस पागी ॥293:6॥
सभा समेत राउ अनुरागे। दूतन्ह देन निछावरि लागे ॥293:7॥
कहि अनीति ते मूदहिं काना। धरमु बिचारि सबहिं सुखु माना ॥293:8॥

दूत बचन रचना प्रिय लागी = दूतों के वचनों की रचना सबको अच्छी लगी, *प्रेम प्रताप बीर रस पागी* = जो कि प्रेम; प्रताप व वीर रस से भरी हुई थी, *सभा समेत राउ अनुरागे* = सभा सहित राजा प्रेम में मग्न हो गये, *दूतन्ह देन निछावरि लागे* = दूतों को न्योछावर देने लगे, *कहि अनीति* = यह नीति के विपरीत है ऐसा कहकर, *ते मूदहिं काना* = दूत हाथों से कान बंद करने लगते हैं, *धरमु बिचारि* = धर्मयुक्त व्यवहार देखकर, *सबहिं सुखु माना* = सभी ने सुख माना।

दूतों ने राम की महिमा का वर्णन प्रेम से किया, वीरता व तेज का वर्णन तेजस्वी व उत्साहित वाणी से किया। महाराज दशरथ सहित पूरी सभा प्रसन्न हो गयी, राम के प्रति प्रेम भाव आ गया। प्रसन्नता में न्योछावर देना परंपरा है, इसलिये दूतों को कुछ देने का प्रयास करने लगे। दूतों ने कहा कि यह तो इतनी अनीति की बात है कि लेना तो दूर, लेने की बात हम कानों से सुनेंगे भी नहीं। हाथों से कानों को मूँद लिया। भारतीय संस्कृति में कन्या पक्ष के लोग वर पक्ष को देते हैं लेते नहीं हैं। दूत कन्या पक्ष से आये हैं, इसलिये वे धर्म का आचरण करते हुए लेने से मना कर देते हैं।

वसिष्ठ जी के पास जाकर पत्र देते हैं, दूत सारी बातें बताते हैं

तब उठि भूप बसिष्ट कहुँ दीन्हि पत्रिका जाइ ।
कथा सुनाई गुरहि सब सादर दूत बोलाइ ॥दोहा 293॥

तब उठि भूप= तब राजा वहाँ से उठकर, *बसिष्ट कहुँ दीन्हि पत्रिका जाइ*= वसिष्ठ जी के पास जाकर उन्हें पत्र देते हैं, *कथा सुनाई गुरहि सब*= गुरु जी को आदरपूर्वक सारी कथा सुनवाई, *सादर दूत बोलाइ*= दूतों को आदरपूर्वक बुलवाकर।

महाराज दशरथ, राम-लक्ष्मण को विश्वामित्र के साथ भेजने को तभी तैयार हुए थे जब वसिष्ठ जी ने समझाया था कि इसका परिणाम अच्छा होगा। इसलिये महाराज स्वयं वसिष्ठ जी के पास जाकर उनके हाथ में पत्रिका रख देते हैं। दूत बाहर खड़े थे, उन्हें बुलवाकर, वसिष्ठ जी के सामने खड़ा कर दिया, कहा इनसे पूछ लीजिये, विश्वामित्र जी का समाचार आया है। महाराज तीन बार पत्र पढ़ चुके थे। दूतों से सारी घटनायें सुन चुके थे, वे चाहते तो स्वयं सब बताते पर नहीं बताया, क्यों? मर्यादा है। अपने से बड़े लोगों के सामने पुत्रों की महिमा नहीं कहनी चाहिये, अपने मुख से प्रशंसा नहीं करनी चाहिये।

गुरु बहुत प्रसन्न, पुण्यात्मा के पास सुख-संपत्ति बिना बुलाये आते हैं

सुनि बोले गुर अति सुखु पाई। पुन्य पुरुष कहुँ महि सुख छाई ॥294:1॥
जिमि सरिता सागर महुँ जाहीं। जद्यपि ताहि कामना नाहीं ॥294:2॥
तिमि सुख संपति बिनहिं बोलाएँ। धरमसील पहिं जाहिं सुभाएँ ॥294:3॥

सुनि बोले गुर अति सुखु पाई= समाचार सुन गुरु सुखी होकर कहते हैं, *पुन्य पुरुष कहुँ*= पुण्यात्मा पुरुषों के लिये, *महि सुख छाई*= पृथ्वी सुखों से भरी है, *जिमि सरिता सागर महुँ जाहीं*= जैसे नदी समुद्र में अपने आप जाकर मिलती है, *जद्यपि ताहि कामना नाहीं*= यद्यपि समुद्र को कामना नहीं है, *तिमि सुख संपति बिनहिं बोलाएँ*= उसी प्रकार सुख व संपत्ति बिना बुलाये ही, *धरमसील पहिं जाहिं सुभाएँ*= धर्मात्मा व्यक्ति के पास पहुँच जाती है।

सब समाचार सुनकर वसिष्ठ जी को बहुत सुख हुआ, वे प्रसन्न हो गये। धर्म का सिद्धांत बताते हुए कहते हैं कि जो लोग पुण्य का कार्य करते हैं उन्हें पृथ्वी

में चारों ओर सुख ही सुख मिलता है। यही पृथ्वी पापी लोगों के लिये नर्क ही नर्क है, जहाँ जायेंगे दु:ख भोगेंगे। सुख-दु:ख अपने-अपने पुण्य व पाप के कारण प्राप्त होते हैं। धर्म की प्रारंभिक शिक्षा है कि यदि सुख चाहते हैं तो पाप न करें। पुण्य करें जिससे पुराने पाप नष्ट हो जायें। परिस्थितियाँ चाहे कितनी प्रतिकूल हों, पुण्यात्मा को सुख मिलेगा। उदाहरण देकर समझाते हैं कि जैसे नदियाँ समुद्र की तरफ अपने आप बहकर जाती हैं, समुद्र नहीं कहता कि तुम आओ, हमारे अंदर जल लाओ। नदियाँ सुख हैं, समुद्र पुण्यात्मा है। उसी प्रकार पुण्यात्मा के पास सुख बिना बुलाये अपने आप पहुँच जाता है।

तुम व कौशल्या दोनों सेवक हो, यही पुण्य कार्य है

तुम्ह गुर बिप्र धेनु सुर सेबी। तसि पुनीत कौसल्या देबी ॥294:4॥

तुम्ह गुर बिप्र धेनु सुर सेबी = तुम गुरु; विप्र; गाय व देवता की सेवा करते हो, *तसि पुनीत कौसल्या देबी* = उसी प्रकार पुण्यात्मा कौशल्या देवी हैं।

वसिष्ठ जी कहते हैं कि तुम व कौशल्या दोनों ही चार लोगों की सेवा में लगे रहते हो, यही तुम्हारे पुण्य हैं। 1. गुरु– जो सबको धर्म की शिक्षा देकर सही मार्ग पर चलने की प्रेरणा देते हैं। 2. विप्र– जो शंकाओं का निवारण करता है, धर्म का सरलीकरण करके आम जन तक पहुँचाता है। 3. गाय– इसका दूध सत्त्व की वृद्धि करता है। 4. देवता– मायने सद्‌गुण। इन चारों की सेवा करना पुण्य का कार्य है। पुरुष ही नहीं बल्कि स्त्री को भी यही करना चाहिये।

जिसके राम जैसे पुत्र हों उसके समान पुण्यात्मा कोई नहीं

सुकृती तुम्ह समान जग माहीं। भयउ न है कोउ होनेउ नाहीं ॥294:5॥
तुम्ह ते अधिक पुन्य बड़ काकें। राजन राम सरिस सुत जाकें ॥294:6॥
बीर बिनीत धरम ब्रत धारी। गुन सागर बर बालक चारी ॥294:7॥

सुकृती तुम्ह समान जग माहीं = तुम्हारे समान पुण्यात्मा संसार में, *भयउ न है कोउ होनेउ नाहीं* = न कोई हुआ है न होगा, *तुम्ह ते अधिक पुन्य बड़ काकें* = तुमसे अधिक पुण्यवान् और कौन होगा! *राजन राम सरिस सुत जाकें* = हे राजन् जिसके राम के समान पुत्र हो, *बीर बिनीत धरम ब्रत*

धारी = वीर; विनम्र; धर्म का व्रत धारण करने वाले, *गुन सागर* = गुणों के सागर, *बर बालक चारी* = तुम्हारे चारों सुंदर बालक हैं।

तीनों काल की बात करते हुए वसिष्ठ कहते हैं कि तुम्हारे समान पुण्यात्मा न हुआ है न भविष्य में होगा। हे राजन्, जिसके यहाँ राम जैसा पुत्र हुआ हो उससे ज्यादा पुण्यवान् और कौन होगा? न केवल राम बल्कि चारों पुत्र वीर के साथ विनम्र भी हैं। धर्म के मार्ग पर चलने वाले हैं। चारों पुत्रों के अंदर गुण ही गुण भरे हैं। इसलिये तुम्हारा तो सदैव कल्याण ही है।

बारात की तैयारी का गुरु आदेश सुन राजा महल गये

तुम्ह कहुँ सर्ब काल कल्याना। सजहु बरात बजाइ निसाना ॥294:8॥

तुम्ह कहुँ सर्ब काल कल्याना = तुम्हारे लिये सभी कालों में कल्याण है, *सजहु बरात बजाइ निसाना* = बाजे बजाकर बारात तैयार करो।

चलहु बेगि सुनि गुर बचन भलेहिं नाथ सिरु नाइ ।
भूपति गवने भवन तब दूतन्ह बासु देवाइ ॥दोहा 294॥

चलहु बेगि सुनि गुर बचन = गुरु के वचन सुनकर राजा तुरंत चलते हैं, *भलेहिं नाथ सिरु नाइ* = सिर झुकाकर प्रणाम करके कहा कि आज्ञा का पालन होगा, *भूपति गवने भवन तब* = राजा राजमहल में जाते हैं, *दूतन्ह बासु देवाइ* = दूतों के रहने की व्यवस्था करवाकर।

अब आदेश देते हुए कहते हैं कि बाजे बजाकर जल्दी बारात की तैयारी करो। बारात लेकर जनकपुर चलना है। राजा ने सिर झुकाकर कहा, जैसी आपकी आज्ञा। सेवकों को बुलाकर दूतों के ठहरने की व्यवस्था करके राजा रानियों को सूचना देने के लिये महल की तरफ चल दिये।

समाचार सुन सब रानियाँ प्रेम में मग्न, पत्र को हृदय से लगाती हैं

राजा सबु रनिवास बोलाई। जनक पत्रिका बाचि सुनाई ॥295:1॥
सुनि संदेसु सकल हरषानीं। अपर कथा सब भूप बखानीं ॥295:2॥

राजा सबु रनिवास बोलाई = राजा ने सारी रानियों को बुलवाया, *जनक पत्रिका बाचि सुनाई* = जनक जी की पत्रिका पढ़कर सुनायी, *सुनि संदेसु सकल हरषानीं* = समाचार सुन सब रानियाँ प्रसन्न हो गयीं, *अपर कथा सब भूप बखानीं* = बाकी और बातें फिर राजा ने विस्तार से बतायीं।

प्रेम प्रफुल्लित राजहिं रानी। मनहुँ सिखिनि सुनि बारिद बानी ॥295:3॥
मुदित असीस देहिं गुर नारीं। अति आनंद मगन महतारीं ॥295:4॥
लेहिं परस्पर अति प्रिय पाती। हृदयँ लगाइ जुड़ावहिं छाती ॥295:5॥

प्रेम प्रफुल्लित राजहिं रानी = प्रेम में प्रफुल्लित रानियाँ ऐसी शोभायमान हो रही हैं, *मनहुँ सिखिनि सुनि बारिद बानी* = मानो मोरनी बादलों की गरज सुनकर प्रसन्न हो, *मुदित असीस देहिं गुर नारीं* = मुनियों की स्त्रियाँ प्रसन्न होकर आशीर्वाद देती हैं, *अति आनंद मगन महतारीं* = मातायें अत्यंत आनंद में मग्न हो जाती हैं, *लेहिं परस्पर अति प्रिय पाती* = उस प्रिय पत्र को एक दूसरे से लेकर, *हृदयँ लगाइ जुड़ावहिं छाती* = हृदय से लगाकर प्रसन्न होती हैं।

राम लखन कै कीरति करनी। बारहिं बार भूपबर बरनी ॥295:6॥
मुनि प्रसादु कहि द्वार सिधाए। रानिन्ह तब महिदेव बोलाए ॥295:7॥

राम लखन कै कीरति करनी = राम-लक्ष्मण का यश व कार्यों को, *बारहिं बार भूपबर बरनी* = राजा बार-बार वर्णन करते हैं, *मुनि प्रसादु* = यह सब मुनि की कृपा है, *कहि द्वार सिधाए* = ऐसा कहकर राजा बाहर गये, *रानिन्ह तब महिदेव बोलाए* = तब रानियों ने विप्रों को बुलवाया।

महाराज दशरथ महल में पहुँचे, सब रानियों को बुलवाया, पत्रिका पढ़कर सुनायी। संदेश सुन सब रानियाँ प्रसन्न हो गयीं। जो बातें पत्र में नहीं थीं, दूतों से सुनी थी, वे सब भी विस्तार से राजा ने बतायीं। ग्रीष्म ऋतु में जैसे मोरनी तप्त रहती है वैसे ही रानियाँ राम-लक्ष्मण की चिंता में परेशान रहती थीं। बादल की गर्जना सुनकर जैसे मोरनी प्रसन्न हो जाती है वैसे ही रानियाँ पत्र सुनकर प्रसन्न हो गयीं। वहाँ पर मुनियों की स्त्रियाँ भी थीं, वे सब भी आशीर्वाद देती हैं। महाराज दशरथ ने जब पत्र कौशल्या के हाथ में दिया तो उन्होंने हृदय से लगा लिया, उनसे कैकेयी व सुमित्रा भी पत्र लेकर हृदय से लगाती हैं। राजा बार-बार राम व लक्ष्मण के वीरता के कार्यों व उनकी कीर्ति का वर्णन करते हैं। फिर कहते हैं यह

सब मुनि की कृपा से ही हुआ है। ऐसा नहीं कहते कि हमारे व तुम्हारे पुण्यों का फल है। पुण्य का अभिमान न करें। दशरथ जी फिर महल के बाहर चले जाते हैं।

रानियों ने विप्रों को दान व भिक्षुओं को न्योछावर दी

दिए दान आनंद समेता। चले बिप्रबर आसिष देता ॥295:8॥

दिए दान आनंद समेता = उन्हें आनंद सहित दान दिया, *चले बिप्रबर आसिष देता* = विप्र लोग आशीर्वाद देते हुए चले गये।

जाचक लिए हँकारि दीन्हि निछावरि कोटि बिधि ।
चिरु जीवहुँ सुत चारि चक्रबर्ति दसरत्थ के ॥सोरठा 295॥

कहत चले पहिरें पट नाना। हरषि हने गहगहे निसाना ॥296:1॥

जाचक लिए हँकारि = फिर भिक्षुकों को बुलवाया, *दीन्हि निछावरि कोटि बिधि* = उन्हें अनेकों प्रकार से न्यौछावरें दी, *चिरु जीवहुँ सुत चारि चक्रबर्ति दसरत्थ के* = चक्रवर्ती राजा दशरथ के चारों पुत्र चिरंजीवी हों।

कहत चले = भिक्षु लोग ऐसा कहते चले गये, *पहिरें पट नाना* = वे सब तरह-तरह वस्त्र पहने थे, *हरषि हने गहगहे निसाना* = बहुत जोर से बाजे बजने लगे।

रानियों ने विप्रों को बुलवाकर दान दिया। जहाँ प्रसन्नता की बात होती है वहाँ व्यक्ति को कुछ न कुछ देना चाहिये। विप्र आशीर्वाद देकर चले गये। फिर याचकों व भिक्षुओं को बुलवाया, उन्हें क्या दिया? न्योछावर। विप्र न्योछावर नहीं लेते। तुलसीदास जी के एक-एक शब्द समझने लायक हैं। अनेक प्रकार की न्योछावर पाकर भिक्षु प्रसन्न होकर आशीर्वाद देते हैं कि चक्रवर्ती राजा दशरथ के चारों पुत्र चिरंजीवी हों। इस प्रकार कहते हुए, नये-नये वस्त्र पहनकर राजभवन से बाहर निकले।

नगर में सूचना मिलते ही सब प्रसन्न, भारी उत्साह छा गया

समाचार सब लोगन्ह पाए। लागे घर घर होन बधाए ॥296:2॥
भुवन चारिदस भरा उछाहू। जनकसुता रघुबीर बिआहू ॥296:3॥

समाचार सब लोगन्ह पाए = सब लोगों ने जब यह समाचार पाया, *लागे घर घर होन बधाए* = घर-घर बधावे होने लगे, *भुवन चारिदस भरा उछाहू* = चौदहों भुवनों में उत्साह भर गया कि, *जनकसुता रघुबीर बिआहू* = सीता जी का राम से विवाह होगा।

इतने जोर से बाजे बजाये गये कि नगर में सबको सुनाई दे। लोगों ने पूछा क्यों बाजे बजे? तो बताया गया कि जनकपुर से दूत ने आकर सूचना दी है कि प्रभु राम का विवाह सीता जी से होना है। यह बात चौदहों भुवनों में फैल गई। घरों में बधाव बजने लगे। चारों तरफ उत्साह ही उत्साह छा गया।

प्रेम प्रगट करने के लिये पूरे नगर में मांगलिक सजावट

सुनि सुभ कथा लोग अनुरागे। मग गृह गलीं सँवारन लागे ॥296:4॥
जद्यपि अवध सदैव सुहावनि। राम पुरी मंगलमय पावनि ॥296:5॥
तदपि प्रीति कै प्रीति सुहाई। मंगल रचना रची बनाई ॥296:6॥

सुनि सुभ कथा लोग अनुरागे = यह शुभ समाचार सुन लोग प्रेम-मग्न हो गये, *मग* = रास्ते, *गृह* = घर, *गलीं* = छोट रास्ते, *सँवारन लागे* = सफाई करके सजाने लगे, *जद्यपि अवध सदैव सुहावनि* = यद्यपि अयोध्या नगरी सदैव सुंदर है, *राम पुरी मंगलमय पावनि* = राम की पुरी है इसलिये मंगल व पवित्र है, *तदपि प्रीति कै प्रीति सुहाई* = फिर भी यह प्रेम प्रगट करने का सुंदर तरीका है, *मंगल रचना रची बनाई* = जिसके कारण लोग मांगलिक रचना करते हैं।

समाचार सुन सबके मन में इतना प्रेम उमड़ा कि लोगों ने न केवल अपने-अपने घर बल्कि रास्ते व गलियों की साफ सफाई कर सजा दिया। अब प्रश्न उठता है कि क्या अयोध्या में पहले गंदगी थी? तुलसीदास जी कहते हैं कि अयोध्या तो राम की पुरी है। यह सदैव सुंदर, साफ-सुथरी, पवित्र व मंगलमय रहती है। यह तो प्रीति की रीति है, जब हृदय में प्रेम होता है तो मांगलिक सजावट करते हैं।

मांगलिक पदार्थों से सजावट, सुगंधित द्रव्य का छिड़काव

ध्वज पताक पट चामर चारू। छावा परम बिचित्र बजारू ॥296:7॥
कनक कलस तोरन मनि जाला। हरद दूब दधि अच्छत माला ॥296:8॥

ध्वज पताक पट चामर चारू = झंडे; पताके; वस्त्रों; सुंदर चँवरों से, *छावा परम बिचित्र बजारू* = बाजार की विचित्र सजावट की गई, *कनक कलस तोरन मनि जाला* = स्वर्ण कलश, तोरण, मणियों की झालरें, *हरद दूब दधि अच्छत माला* = हल्दी; दूब; दही; अक्षत व मालाओं से सजावट होने लगी।

मंगलमय निज निज भवन लोगन्ह रचे बनाइ ।
बीथीं सींचीं चतुरसम चौकें चारु पुराइ ॥दोहा 296॥

मंगलमय निज निज भवन लोगन्ह रचे बनाई = लोगों ने अपने-अपने घरों को सजाकर मंगलमय बना लिया, *बीथीं सींचीं चतुरसम* = सड़कों को सुंगधित द्रव्यों के मिश्रण से सींचा गया, *चौकें चारु पुराइ* = द्वारों पर सुंदर चौक बना दीं।

स्वर्ण कलश, तोरण द्वार, ध्वजा, पताका, वस्त्र, चँवर, मणियों की चमचमाती झालरों से खूब सजावट की गई है। पूजन सामग्री जैसे हल्दी, दूब, दही, चावल इत्यादि सजायी जाने लगी। पूरा बाजार सज कर तैयार हो गया है। कपूर, केसर, चंदन व कुमकुम, इन चारों सुगंधित पदार्थों के मिश्रण को चतुरसम कहते हैं, इनसे जब गलियाँ सींच दी गईं तो चारों ओर सुगंध फैल गई। द्वारों पर चौकें बनाई गईं। इस प्रकार पूरा नगर सजकर तैयार हो गया।

सोलह श्रृंगार में सजकर स्त्रियाँ मंगल गीत गाने लगीं

जहँ तहँ जूथ जूथ मिलि भामिनि। सजि नव सप्त सकल दुति दामिनि ॥297:1॥
बिधुबदनीं मृग सावक लोचनि। निज सरूप रति मानु बिमोचनि ॥297:2॥
गावहिं मंगल मंजुल बानीं। सुनि कल रव कलकंठि लजानीं ॥297:3॥

जहँ तहँ जूथ जूथ मिलि भामिनि = जहाँ-तहाँ बहुत सी स्त्रियाँ मिलकर, *सजि नव सप्त* = नौ + सात = सोलह श्रृंगार में सजकर, *सकल दुति दामिनि* = सभी बिजली जैसे चमकती हुईं, *बिधुबदनीं* = चन्द्रमा के समान सुंदर मुख वाली, *मृग सावक लोचनि* = मृग के बच्चे के समान नेत्रों वाली, *निज सरूप रति मानु बिमोचनि* = अपने सुंदर स्वरूप से रति के सौंदर्य को फीका करते हुए, *गावहिं मंगल मंजुल बानीं* = मधुर वाणी से मंगल गीत गा रही हैं, *सुनि कल रव कलकंठि लजानीं* = जिनके सुंदर स्वर को सुनकर कोयल भी लजा जाये।

जहाँ-तहाँ बहुत सी स्त्रियाँ एकत्रित हो गईं। वे सब 16 शृंगार में सजी हैं। बिजली जैसी उनकी चमक है। चन्द्रमा के समान सुंदर मुख है। मृग के बच्चे जैसे सुंदर नेत्र हैं। उनके सौंदर्य के सामने कामदेव की पत्नी रति का सौंदर्य भी फीका लगता है। स्त्रियाँ केवल सजी नहीं हैं बल्कि इतनी मधुर वाणी में प्रसन्नता सूचक मंगलगीत गा रहीं हैं कि कोयल की वाणी भी फीकी लग रही है।

राजभवन में सुंदर सजावट, मंगलगीत, वेदध्वनि हो रही है

भूप भवन किमि जाइ बखाना। बिस्व बिमोहन रचेउ बिताना ॥297:4॥
मंगल द्रब्य मनोहर नाना। राजत बाजत बिपुल निसाना ॥297:5॥

भूप भवन किमि जाइ बखाना = राजा के महल का तो वर्णन कैसे करें? *बिस्व बिमोहन रचेउ बिताना* = विश्व को मोहित करने वाला मंडप तैयार किया गया है, *मंगल द्रब्य मनोहर नाना राजत* = तरह तरह के सुंदर मंगल द्रव्य सुशोभित हैं, *बाजत बिपुल निसाना* = बहुत तरह के बाजे बज रहे हैं।

कतहुँ बिरिद बंदी उच्चरहीं। कतहुँ बेद धुनि भूसुर करहीं ॥297:6॥
गावहिं सुंदरि मंगल गीता। लै लै नामु रामु अरु सीता ॥297:7॥

कतहुँ बिरिद बंदी उच्चरहीं = कहीं बंदीजन कुल की कीर्ति गा रहे हैं, *कतहुँ बेद धुनि भूसुर करहीं* = कहीं पर विप्र वेद की ध्वनि कर रहे हैं, *गावहिं सुंदरि मंगल गीता* = सुंदर व मंगलगीत गाये जा रहे हैं, *लै लै नामु रामु अरु सीता* = राम व सीता का नाम ले-लेकर।

महाराज दशरथ के महल का क्या वर्णन करें? वहाँ इतना सुंदर मंडप बनाया गया कि विश्व में कोई भी उसे देखकर मोहित हो जाये। जैसा जनकपुर में था वैसा ही यहाँ भी बना है। बार-बार पूरा वर्णन नहीं किया है। जनकपुर में लक्ष्मी का अवतार है तो अयोध्या में लक्ष्मीपति ने अवतार लिया है। मंगल पदार्थ एकत्रित किये गये। खूब बाजे बज रहे हैं। बंदी, मागध, सूत वंश की महिमा को कविता बनाकर सुनाते हैं। विप्र लोग वेद मंत्रों का उच्चारण कर रहे हैं। महिलाओं का संगीत चल रहा है, राम व सीता का नाम ले-लेकर मंगलगीत गा रही हैं।

उत्साह राजभवन में समा नहीं रहा, निकलकर चारों ओर फैल गया

बहुत उछाहु भवनु अति थोरा। मानहुँ उमगि चला चहु ओरा ॥297:8॥

बहुत उछाहु = उत्साह इतना बड़ा है, *भवनु अति थोरा* = कि राजभवन बहुत छोटा पड़ रहा है, *मानहुँ उमगि चला चहु ओरा* = इसलिये वहाँ से निकलकर चारों ओर फैल गया है।

सोभा दसरथ भवन कइ को कबि बरनै पार ।
जहाँ सकल सुर सीस मनि राम लीन्ह अवतार ॥दोहा 297॥

सोभा दसरथ भवन कइ = महाराज दशरथ के महल की शोभा का, *को कबि बरनै पार* = वर्णन कौन कवि कर सकता है? *जहाँ सकल सुर सीस मनि* = जहाँ समस्त देवताओं के शिरोमणि, *राम लीन्ह अवतार* = राम ने अवतार लिया हो।

राजभवन है तो बहुत विशाल पर उत्साह उससे भी ज्यादा है। जब वह राजभवन में समा नहीं रहा तो बाहर निकलकर चारों ओर फैल गया। पूर नगर में सब तरफ उत्साह ही उत्साह है। कहते हैं कि जहाँ देवताओं के शिरोमणि प्रभु राम ने अवतार लिया हो, उस भवन की सुंदरता का वर्णन भला कौन कवि कर सकता है।

4. बारात की तैयारी, राम की बारात अयोध्या से चल दी

(दोहा 298 से 304)

बारात चलने की तैयारी प्रारंभ। नगर के बाहर मैदान में बारात एकत्रित होती है। योद्धाओं की तरह सजकर युवक सुंदर घोड़ों पर बैठते हैं। रथों पर रथी बैठे हैं। हाथी पर बुजुर्ग बैठते हैं। विप्र लोग पालकी में बैठते हैं। मागध, भाट, बंदी, सेवक इत्यादि भी यथा-योग्य सवारी में तैयार हैं। पूरी बारात व सामान जब तैयार हो गया तब दिव्य रथ पर महाराज दशरथ व तेजस्वी रथ पर वसिष्ठ जी बैठते हैं। दशरथ जी के शंख बजाते ही पूरी बारात जनकपुर की ओर चल देती है। रास्ते में सभी तरह के शकुन प्रगट होकर अपने को सच साबित करते हैं। इस सुंदर प्रसंग के पाठ करते समय अपने आपको बारात में शामिल करने का प्रयास करें, तभी आनंद है।

महाराज ने भरत से कहा कि हाथी-घोड़े-रथ सजाओ

भूप भरत पुनि लिए बोलाई। हय गय स्यंदन साजहु जाई ॥298:1।
चलहु बेगि रघुबीर बराता। सुनत पुलक पूरे दोउ भ्राता ॥298:2॥
भरत सकल साहनी बोलाए। आयसु दीन्ह मुदित उठि धाए ॥298:3॥

भूप भरत पुनि लिए बोलाई = राजा ने भरत को बुलवाकर कहा कि, *हय* = हाथी, *गय* = घोड़े, *स्यंदन* = रथ, *साजहु जाई* = को जाकर सजाओ, *चलहु बेगि रघुबीर बराता* = राम की बारात लेकर शीघ्र चलना है, *सुनत पुलक पूरे दोउ भ्राता* = यह सुनते ही दोनों भाई पुलकित हो गये, *भरत सकल साहनी बोलाए* = भरत ने हाथी-घोड़ों की देखभाल करने वालों को बुलवाया, *आयसु दीन्ह* = उन्हें सजावट का आदेश दिया, *मुदित उठि धाए* = वे प्रसन्न होकर शीघ्रता से चल दिये।

महाराज दशरथ ने बारात की तैयारी शुरू की, भरत जी को बुलवाकर कहा कि हाथी, घोड़े, रथ को सजाकर तैयार करो। राम की बारात शीघ्र ही लेकर चलना है। यह सुनते ही दोनों भाई बहुत प्रसन्न हो गये। हाथी-घोड़ों की देखभाल करने वालों को साहनी कहते हैं। भरत जी ने इन सबको बुलवाकर आज्ञा दी कि अच्छे से सजावट करके हाथी-घोड़े तैयार करो। वे सब प्रसन्न होकर सजावट करने चल दिये।

स्वस्थ, सुंदर, तेज गति वाले घोड़े सजाकर तैयार किये गये

रचि रुचि जीन तुरग तिन्ह साजे। बरन बरन बर बाजि बिराजे ॥298:4॥
सुभग सकल सुठि चंचल करनी। अय इव जरत धरत पग धरनी ॥298:5॥
नाना जाति न जाहिं बखाने। निदरि पवनु जनु चहत उड़ाने ॥298:6॥

रचि रुचि जीन तुरग तिन्ह साजे = उन्होंने यथा-योग्य जीनें कसकर घोड़े सजाये, *बरन बरन बर बाजि बिराजे* = रंग-रंग के उत्तम घोड़े शोभित हो गये, *सुभग सकल सुठि चंचल करनी* = सभी घोड़े स्वस्थ, सुंदर व तेज गति वाले हैं, *अय* = लोहा, *इव* = जैसे, *जरत* = जलते हुए, जैसे कोई जलते हुए लोहे पर पैर रखे, *धरत पग धरनी* = इस प्रकार वे पृथ्वी पर पैर रखते हैं, *नाना जाति न जाहिं बखाने* = अनेकों जातियाँ हैं जिनका वर्णन नहीं हो सकता, *निदरि पवनु जनु चहत उड़ाने* = हवा का निरादर करके उससे तेज चलना चाहते हैं।

स्वस्थ, सुंदर, तेज गति वाले उत्तम रंग-बिरंगे घोड़ों को जीनें कसकर सजाकर तैयार किया गया। जैसे जलते हुए लोहे पर पैर स्थिर नहीं रख सकते वैसे ही इन चंचल घोड़ों के पैर जमीन पर स्थिर नहीं रहते, वे पैरों को बार-बार उठाकर चलने के लिये तत्पर रहते हैं। अनके जाति के हैं, कोई छोटे हैं कोई बड़े हैं। ये वायु से तेज गति में चलने को तैयार हैं।

घोड़ों पर सज-धज कर राजकुमार सवार हुए

तिन्ह सब छयल भए असवारा। भरत सरिस बय राजकुमारा ॥298:7॥
सब सुंदर सब भूषनधारी। कर सर चाप तून कटि भारी ॥298:8॥

तिन्ह = उन घोड़ों पर, *सब छयल भए असवारा* = सब युवक सवार हुए, *भरत सरिस बय राजकुमारा* = जो भरत की अवस्था वाले राजकुमार हैं, *सब सुंदर सब भूषनधारी* = सभी सुंदर हैं व आभूषण पहने हैं, *कर सर चाप* = हाथ में धनुष-बाण लिये हैं, *तून कटि भारी* = कमर में भारी तरकस बाँधे हैं।

छरे छबीले छयल सब सूर सुजान नबीन ।
जुग पदचर असवार प्रति जे असिकला प्रबीन ॥दोहा 298॥

छरे = शक्तिशाली हैं, *छबीले* = सुंदर हैं, *छयल* = युवक हैं, *सब सूर* = सभी वीर हैं, *सुजान* = समझदार व, *नबीन* = नवीन आयु के हैं, *जुग पदचर* = दो पैदल सवारी हैं, *असवार प्रति* = प्रत्येक घुड़सवार के साथ, *जे असिकला प्रबीन* = जो तलवार चलाने की कला में प्रवीण हैं।

बाँधें बिरद बीर रन गाढ़े। निकसि भए पुर बाहेर ठाढ़े ॥299:1॥
फेरहिं चतुर तुरग गति नाना। हरषहिं सुनि सुनि पनव निसाना ॥299:2॥

बाँधें बिरद बीर रन गाढ़े = वे भयंकर युद्ध की तैयारी जैसे वेष बनाये हैं, *निकसि भए पुर बाहेर ठाढ़े* = महल से निकलकर नगर के बाहर एकत्रित हो गये, *फेरहिं चतुर तुरग गति नाना* = ये घोड़ों को तरह-तरह की गति से चला रहे हैं, *हरषहिं सुनि सुनि पनव निसाना* = वे भेरी तथा नगाड़े की आवाज सुनकर प्रसन्न हो रहे हैं।

वहाँ पर युवा, प्रौढ़ व वृद्ध सभी आयु के लोग हैं। घोड़ों पर सवार कौन होंगे? युवक। ये कैसे हैं? भरत की आयु के हैं। बहुत सुंदर हैं। सुंदर वस्त्र व आभूषण

पहने हैं। हाथ में धनुष-बाण लिये हैं। कमर में भारी तरकस बाँधे हैं। ये युवक शक्तिशाली, वीर व समझदार हैं। प्रत्येक घुड़सवार के साथ हाथों में तलवार लिये दो लोग पैदल चल रहे हैं जो तलवार कला में निपुण हैं। क्षत्रियों का यही श्रृंगार है। लगता है भयंकर युद्ध के लिये जा रहे हैं। ये लोग घोड़ों पर बैठकर नगर के बाहर एकत्रित होने लगे। जैसे-जैस बाजे बजते हैं उसी की धुन पर घोड़ों को नचा रहे हैं। उछल-कूद कर रहे हैं। सब प्रसन्न हो रहे हैं।

रथों को सजाकर, अश्वमेध यज्ञ वाले घोड़े लगाये गये

रथ सारथिन्ह बिचित्र बनाए। ध्वज पताक मनि भूषन लाए ॥299:3॥
चवँर चारु किंकिनि धुनि करहीं। भानु जान सोभा अपहरहीं ॥299:4॥

रथ सारथिन्ह बिचित्र बनाए = सारथियों ने रथों को विचित्र प्रकार से सजाया, *ध्वज पताक मनि भूषन लाए* = ध्वजा; पताका व मणियों की झालर लगायीं, *चवँर चारु* = सुंदर चँवर लटक रहे हैं, *किंकिनि धुनि करहीं* = रथ में लगी घंटियाँ बज रही हैं, *भानु जान* = सूर्य के रथ की, *सोभा अपहरहीं* = सुंदरता का हरण करने वाले मायने उससे भी सुंदर हैं।

सावँकरन अगनित हय होते। ते तिन्ह रथन्ह सारथिन्ह जोते ॥299:5॥
सुंदर सकल अलंकृत सोहे। जिन्हहि बिलोकत मुनि मन मोहे ॥299:6॥
जे जल चलहिं थलहि की नाईं। टाप न बूड़ बेग अधिकाईं ॥299:7॥

सावँकरन = काले कान वाले सफेद घोड़े, *अगनित हय होते* = जो यज्ञ में काम आते है ऐसे अनेकों घोड़े हैं, *ते तिन्ह रथन्ह सारथिन्ह जोते* = सारथियों ने उन्हें रथों में लगा दिया, *सुंदर सकल* = वे सभी सुंदर हैं, *अलंकृत सोहे* = सजे सजाये इतने शोभायमान हैं, *जिन्हहि बिलोकत मुनि मन मोहे* = कि उन्हें देखकर मुनियों का मन भी मोहित हो जाये, *जे जल चलहिं थलहि की नाईं* = वे जल पर भी जमीन की तरह चलते हैं, *टाप न बूड़ बेग अधिकाईं* = इतनी तेजी से चलते हैं कि टाप पानी में डूब ही नहीं पाती।

रथ को चलाने वाले सारथी कहलाते हैं। इन्होंने अपने-अपने रथों को ध्वज, पताका व मणियों की झालर से खूब सजाया है। चँवर लटक रही है। छोटी-छोटी घंटियाँ लगी हैं जो रथ चलने से बजती हैं। अनेकों सफेद घोड़े हैं जिनके

कान काले हैं, इन्हें श्यामकर्ण कहते हैं, ये अश्वमेध यज्ञ में काम आते हैं। इस प्रकार के सर्वश्रेष्ठ घोड़ों को अलंकृत करके रथों में लगाया गया है। इनकी सुंदरता को देखकर मुनियों के मन भी मोहित हो जाते हैं। इनकी विशेषता क्या है? ये जल पर भी जमीन की तरह चलते हैं, इतनी तेज गति है कि पानी के ऊपर से वेग से निकल जाते हैं। टाप पानी में डूब ही नहीं पाते।

रथी को बैठाकर रथ नगर के बाहर एकत्रित हुए

अस्त्र सस्त्र सबु साजु बनाई। रथी सारथिन्ह लिए बोलाई ॥299:8॥

अस्त्र सस्त्र सबु साजु बनाई = अस्त्र व शस्त्र सब सजाकर रख दिये गये हैं, *रथी सारथिन्ह लिए बोलाई* = फिर सारथियों ने रथ में बैठने वालों को बुलवाया।

चढ़ि चढ़ि रथ बाहेर नगर लागी जुरन बरात ।
होत सगुन सुंदर सबहि जो जेहि कारज जात ॥दोहा 299॥

चढ़ि चढ़ि रथ = वे सब रथ में चढ़े, *बाहेर नगर लागी जुरन बरात* = नगर के बाहर रथ भी एकत्रित होने लगे, *होत सगुन सुंदर सबहि* = सभी को सुंदर शकुन होते हैं, *जो जेहि कारज जात* = जो जिस कार्य से जाता है।

क्षत्रियों की बारात है, इसलिये अस्त्र-शस्त्र रखकर सारथियों ने रथ में बैठने वाले रथियों को बुलाया। एक हजार लोगों से एक साथ युद्ध करे वह रथी, दस हजार लोगों से युद्ध करने वाला महारथी कहलाता है। रथ भी नगर के बाहर एकत्रित होने लगे। जो जिस कार्य के लिये जाता है उसे सुंदर शकुन होते हैं।

सजे हुए मतवाले हाथियों के झुंड में बुजुर्ग बैठकर चले

कलित करिबरन्हि परीं अँबारीं। कहि न जाहिं जेहि भाँति सँवारीं ॥300:1॥
चले मत्त गज घंट बिराजी। मनहुँ सुभग सावन घन राजी ॥300:2॥

कलित करिबरन्हि = बहुत सुंदर हाथी हैं, *परीं अँबारीं* = हाथी के ऊपर बैठने के लिये जो अंबारी रखी है, *कहि न जाहिं जेहि भाँति सँवारीं* = उसे जिस प्रकार सजाया गया है उसका वर्णन नहीं किया जा सकता है, *चले मत्त गज* = मतवाले हाथी चल रहे हैं, *घंट बिराजी* = दोनों तरफ घण्टें

लटक रहे हैं, *मनहुँ सुभग सावन घन राजी* = मानो सावन के महीने में काले बादल आकाश में गरज रहे हैं।

बहुत सुंदर हाथी हैं। उनके ऊपर रखी आँवरी को इतना सुंदर सजाया गया है कि उसका वर्णन नहीं किया जा सकता है। परंपरा के अनुसार हाथियों के दोनों ओर घंटे लटक रहे हैं जो उनके आने की आहट पहले ही बता देते हैं जिससे लोग किनारे हो जायें। काले-काले हाथी इस प्रकार दिखाई देते हैं मानो सावन में आकाश में बादल आ गये हों, घंटों की ध्वनि बादलों के घड़घड़ाने जैसी लगती है। ज्यादा आयु के लोगों को हाथी पर बैठाया गया है।

विप्र लोग खुली पालकी में चले, लगा वेद-मंत्र ही बैठे हैं

बाहन अपर अनेक बिधाना। सिबिका सुभग सुखासन जाना ॥300:3॥
तिन्ह चढ़ि चले बिप्रबर बृंदा। जनु तनु धरें सकल श्रुति छंदा ॥300:4॥

बाहन अपर अनेक बिधाना = और भी अनेक प्रकार के वाहन हैं, *सिबिका सुभग सुखासन जाना* = सुंदर पालकी है जिस पर कुर्सी लगी है, *तिन्ह चढ़ि चले बिप्रबर बृंदा* = उन पर विप्रों के समूह बैठकर चल दिये, *जनु तनु धरें सकल श्रुति छंदा* = मानो वेदों के छंद शरीर धारण करके स्वयं बैठे हों।

और भी अनेकों तरह-तरह की सवारियाँ हैं। सुंदर पालकी में कुर्सी लगायी गयी। दोनों ओर बाँस से बाँधकर कहारों ने उसे उठा लिया। इस पर विप्र लोग बैठे हैं। क्षत्रियों की सँवारी हाथी-घोड़े हैं, विप्र पालकी में चलते हैं। विप्र भी सज-धज कर इस प्रकार बैठे हैं मानों वेदों के मंत्रों ने शरीर धारण कर लिया हो। सभी विप्र वैदिक ज्ञान रखने वाले हैं।

मागध, सूत, बंदी भी यथायोग्य सवारी में चल दिये

मागध सूत बंदि गुनगायक। चले जान चढ़ि जो जेहि लायक ॥300:5॥

मागध सूत बंदि गुनगायक = मागध; सूत व बंदी जो गुणों को गान करते हैं, *चले जान चढ़ि* = वे भी वाहनों में बैठकर चल दिये, *जो जेहि लायक* = जो जिस योग्य था वह वैसे वाहन में चला।

बारात के साथ में मागध, सूत व बंदीजन जो जय-जयकार करते हैं, वंश की कीर्ति गाते हुए चल दिये। जिसकी जैसी आयु थी उसी प्रकार की सवारी पर वे चलते हैं।

सामान लेकर गाड़ियाँ व कहार चले, सेवक भी चलते हैं

बेसर ऊँट बृषभ बहु जाती। चले बस्तु भरि अगनित भाँती ॥300:6॥
कोटिन्ह काँवरि चले कहारा। बिबिध बस्तु को बरनै पारा ॥300:7॥
चले सकल सेवक समुदाई। निज निज साजु समाजु बनाई ॥300:8॥

बेसर ऊँट बृषभ बहु जाती = खच्चर; ऊँट व बैल जो अनेकों प्रकार के थे, *चले बस्तु भरि अगनित भाँती* = वे अनेकों प्रकार की वस्तुयें लादकर चल दिये, *कोटिन्ह* = करोड़ों, *काँवरि* = कंधे के ऊपर सामान रखने का साधन, *चले कहारा* = कंधे पर रखकर पैदल चलने वाले, *बिबिध बस्तु को बरनै पारा* = उनमें अनेकों प्रकार की वस्तुयें थीं जिनका वर्णन नहीं किया जा सकता, *चले सकल सेवक समुदाई* = सब सेवकों का समूह भी चला, *निज निज साजु समाजु बनाई* = वे सब साफ वस्त्र पहनकर अपने समाज के साथ चले।

खच्चर, बैल, ऊँट, ये सब सामान ले जाने वाले पशु हैं। इनकी अपनी-अपनी गाड़ियाँ हैं उनमें अनेकों प्रकार का सामान लदा है। उसे लेकर ये चल दिये। कंधे के ऊपर काँवर में सामान रखकर पैदल चलने वाले कहार भी साथ में चल रहे हैं। इनमें बहुत सारी वस्तुयें हैं जिनका वर्णन नहीं किया जा सकता है। इसके अलावा बहुत से सेवक लोग भी हैं जो साफ-सुथरे वस्त्र पहनकर चलते हैं, उनका समाज अलग है।

सबके मन में राम-लक्ष्मण के दर्शन की अभिलाषा है

सब कें उर निर्भर हरषु पूरित पुलक सरीर ।
कबहिं देखिबे नयन भरि रामु लखनु दोउ बीर ॥दोहा 300॥

सब कें उर निर्भर हरषु = सभी का मन हर्ष से भरा है, *पूरित पुलक सरीर* = शरीर में रोमांच हो रहा है, *कबहिं देखिबे नयन भरि* = सब सोचते हैं वह

समय कब आयेगा जब अच्छी तरह से देखेंगे, *रामु लखनु दोउ बीर* = राम व लक्ष्मण दोनों वीरों को।

सबका हृदय हर्ष से भरा है, शरीर में रोमांच हो रहा है। सब सोचते हैं वह समय कब आयेगा जब प्रभु राम व लक्ष्मण को अच्छी तरह से अपनी आँखों से देखेंगे। बहुत समय हो गया उन्हें गये हुए, दर्शन की लालसा है।

नगर के बाहर बारात तैयार, भारी शोरगुल, कुछ सुनायी नहीं देता

गरजहिं गज घंटा धुनि घोरा। रथ रव बाजि हिंस चहु ओरा ॥301:1॥
निदरि घनहि घुर्म्मरहिं निसाना। निज पराइ कछु सुनिअ न काना ॥301:2॥

गरजहिं गज = हाथी गरज रहे हैं, *घंटा धुनि घोरा* = उनके घंटों की भयंकर ध्वनि हो रही है, *रथ रव* = रथों की घरघराहट, *बाजि हिंस* = घोड़ों की हिनहिनाहट, *चहु ओरा* = चारों ओर हो रही है, *निदरि घनहि* = बादलों का निरादर करके, *घुर्म्मरहिं निसाना* = तेज बाजे बज रहे हैं, *निज पराइ कछु सुनिअ न काना* = अपनी या दूसरों की कोई बात कान से सुनायी नहीं दे रही है।

बारात नगर के बाहर तैयार है, अभी चली नहीं है, वहाँ किस प्रकार का शोर हो रहा है उसका वर्णन करते हैं। हाथी गरज रहे हैं, घंटों की भयंकर ध्वनि है, रथों के चलने से घरघराहट है, घोड़ों की हिनहिनाहट है, बादलों की घड़घड़ाहट से भी तेज बाजे बज रहे हैं। चारों ओर इतना शोर है कि दूसरों की क्या, अपनी ही आवाज नहीं सुनायी दे रही है।

राज-द्वार पर भारी भीड़, स्त्रियाँ छज्जों से देख रही हैं, आरती करती हैं

महा भीर भूपति के द्वारें। रज होइ जाइ पषान पबारें ॥301:3॥
चढ़ी अटारिन्हि देखहिं नारीं। लिएँ आरती मंगल थारीं ॥301:4॥
गावहिं गीत मनोहर नाना। अति आनंदु न जाइ बखाना ॥301:5॥

महा भीर भूपति के द्वारें = राजा के द्वार पर इतनी भीड़ हो रही है, *रज होइ जाइ पषान पबारें* = कि वहाँ पत्थर फेंका जाये तो वह पिसकर धूल बन जाये, *चढ़ी अटारिन्हि देखहिं नारीं* = स्त्रियाँ छज्जों से देख रही हैं, *लिएँ आरती*

मंगल थारीं = वहीं से मंगल थाली लेकर आरती कर रही हैं, *गावहिं गीत मनोहर नाना* = अनेक तरह के मंगल गीत गा रही हैं, *अति आनंदु न जाइ बखाना* = इतना आनंद है कि वर्णन नहीं किया जा सकता है।

महाराज दशरथ के द्वार पर इतनी ज्यादा भीड़ है कि यदि कोई पत्थर फेंके तो लोग उस पर इतने पैर रखेंगे कि वह पिसकर धूल बन जायेगा। भीड़ में सब लोग चल रहे हैं। स्त्रियाँ घरों के छज्जों से सब देख रही हैं, वहीं से मंगल थाली लेकर आरती करती हैं, अनेक तरह के मंगल गीत गा रही हैं। वे सब बहुत आनंदित हैं।

तेजपुंज रथ में वसिष्ठ जी, राजसी रथ में दशरथ जी बैठे

तब सुमंत्र दुइ स्यंदन साजी। जोते रबि हय निंदक बाजी ॥301:6॥
दोउ रथ रुचिर भूप पहिं आने। नहिं सारद पहिं जाहिं बखाने ॥301:7॥
राज समाजु एक रथ साजा। दूसर तेज पुंज अति भ्राजा ॥301:8॥

तब सुमंत्र दुइ स्यंदन साजी = इसके बाद मंत्री सुमंत्र ने दो रथ सजवाये, *जोते रबि हय निंदक बाजी* = उसमें सूर्य के घोड़े से भी अच्छे घोड़े लगवाये, *दोउ रथ रुचिर भूप पहिं आने* = उन दोनों सुंदर रथों को राजा के पास लाये, *नहिं सारद पहिं जाहिं बखाने* = सरस्वती भी इनकी महिमा नहीं गा सकतीं, *राज समाजु एक रथ साजा* = एक रथ में राजा का समान सजाकर रखा गया, *दूसर तेज पुंज अति भ्राजा* = दूसरा रथ प्रकाश का पुंज और बहुत शोभायमान था।

तेहिं रथ रुचिर बसिष्ठ कहुँ हरषि चढ़ाइ नरेसु ।
आपु चढ़ेउ स्यंदन सुमिरि हर गुर गौरि गनेसु ॥दोहा 301॥

तेहिं रथ रुचिर = उस सुंदर रथ पर, *बसिष्ठ कहुँ* = गुरु वसिष्ठ को, *हरषि चढ़ाइ नरेसु* = राजा ने हर्षित होकर बैठाया, *आपु चढ़ेउ स्यंदन* = दूसरे रथ पर राजा स्वयं बैठे, *सुमिरि हर गुर गौरि गनेसु* = शिव; गुरु; पार्वती व गणेश का स्मरण करके।

भरत जी ने पूरी बारात सजवायी थी। मंत्री सुमंत्र दो रथ तैयार करवाते हैं। उनमें सूर्य के रथ के घोड़ों से भी ज्यादा सुंदर घोड़े लगवाते हैं। दोनों सुंदर

सजे रथ दशरथ जी के पास लाये गये। इनकी सुंदरता का वर्णन माँ सरस्वती भी नहीं कर सकती हैं। एक रथ पर राजा की आवश्यकता की वस्तुयें सजाकर रख दी गईं। दूसरे रथ में राजा के रथ जितनी सजावट नहीं है पर वह ज्यादा प्रकाशवान् है। उसमें वसिष्ठ जी का सामान रखा गया। दशरथ जी ने पहले गुरु वसिष्ठ को रथ में बैठाया। फिर शिव, गुरु, गौरी व गणेश का स्मरण करके स्वयं रथ में बैठे।

दशरथ जी ने शंख बजाकर बारात प्रस्थान की घोषणा की

सहित बसिष्ठ सोह नृप कैसें। सुर गुर संग पुरंदर जैसें ॥302:1॥
करि कुल रीति बेद बिधि राऊ। देखि सबहि सब भाँति बनाऊ ॥302:2॥
सुमिरि रामु गुर आयसु पाई। चले महीपति संख बजाई ॥302:3॥

सहित बसिष्ठ सोह नृप कैसें = वसिष्ठ जी के साथ राजा ऐसे सुशोभित हो रहे हैं, *सुर गुर संग* = देवताओं के गुरु बृहस्पति के साथ में, *पुरंदर जैसें* = जैसे राजा इन्द्र हों, *करि कुल रीति बेद बिधि राऊ* = राजा ने कुल रीति व वेदरीति पूरी की, *देखि सबहि सब भाँति बनाऊ* = फिर यह देखकर की बारात सब तरह से तैयार है, *सुमिरि रामु* = राम का स्मरण करके, *गुर आयसु पाई* = गुरु की आज्ञा लेकर, *चले महीपति संख बजाई* = राजा शंख बजाते हैं और बारात प्रस्थान करती है।

वसिष्ठ जी के साथ दशरथ जी वैसे ही शोभायमान हो रहे हैं जैसे देवताओं के गुरु बृहस्पति के साथ राजा इन्द्र हों। बारात चलते समय वैदिक-रीति व कुल-रीति की गई। महाराज दशरथ ने देखा पूरी बारात तैयार है, सब लोग ठीक-ठाक हैं, सबको सवारी मिल गयी है, सामान तैयार है, तब राम का स्मरण किया, फिर वसिष्ठ जी से आज्ञा माँगी और शंख बजाकर बारात प्रस्थान कर दी।

राम-बारात चल दी, चलती बारात में शामिल होकर आनंद लें

हरषे बिबुध बिलोकि बराता। बरषहिं सुमन सुमंगल दाता ॥302:4॥
भयउ कोलाहल हय गय गाजे। ब्योम बरात बाजने बाजे ॥302:5॥
सुर नर नारि सुमंगल गाईं। सरस राग बाजहिं सहनाईं ॥302:6॥

हरषे बिबुध बिलोकि बराता = बारात देखकर देवता प्रसन्न होकर, *बरषहिं सुमन* = फूलों की वर्षा करते हैं, *सुमंगल दाता* = मंगल की कामना करते हैं, *भयउ कोलाहल हय गय गाजे* = बहुत कोलाहल हुआ घोड़े व हाथी गरजने लगे, *ब्योम बरात बाजने बाजे* = आकाश में व बारात में बाजे बजने लगे, *सुर नर नारि सुमंगल गाईं* = देवताओं की स्त्रियाँ व मनुष्य की स्त्रियाँ मंगल गीत गा रही हैं, *सरस राग बाजहिं सहनाईं* = सरस राग में शहनाइयाँ बजने लगीं।

घंट घंटि धुनि बरनि न जाहीं। सरव करहिं पाइक फहराहीं ॥302:7॥
करहिं बिदूषक कौतुक नाना। हास कुसल कल गान सुजाना ॥302:8।

घंट घंटि धुनि बरनि न जाहीं = घंटे व घंटियों की ध्वनि का वर्णन नहीं हो सकता, *सरव करहिं पाइक फहराहीं* = सेवक लोग उछलते-कूदते चल रहे हैं, *करहिं बिदूषक कौतुक नाना* = विदूषक लोग तरह-तरह के तमाशे कर रहे हैं, *हास कुसल कल गान सुजाना* = ये लोग हँसाने में कुशल व अच्छा गाते भी हैं।

तुरग नचावहिं कुअँर बर अकनि मृदंग निसान ।
नागर नट चितवहिं चकित डगहिं न ताल बँधान ॥दोहा 302॥

तुरग नचावहिं कुअँर बर = सुंदर राजकुमार घोड़ों को नचा रहे हैं, *अकनि मृदंग निसान* = ढोल व नगाड़ों की तालों को सावधानी से सुनकर, *नागर नट चितवहिं चकित* = चतुर नट आश्चर्य से यह देखते हैं, *डगहिं न ताल बँधान* = कि घोड़ों के पैर ताल के अनुसार ही चलते हैं।

तुलसीदास जी चलती हुई बारात का सुंदर चित्रण कर रहे हैं। पाठक व श्रोता भी राम की बारात में चलें तब तो बारात का आनंद है।

1. आकाश में देवता प्रसन्न होकर फूलों की वर्षा करके मंगलकामना करते हैं।
2. घोड़े हिनहिना रहे हैं, हाथी चिंघाड़ रहे हैं, रथ के पहिये घड़-घड़ाते हैं।
3. आकाश में देवता बाजे बजाते हैं, बारात में भी बाजे बज रहे हैं।
4. देवताओं की व मनुष्यों की स्त्रियाँ राग के साथ मंगलगीत गा रही हैं।
5. संगीतमय धुन में सरस शहनाई बज रही है।
6. घंटे व घंटियों की मधुर ध्वनि हो रही है।
7. मनोरंजन के लिये विदूषक लोग तरह-तरह की कलाबाजी दिखाते हैं।

8. सुंदर राजकुमार बाजों की आवाज सुनकर उसी ताल में घोड़ों को नचा रहे हैं। घोड़ों को लय-ताल में ठीक प्रकार से नाचता देखकर नट भी आश्चर्यचकित हैं।

सारे शकुनों का एक साथ दर्शन कर अपना जीवन मंगलमय करें

बनइ न बरनत बनी बराता। होहिं सगुन सुंदर सुभदाता ॥303:1॥
चारा चाषु बाम दिसि लेई। मनहुँ सकल मंगल कहि देई ॥303:2॥
दाहिन काग सुखेत सुहावा। नकुल दरसु सब काहूँ पावा ॥303:3॥
सानुकूल बह त्रिबिध बयारी। सघट सबाल आव बर नारी ॥303:4॥

बनइ न बरनत = वर्णन करते नहीं बनता, *बनी बराता* = बारात इस प्रकार बनी है, *होहिं सगुन सुंदर सुभदाता* = सुंदर व शुभ शगुन हो रहे हैं, *चारा चाषु बाम दिसि लेई* = नीलकंठ पक्षी बाँयी ओर दिखा जो कुछ खा रहा है, *मनहुँ सकल मंगल कहि देई* = मानो कह रहा है सब मंगल होगा, *दाहिन काग सुखेत सुहावा* = दाहिनी ओर सुंदर खेत में कौआ दिखाई दिया, *नकुल दरसु सब काहूँ पावा* = नेवले ने निकलकर बारातियों की तरफ देखा सबने उसके दर्शन किये, *सानुकूल बह त्रिबिध बयारी* = तीनों प्रकार की हवा अनुकूल दिशा में चल रही है, *सघट सबाल आव बर नारी* = सुंदर स्त्री घड़ा सिर पर रखे व बच्चा लिये आ रही हैं।

लोवा फिरि फिरि दरसु देखावा। सुरभी सनमुख सिसुहि पिआवा ॥303:5॥
मृगमाला फिरि दाहिनि आई। मंगल गन जनु दीन्हि देखाई ॥303:6॥
छेमकरी कह छेम बिसेषी। स्यामा बाम सुतरु पर देखी ॥303:7॥
सनमुख आयउ दधि अरु मीना। कर पुस्तक दुइ बिप्र प्रबीना ॥303:8॥

लोवा फिरि फिरि दरसु देखावा = लोमड़ी बार-बार दिखायी देती है, *सुरभी सनमुख सिसुहि पिआवा* = गाय सामने खड़े होकर बछड़े को दूध पिला रही हैं, *मृगमाला फिरि दाहिनि आई* = हिरण का झुंड बाँये से दाहिने तरफ आया, *मंगल गन जनु दीन्हि देखाई* = मानो सारे मंगल एकसाथ दिख गये हों, *छेमकरी कह छेम बिसेषी* = सफेद मुख व लाल शरीर वाली चील कल्याण हो कहती उड़ रही है, *स्यामा बाम सुतरु पर देखी* = श्यामा पक्षी बाँयीं ओर सुंदर पेड़ पर दिखाई दिया, *सनमुख आयउ दधि अरु मीना* =

सामने दही व मछली दिखी, *कर पुस्तक दुइ बिप्र प्रबीना* = दो विप्र हाथ में पुस्तक लिये दिखे।

बारात जब सजकर तैयार हुई, चलने लगी तो वह इतनी सुंदर है कि उसका पूरा वर्णन नहीं हो सकता है। बहुत सारे सगुन होते हैं, तुलसीदास जी उनका वर्णन करते हैं। आप भी जब राम-बारात में चल ही रहे हैं, तो प्रत्येक सगुन का दर्शन करके अपने जीवन को कल्याण व मंगल से भरने का अवसर न चूकें।

1. बाँयी ओर कुछ खाता हुआ नीलकंठ पक्षी कह रहा है सब मंगल होगा।
2. दाहिनी ओर सुंदर खेत में कौआ दिखाई दिया।
3. नेवले ने निकलकर बारातियों की तरफ देखा, सबने उसके दर्शन किये।
4. शीतल-मंद-सुगंधित वायु अनुकूल चल रही है।
5. एक तरफ बच्चे को गोद में लिये और दूसरी तरफ घड़ा लिये एक स्त्री आ रही है।
6. बारात नगर के बाहर निकली, वन आया, बार-बार लोमड़ी दिखती है।
7. बारात आगे चली गाँव आया, बछड़े को दूध पिलाते हुए गाय दिखी।
8. हिरणों का झुंड बाँये से दाहिनी तरफ आता हुआ दिखा।
9. विशेष चील जिसका मुँह सफेद व शरीर लाल है क्षेम-क्षेम कह रही है।
10. पीले पैर व काले रंग का श्यामा पक्षी बाँयी ओर हरे-भरे वृक्ष पर बैठा है।
11. सामने दही दिखा।
12. मछली दिखी।
13. दो विप्र हाथ में पुस्तक लिये दिखे।

सारे सगुन अपने को सच साबित करने के लिये एकत्रित हुए!

मंगलमय कल्यानमय अभिमत फल दातार ।
जनु सब साचे होन हित भए सगुन एक बार ॥दोहा 303॥

मंगलमय कल्यानमय = मंगल व कल्याण की सूचना देने वाले, *अभिमत फल दातार* = मनचाहा फल देने वाले, *जनु सब साचे होन हित* = मानो यह सिद्ध करने के लिये कि सगुन सच होते हैं, *भए सगुन एक बार* = सारे सगुन एक साथ दिखाई दिये।

मंगल सगुन सुगम सब ताकें। सगुन ब्रह्म सुंदर सुत जाकें ॥304:1॥
राम सरिस बरु दुलहिनि सीता। समधी दसरथु जनकु पुनीता ॥304:2॥
सुनि अस ब्याहु सगुन सब नाचे। अब कीन्हे बिरंचि हम साँचे ॥304:3॥
एहि बिधि कीन्ह बरात पयाना। हय गय गाजहिं हने निसाना ॥304:4॥

मंगल सगुन सुगम सब ताकें = उसके लिये सारे मंगल सगुन आसानी से आ जाते हैं, *सगुन ब्रह्म सुंदर सुत जाकें* = जिसके सगुण ब्रह्म ही सुंदर पुत्र हों, *राम सरिस बरु* = राम जैसा वर, *दुलहिनि सीता* = सीता जैसी वधू, *समधी दसरथु जनकु पुनीता* = दशरथ जी व जनक जी जैसे पवित्र समधी हों, *सुनि अस ब्याहु सगुन सब नाचे* = ऐसा सुंदर संयोग देखकर सारे सगुन नाच उठे, *अब कीन्हे बिरंचि हम साँचे* = उन्हें लगा विधाता ने अब हमें सच्चा सिद्ध कर दिया है, *एहि बिधि कीन्ह बरात पयाना* = इस प्रकार बारात चल रही है, *हय गय गाजहिं हने निसाना* = घोड़े हाथी आवाज कर रहे हैं, बाजे बज रहे हैं।

मंगल व कल्याण की सूचना व मनचाहा फल देने वाले ये सारे सगुन एक साथ क्यों दिखे? तुलसीदास जी कहते हैं कि ब्रह्म ही सगुण रूप में पुत्र बनकर जिसके घर आ गया हो, उसके लिये तो सब मंगल ही मंगल है। अमंगल का तो प्रश्न ही नहीं है। राम जैसे वर हैं, सीता जैसी वधू हैं और दशरथ व जनक जैसे पवित्र समधी हैं तो ऐसा सुंदर संयोग देखकर सब सगुन नाच उठे। वे प्रगट होकर यह सिद्ध करना चाहते हैं कि सगुन सच होते हैं। सामान्य तौर पर व्यक्ति सगुन को देखकर खुश होता है परंतु यहाँ तो उल्टा है। सगुन बारातियों को देखकर नाच रहे हैं। प्रसन्न हैं। अपने को प्रगट कर रहे हैं। बाराती तो अपने आप में प्रसन्न हैं, सगुन की तरफ ध्यान नहीं दे रहे हैं। इन सगुनों के बीच घोड़े-हाथी की आवाज व बाजे-गाजे के साथ बारात चली जा रही है।

नदियों पर पुल बँधवाये, भोजन व रुकने के भव्य इंतजाम किये

आवत जानि भानुकुल केतू। सरितन्हि जनक बँधाए सेतू ॥304:5॥
बीच बीच बर बास बनाए। सुरपुर सरिस संपदा छाए ॥304:6॥
असन सयन बर बसन सुहाए। पावहिं सब निज निज मन भाए ॥304:7॥
नित नूतन सुख लखि अनुकूले। सकल बरातिन्ह मंदिर भूले ॥304:8॥

आवत जानि भानुकुल केतू = सूर्यवंश के केतु दशरथ जी के आने की सूचना मिलते ही, *सरितन्हि जनक बँधाए सेतू* = जनक जी ने नदियों पर पुल बँधवा दिये, *बीच बीच बर बास बनाए* = रास्ते में जगह-जगह रुकने हेतु निवास बनवा दिये, *सुरपुर सरिस संपदा छाए* = स्वर्ग के समान वहाँ सुविधायें थीं, *असन* = खाने की सामग्री, *सयन* = बिस्तर, *बर बसन सुहाए* = सुंदर पहनने के वस्त्र, *पावहिं सब निज निज मन भाए* = सब लोगों को मनपसंद चीजें मिल रही हैं, *नित नूतन सुख लखि अनुकूले* = रोज-रोज नयी सुविधाओं में रहकर, *सकल बरातिन्ह मंदिर भूले* = सभी बाराती अपने घरों को भूल गये।

जैसे ही जनक जी को पता चला कि दशरथ जी बारात लेकर आ रहे हैं, कारीगरों को भेजकर नदियों पर पुल बनवा दिये। जगह-जगह ठहरने की इतनी सुंदर व्यवस्था कर दी कि वहाँ स्वर्ग के समान सुविधायें थीं। भोजन, बिस्तर पहनने के सुंदर वस्त्र इत्यादि लोगों के पसंद के अनुसार उपलब्ध करवाये गये। बारात रोज-रोज यात्रा कर रही है। दिन में चलती है रात्रि में ठहरती है। प्रतिदिन अलग तरह का भोजन व ठहरने की व्यवस्था है। घर से ज्यादा सुख-सुविधों को देखकर बाराती अपने घरों को भूल गये।

बारात जनकपुर के पास पहुँची, अगवानी हेतु लोग चल दिये

आवत जानि बरात बर सुनि गहगहे निसान ।
सजि गज रथ पदचर तुरग लेन चले अगवान ॥दोहा 304॥

आवत जानि बरात बर सुनि गहगहे निसान = धमा-धम जोर-जोर से बाजों की आवाज सुन लोग समझ गये कि बारात आ गयी है, *सजि* = लोग ठीक से तैयार होकर, *गज रथ पदचर तुरग* = हाथी; रथ व घोड़े पर सवार होकर या पैदल ही, *लेन चले अगवान* = बारात को लेने चल दिये।

खूब जोर से बाजों की आवाज सुनकर जनकपुर के लोग समझ गये कि बारात नगर के करीब पहुँच गयी है। वे सब नये-नये वस्त्र पहनकर, सज-धज कर तैयार हो गये। आगे बढ़कर बारात का स्वागत करने हेतु चार प्रकार की सवारियों जैसे रथ, घोड़े, हाथी व पैदल चल दिये।

5. जनकपुर में बारात की भव्य अगवानी

(दोहा 305 से 312)

अयोध्या से बारात जनकपुर के बाहर पहुँचती है। नगर के लोग बारात की भव्य अगवानी करते हैं। जनक जी द्वारा भेजी गयी अनेकों सामग्रियाँ विनम्रता पूर्वक महाराज दशरथ को दी जाती हैं। वे उसे स्वीकार करके जरूरतमंदों को बाँट देते हैं। नगर के बाहर से जनवासे तक महँगे कालीन बिछाये जाते हैं। उस पर बारात को समारोह पूर्वक पैदल जनवासे लाया जाता है। सीता जी की प्रेरणा से सिद्धियाँ स्वर्ग से भी सुंदर व्यवस्थायें जनवासे में कर देती हैं। चारों भाइयों, महाराज दशरथ, विश्वामित्र जी व नगरवासियों का जनवासे में आदर व प्रेमपूर्वक मिलन होता है। लग्न के पहले बारात आने से सब जगह उत्साह है। पूरे नगर में चारों भाइयों की सुंदरता की चर्चा है।

अनेकों पकवान, उपहार, मंगल सामग्री साथ लेकर चले

कनक कलस भरि कोपर थारा। भाजन ललित अनेक प्रकारा ॥305:1॥
भरे सुधा सम सब पकवाने। नाना भाँति न जाहिं बखाने ॥305:2॥
फल अनेक बर बस्तु सुहाईं। हरषि भेंट हित भूप पठाईं ॥305:3॥
भूषन बसन महामनि नाना। खग मृग हय गय बहुबिधि जाना ॥305:4॥
मंगल सगुन सुगंध सुहाए। बहुत भाँति महिपाल पठाए ॥305:5॥
दधि चिउरा उपहार अपारा। भरि भरि काँवरि चले कहारा ॥305:6॥

कनक कलस भरि = सोने के कलशों में भरकर, *कोपर थारा* = परात के समान बड़े बर्तनों में भरकर, *भाजन ललित अनेक प्रकारा* = अनेकों प्रकार की भोजन सामाग्री, *भरे सुधा सम सब पकवाने* = अमृत के समान स्वाद वाले सब पकवान, *नाना भाँति न जाहिं बखाने* = तरह-तरह के हैं जिनका पूरा वर्णन नहीं हो सकता है, *फल अनेक* = अनेक प्रकार के फल, *बर बस्तु सुहाईं* = अनेक सुंदर वस्तुयें, *हरषि भेंट हित भूप पठाईं* = हर्षित होकर राजा ने भेंट के लिये भेजी, *भूषन बसन महामनि नाना* = गहने; वस्त्र; अनेक मूल्यवान् मणियाँ, *खग मृग हय गय* = पक्षी; पशु; घोड़े; हाथी, *बहुबिधि जाना* = और अनेक प्रकार की सवारियाँ, *मंगल सगुन* = मंगल व सगुन की सामग्री, *सुगंध सुहाए* = सुगंधित पदार्थ, *बहुत भाँति महिपाल पठाए* = अनेक प्रकार का सामान राजा ने भेजा, *दधि चिउरा*

उपहार अपारा = दही; चिउड़ा व अनेक उपहार की सामग्री, *भरि भरि काँवरि चले कहारा* = काँवरों में भर-भरकर कहार चल दिये।

अगवानी करने वालों के साथ जनक जी जो वस्तुयें भेजते हैं उसका विस्तृत वर्णन तुलसीदास जी करते हैं।

1. स्वर्ण के कलशों में भरकर अनेक तरह के पेय पदार्थ।
2. बड़ी परातों, जिनमें पकड़ने के लिये दोनों ओर कड़े लगे हैं, में भरकर अनेक तरह के पकवान, फल, मेवे इत्यादि सूखे खाने की वस्तुयें।
3. आभूषण, वस्त्र, अनेक तरह की मूल्यवान् मणियाँ व अन्य उपहार।
4. मांगलिक सामग्री जैसे पुष्प, चंदन, दूब व सुगंधित द्रव्य।
5. अयोध्यावासियों को दही-चिवड़ा पसंद है, इसलिये यह अलग से भेजा गया।
6. मोर, तोता, मैना इत्यादि पक्षी, अनेक पशु जैसे गाय, घोड़े आदि।

आनंद के दो समुद्रों जैसे बाराती व घराती आपस में मिले

अगवानन्ह जब दीखि बराता। उर आनंदु पुलक भर गाता ॥305:7॥
देखि बनाव सहित अगवाना। मुदित बरातिन्ह हने निसाना ॥305:8॥

अगवानन्ह जब दीखि बराता = अगवानी करने वालों ने जब बारात को देखा, *उर आनंदु पुलक भर गाता* = तो उनके मन आनंदित व शरीर पुलकित हो गये, *देखि बनाव सहित अगवाना* = अगवानी करने वालों को सज-धज कर आते देखकर, *मुदित बरातिन्ह हने निसाना* = बारातियों ने प्रसन्न होकर बाजे बजाये।

हरषि परसपर मिलन हित कछुक चले बगमेल ।
जनु आनंद समुद्र दुइ मिलत बिहाइ सुबेल ॥दोहा 305॥

हरषि परसपर मिलन हित = हर्षित होकर आपस में मिलने के लिये, *कछुक चले* = कुछ लोग चल दिये, *बगमेल* = घोड़े की लगाम छोड़कर, *जनु आनंद समुद्र दुइ* = मानो आनंद के दो समुद्र, *मिलत* = मिल रहे हों, *बिहाइ सुबेल* = अपना तट छोड़कर के।

बारात को देखकर अगवानी करने वालों का मन आनंद से व शरीर रोमांच से भर गया। स्वागत के लिये सज-धज कर आये जनकपुरवासियों को देखकर,

प्रसन्नता प्रगट करने के लिये बारातियों ने जोर-जोर से बाजे बजाये। जब आगे बढ़ते-बढ़ते दोनों पास-पास आ गये तब कुछ लोग आपस में मिलने के लिये सब कुछ छोड़कर तेजी से भागे। प्रेम व आनंद से भरपूर इस मिलन को देखकर लगा मानो अपनी सीमायें तोड़कर आनंद के दो समुद्र आपस में मिल रहे हों।

सारी वस्तुयें महाराज ने स्वीकार कीं, फिर भिक्षुओं को दे दीं

बरषि सुमन सुर सुंदरि गावहिं। मुदित देव दुंदुभीं बजावहिं ॥306:1॥
बस्तु सकल राखीं नृप आगें। बिनय कीन्हि तिन्ह अति अनुरागें ॥306:2॥
प्रेम समेत रायँ सबु लीन्हा। भै बकसीस जाचकन्हि दीन्हा ॥306:3॥

बरषि सुमन = फूलों की वर्षा करके, *सुर सुंदरि गावहिं* = देवसुंदरियाँ गीत गा रही हैं, *मुदित देव दुंदुभीं बजावहिं* = देवता प्रसन्न होकर बाजे बजा रहे हैं, *बस्तु सकल* = सारी वस्तुयें, *राखीं नृप आगें* = राजा दशरथ के सामने रखकर, *बिनय कीन्हि तिन्ह अति अनुरागें* = अत्यंत प्रेम से उनसे विनती की, *प्रेम समेत रायँ सबु लीन्हा* = राजा ने प्रेमपूर्वक सब वस्तुयें लीं, *भै बकसीस जाचकन्हि दीन्हा* = फिर भिक्षुओं को बक्शीश में बाँट दी गईं।

बाराती व घराती को आनंदपूर्वक मिलते देखकर आकाश से देवसुंदरियाँ फूलों की वर्षा करके सुंदर गीत गाती हैं, देवता प्रसन्न होकर बाजे बजा रहे हैं। अगवानी करने वालों ने अत्यंत विनम्रतापूर्वक सभी सामग्री महाराज दशरथ के सामने रखकर कहा कि महाराज जनक की भेंट को कृपा करके स्वीकार करें। महाराज दशरथ ने सम्मान को स्वीकार किया, समस्त वस्तुओं को प्रेमपूर्वक ले लिया। फिर अपने साथ आये याचकों, सेवकों या जिन्हें आवश्यकता थी उन्हें बाँट दिया। अयोध्या व जनकपुर में भिक्षु कब तक रहते हैं? जब तक राम सिंहासन पर नहीं बैठते। राम-राज्य में कोई भिक्षु नहीं होता, सब संतुष्ट रहते हैं।

पूजन, सम्मान व प्रशंसा कर बारात को जनवासे लाया गया

करि पूजा मान्यता बड़ाई। जनवासे कहुँ चले लवाई ॥306:4॥
बसन बिचित्र पाँवड़े परहीं। देखि धनदु धन मदु परिहरहीं ॥306:5॥
अति सुंदर दीन्हेउ जनवासा। जहँ सब कहुँ सब भाँति सुपासा ॥306:6॥

करि पूजा मान्यता बड़ाई = दशरथ जी का पूजन, सम्मान व प्रशंसा करके, *जनवासे कहुँ चले लवाई* = जनवासे की ओर बारात लेकर चले, *बसन बिचित्र पाँवड़े परहीं* = विचित्र वस्त्रों के पाँवड़े बिछाये गये, *देखि धनदु* = जिसे देखकर कुबेर का भी, *धन मदु परिहरहीं* = धन का अभिमान छूट जाये, *अति सुंदर दीन्हेउ जनवासा* = बहुत सुंदर जनवासा दिया गया, *जहँ सब कहुँ सब भाँति सुपासा* = जहाँ सभी को सब प्रकार की सुविधायें थीं।

महाराज दशरथ का पूजन व सम्मान करके उनकी महानता की प्रशंसा की गई। जिस रास्ते से चलकर बारात को जनवासे पहुँचना था वहाँ विलक्षण वस्त्रों की बनी हुई कालीन बिछा दी गई। हाथी-घोड़े-रथ यहीं रोक दिये गये। अब बारात कालीन के ऊपर पैदल चल रही है। तुलसीदास जी कहते हैं कि जब कुबेर ने इतने कीमती व विलक्षण वस्त्रों के बने हुए पाँवड़े जमीन पर बिछे देखे तो उसका अपने धन का अभिमान शांत हो गया। रहने, बैठने, लेटने, नहाने, वस्त्र, सेवकों आदि व्यवस्थाओं से परिपूर्ण सुंदर जनवासे में बारात को आदरपूर्वक ठहराया गया।

सीता जी के आदेश से सिद्धियों ने सुख-संपत्ति फैला दी

जानी सियँ बरात पुर आई। कछु निज महिमा प्रगटि जनाई ॥306:7॥
हृदयँ सुमिरि सब सिद्धि बोलाईं। भूप पहुनई करन पठाईं ॥306:8॥

जानी सियँ बरात पुर आई = सीता जी ने समझा कि बारात जनकपुर आ गई है, *कछु निज महिमा प्रगटि जनाई* = तब अपनी कुछ महिमा प्रगट करके दिखाई, *हृदयँ सुमिरि सब सिद्धि बोलाईं* = हृदय में स्मरणकर सब सिद्धियों को बुलवाकर, *भूप पहुनई करन पठाईं* = महाराज दशरथ की सेवा में भिजवाया।

सिधि सब सिय आयसु अकनि गईं जहाँ जनवास ।
लिएँ संपदा सकल सुख सुरपुर भोग बिलास ॥दोहा 306॥

सिधि सब सिय आयसु अकनि = सब सिद्धियाँ सीता जी की आज्ञा सुनकर, *गईं जहाँ जनवास* = जनवासे में पहुँचती हैं, *लिएँ संपदा सकल सुख* = समस्त सुख व संपदा लिये हैं, *सुरपुर भोग बिलास* = व स्वर्ग का भोग-विलास भी लिये हैं।

सीता जी ने समझा कि अब बारात नगर में आ गयी है, तो अपनी कुछ महिमा प्रगट करके दिखाई। हृदय में सिद्धियों को स्मरण किया, वे आ गयीं, उनसे कहा कि अयोध्या से बारात आई है, महाराज दशरथ आये हैं, उनकी सेवा करो, उन्हें कोई कमी न महसूस हो। सीता जी का आदेश सुनकर सब सिद्धियाँ स्वर्ग के भोग-विलास व सब संपत्ति लेकर जनवासे पहुँच गयीं।

सीता जी की महिमा को स्वयं अनुभव करें!

राम जब जनकपुर में आये तो शिव-धनुष भंग करके अपनी महिमा प्रगट की। सीता जी शांत रहीं। जब बारात अयोध्या से आयी तो सीता जी को लगा कि अब व्यवस्था बनाने में हमें कुछ सहयोग करना चाहिये। सिद्धियों से भवन, जल, नौकर, सामग्री आदि की व्यवस्था करवाकर अपनी महिमा प्रगट की। जब कभी विस्तृत व्यवस्था की जिम्मेदारी आये तो माँ सीता का व इस प्रसंग का स्मरण करें, कार्य सुगमता से पूरा होगा।

रहस्य कोई समझा नहीं, सब जनक जी की प्रशंसा करते हैं

निज निज बास बिलोकि बराती। सुरसुख सकल सुलभ सब भाँती ॥307:1।
बिभव भेद कछु कोउ न जाना। सकल जनक कर करहिं बखाना ॥307:2॥

निज निज बास बिलोकि बराती = बारातियों ने जब अपने-अपने रहने के स्थान देखे, *सुरसुख सकल सुलभ सब भाँती* = तो वहाँ पर देवताओं को प्राप्त समस्त सुख-सुविधायें थीं, *बिभव भेद* = इस वैभवता का रहस्य, *कछु कोउ न जाना* = कुछ भी कोई समझ नहीं पाया, *सकल जनक कर करहिं बखाना* = सब लोग जनक जी की प्रशंसा करते हैं।

बारातियों ने जब अपने-अपने ठहरने की व्यवस्था देखी तो उन्हें लगा कि देवताओं को जो-जो सुविधायें प्राप्त हैं वे सब हमे यहाँ मिल रही हैं। परंतु इस वैभवता का रहस्य किसी को समझ नहीं आया, क्योंकि माया का रहस्य जीव नहीं समझ सकता है। बारातियों को सीता जी की व्यवस्था का पता नहीं, वे सब तो इस अद्भुत व्यवस्था के लिये जनक जी का बखान करते हैं।

सीता की सेवा व्यवस्था समझ राम प्रसन्न हुए

सिय महिमा रघुनायक जानी। हरषे हृदयँ हेतु पहिचानी ॥307:3॥

सिय महिमा रघुनायक जानी = सीता की महिमा को राम समझ गये, *हरषे हृदयँ हेतु पहिचानी* = सीता का प्रेम देखकर राम मन ही मन प्रसन्न हुए।

सीता जी राम की सेवा करके अपना प्रेम प्रगट करना चाहती हैं। सेवा कैसे करें? यदि दशरथ जी व बारातियों की सेवा हो जाये तो राम की सेवा हो गयी। सीता की महिमा, प्रेम व सेवा-भाव को राम समझ गये। राम ने किसी से कुछ कहा नहीं, हृदय में प्रसन्न हो गये।

विश्वामित्र जी राम-लक्ष्मण को लेकर दशरथ से मिलने चले

पितु आगमनु सुनत दोउ भाई। हृदयँ न अति आनंदु अमाई ॥307:4॥
सकुचन्ह कहि न सकत गुरु पाहीं। पितु दरसन लालचु मन माहीं ॥307:5॥

पितु आगमनु सुनत दोउ भाई = पिता का आना सुनकर दोनों भाई, *हृदयँ न अति आनंदु अमाई* = इतने आनंदित हैं कि मन में आनंद समाता नहीं है, *सकुचन्ह कहि न सकत गुरु पाहीं* = संकोच के कारण गुरु से कुछ कह नहीं सकते, *पितु दरसन लालचु मन माहीं* = पिता के दर्शन की मन में बहुत इच्छा है।

बिस्वामित्र बिनय बड़ि देखी। उपजा उर संतोषु बिसेषी ॥307:6॥
हरषि बंधु दोउ हृदयँ लगाए। पुलक अंग अंबक जल छाए ॥307:7॥

बिस्वामित्र बिनय बड़ि देखी = विश्वामित्र जी ने जब इतनी विनम्रता देखी, *उपजा उर संतोषु बिसेषी* = तो उनके मन को विशेष प्रकार का संतोष हुआ, *हरषि बंधु दोउ हृदयँ लगाए* = हर्षित होकर दोनों भाइयों को हृदय से लगा लिया, *पुलक अंग* = शरीर रोमांचित हो गया, *अंबक जल छाए* = नेत्रों में जल आ गया।

चले जहाँ दसरथु जनवासे। मनहुँ सरोबर तकेउ पिआसे ॥307:8॥

चले जहाँ दसरथु जनवासे = दशरथ जी के जनवासे की ओर चल दिये, *मनहुँ सरोबर तकेउ पिआसे* = मानो सरोवर ही प्यासे व्यक्ति के पास जा रहा हो।

पिता जी आ गये हैं, यह सुनकर दोनों भाइयों के मन आनंद से भर गये। शीघ्र ही मिलने की मन में बहुत इच्छा है। पर संकोच के कारण गुरु से कुछ बोलते नहीं हैं। विश्वमित्र जी मन के भाव समझ गये कि ये पिता से मिलने के लिये लालायित हैं पर अनुशासन के कारण बोलते नहीं हैं। राम की विनम्रता व मर्यादा-पालन देखकर मन में बहुत संतोष हुआ। विश्वामित्र जी हर्षित होकर राम व लक्ष्मण को अपने हृदय से लगा लेते हैं। उनका पूरा शरीर रोमांचित हो गया। एक अद्‌भुत अनुभूति हुई। इतना आनंद हुआ कि नेत्रों में जल भर आया। विश्वामित्र जी, राम व लक्ष्मण के साथ जब दशरथ जी से मिलने जनवासे की ओर चलते हैं तब ऐसा लगा मानो सरोवर ही प्यासे के पास जा रहा हो।

दशरथ जी ने दंडवत् प्रणाम किया, विश्वामित्र जी आशीर्वाद देते हैं

भूप बिलोके जबहिं मुनि आवत सुतन्ह समेत ।
उठे हरषि सुखसिंधु महुँ चले थाह सी लेत ॥दोहा 307॥

भूप बिलोके जबहिं मुनि = राजा ने जब मुनि को देखा, *आवत सुतन्ह समेत* = पुत्रों के साथ आते हुए, *उठे हरषि* = प्रसन्नता से उठकर, *सुखसिंधु महुँ चले थाह सी लेत* = सुख के समुद्र की थाह सी लेते हुए चले।

मुनिहि दंडवत कीन्ह महीसा। बार बार पद रज धरि सीसा ॥308:1॥
कौसिक राउ लिए उर लाई। कहि असीस पूछी कुसलाई ॥308:2॥

मुनिहि दंडवत कीन्ह महीसा = राजा ने मुनि को दंडवत प्रणाम किया, *बार बार पद रज धरि सीसा* = चरणों की धूलि बार-बार मस्तक पर लगाया, *कौसिक राउ लिए उर लाई* = विश्वामित्र जी ने राजा को हृदय से लगा लिया, *कहि असीस पूछी कुसलाई* = आशीर्वाद देकर कुशलता पूछी।

जब राजा दशरथ ने पुत्रों सहित मुनि को आते देखा तब वे हर्षित होकर उठे और सुख के समुद्र में थाह से लेते हुए आगे बढ़कर मुनि विश्वामित्र को दंडवत् प्रणाम करते हैं। मुनि की कृपा से ही यह विवाह हो रहा है। इसलिये राजा कृतज्ञता प्रगट करने के लिये बार-बार विश्वामित्र जी के चरणों की धूल मस्तक पर लगाते हैं। विश्वामित्र जी ने महाराज दशरथ को हृदय से लगाया, आशीर्वाद दिया फिर उनकी कुशलता पूछी।

राम-लक्ष्मण को गले से लगाकर दशरथ जी ने नया जीवन पाया

पुनि दंडवत करत दोउ भाई। देखि नृपति उर सुखु न समाई ॥308:3॥
सुत हियँ लाइ दुसह दुख मेटे। मृतक सरीर प्रान जनु भेंटे ॥308:4॥

पुनि दंडवत करत दोउ भाई देखि = फिर दोनों भाइयों को दंडवत् प्रणाम करते देखकर, *नृपति उर सुखु न समाई* = राजा के मन में सुख समाया नहीं, *सुत हियँ लाइ दुसह दुख मेटे* = पुत्रों को हृदय से लगाया तो भारी दु:ख दूर हो गये, *मृतक सरीर प्रान जनु भेंटे* = मानो मरे हुए शरीर को प्राण मिल गया हो।

राम व लक्ष्मण, अपने पिता महाराज दशरथ जी को दंडवत् प्रणाम करते हैं। महाराज ने अपने दोनों प्रिय पुत्रों को गले से लगा लिया। वियोग के कारण जो दु:ख था वह दूर हो गया। राजा कैसे प्रसन्न हुए? जैसे शरीर से प्राण निकल जाये, शरीर निष्क्रिय हो जाये, फिर प्राण वापस आ जाये तो शरीर प्रसन्न हो जाये। दशरथ जी राम व लक्ष्मण के बिना निर्जीव जैसे थे। अब फिर से चेतना आ गयी।

राम-लक्ष्मण वसिष्ठ जी व अन्य विप्रों को प्रणाम करते हैं

पुनि बसिष्ठ पद सिर तिन्ह नाए। प्रेम मुदित मुनिबर उर लाए ॥308:5॥
बिप्र बृंद बंदे दुहुँ भाईं। मनभावती असीसें पाईं ॥308:6॥

पुनि बसिष्ठ पद सिर तिन्ह नाए = फिर वसिष्ठ जी के चरणों में सिर नवाया, *प्रेम मुदित मुनिबर उर लाए* = वसिष्ठ जी ने प्रेम से हर्षित हो हृदय से लगा लिया, *बिप्र बृंद बंदे दुहुँ भाईं* = दोनों भाइयों ने विप्रों के समूह की वंदना की, *मनभावती असीसें पाईं* = मन-भावन आशीर्वाद प्राप्त किया।

पिता का स्थान गुरु से बड़ा है, इसलिये पहले पिता को प्रणाम किया, फिर गुरु वसिष्ठ जी के चरणों में सिर रखकर प्रणाम करते हैं। वसिष्ठ जी प्रसन्न होकर राम व लक्ष्मण को गले से लगा लेते हैं। अयोध्या से विप्रों का समुदाय भी आया था। उन सबकी दोनों भाई वंदना करते हैं। विप्र हर्षित होकर मनचाहा आशीर्वाद प्रदान करते हैं।

चारों भाई बहुत प्रेम से एक-दूसरे से मिले

भरत सहानुज कीन्ह प्रनामा। लिए उठाइ लाइ उर रामा ॥308:7॥
हरषे लखन देखि दोउ भ्राता। मिले प्रेम परिपूरित गाता ॥308:8॥

भरत सहानुज कीन्ह प्रनामा = भरत ने छोटे भाई सहित प्रणाम किया, *लिए उठाइ लाइ उर रामा* = राम ने दोनों को उठाकर हृदय से लगा लिया, *हरषे लखन देखि दोउ भ्राता* = दोनों भाइयों को देखकर लक्ष्मण प्रसन्न होकर, *मिले प्रेम परिपूरित गाता* = प्रेम से परिपूर्ण शरीर से मिले।

भरत व शत्रुघ्न ने राम को प्रणाम किया। राम ने दोनों को हृदय से लगा लिया। लक्ष्मण, भरत व शत्रुघ्न को देखकर बहुत प्रसन्न हुए। बहुत प्रेम से सब भाई आपस में मिलते हैं।

राम सभी बारातियों से मिले, सब बहुत प्रसन्न हो गये

पुरजन परिजन जातिजन जाचक मंत्री मीत ।
मिले जथाबिधि सबहि प्रभु परम कृपाल बिनीत ॥दोहा 308॥

पुरजन = अयोध्यावासी, *परिजन* = परिवार के लोग, *जातिजन* = समाज के लोग, *जाचक* = याचकों, *मंत्री* = मन्त्रियों, *मीत* = मित्रों, *मिले जथाबिधि सबहि प्रभु* = प्रभु राम यथायोग्य मिले, *परम कृपाल बिनीत* = बहुत ही कृपा करके व विनम्रता से मिलते हैं।

रामहि देखि बरात जुड़ानी। प्रीति कि रीति न जाति बखानी ॥309:1॥

रामहि देखि बरात जुड़ानी = राम को देखकर बारात प्रसन्न हो गई, *प्रीति कि रीति न जाति बखानी* = प्रेम की रीति का वर्णन नहीं हो सकता।

अयोध्यावासी, परिवार के लोग, रिश्तेदार, मंत्री, मित्र, याचक व सभी से राम यथायोग्य मिले। छोटे-बड़े सभी से मिलना भारतीय समाजवाद है। भिक्षु व सेवक बहुत प्रसन्न होते हैं, उन्हें लगा राम कितने कृपालु व विनम्र हैं। सारी बारात राम को देखकर बहुत प्रसन्न हो गयी। तुलसीदास जी कहते हैं कि प्रेम के व्यवहार से सब आनंदित रहते हैं। यदि विनम्रता नहीं, प्रेम नहीं, कर्कशता

है तो आनंद समाप्त हो जाता है। प्रभु से प्रार्थना करें कि हमारे अंदर भी सबके प्रति विनम्रता व प्रेम का भाव आये ताकि सदैव आनंद बना रहे।

चारों पुत्रों सहित दशरथ जी चारों पुरुषार्थ के साथ बैठे लगते हैं

नृप समीप सोहहिं सुत चारी। जनु धन धरमादिक तनुधारी ॥309:2॥
सुतन्ह समेत दसरथहि देखी। मुदित नगर नर नारि बिसेषी ॥309:3॥
सुमन बरिसि सुर हनहिं निसाना। नाकनटीं नाचहिं करि गाना ॥309:4॥

नृप समीप सोहहिं सुत चारी = राजा के पास चारों पुत्र इस प्रकार शोभित हैं, *जनु धन धरमादिक तनुधारी* = मानो अर्थ; धर्म; काम व मोक्ष शरीर धारण किये हैं, *सुतन्ह समेत दसरथहि देखी* = पुत्रों सहित दशरथ जी को देखकर, *मुदित नगर नर नारि बिसेषी* = नगर के स्त्री-पुरुष बहुत ही प्रसन्न हो रहे हैं, *सुमन बरिसि सुर हनहिं निसाना* = आकाश से फूलों की वर्षा करके देवता बाजे बजा रहे हैं, *नाकनटीं नाचहिं करि गाना* = अप्सरायें गा-गाकर नाच रही हैं।

सतानंद अरु बिप्र सचिव गन। मागध सूत बिदुष बंदीजन ॥309:5॥
सहित बरात राउ सनमाना। आयसु मागि फिरे अगवाना ॥309:6॥

सतानंद अरु बिप्र = शतानंद जी व विप्रों, *सचिव गन* = सचिवों, *मागध सूत बिदुष बंदीजन* = मागध; सूत; विद्वानों व भाटों ने, *सहित बरात राउ सनमाना* = बारात सहित राजा दशरथ का आदर-सत्कार किया, *आयसु मागि फिरे अगवाना* = आज्ञा लेकर अगवानीकरने वाले वापस लौटे।

महाराज दशरथ, चारों पुत्रों सहित बैठे हुए तुलसीदास जी को कैसे दिखते हैं? मानो अर्थ, धर्म, काम व मोक्ष, चारों शरीर धारण करके दशरथ जी के साथ बैठे हों। काम व मोक्ष दोनों साथ कैसे हो सकते हैं? धन व धर्म साथ कैसे हो सकते हैं? इसे समझने का प्रयास करें। अपने कर्तव्य का पालन करना ही धर्म है। भरत जी धर्म हैं। धर्म से धन प्राप्त करें, वही सुखकारक है। धन सबसे छोटा है। शत्रुघ्न जी धन हैं। धर्म से प्राप्त धन का उपयोग करके कामनायें जब पूरी होती हैं तब वैराग्य आता है। ये लक्ष्मण जी हैं। वैराग्य से मोक्ष की प्राप्ति होती है। यह सबसे बड़ा है। राम मोक्ष हैं। ये सब देखकर देवता भी बहुत प्रसन्न हैं। फूलों की वर्षा करके बाजे बजाते हैं। अप्सरायें स्वर्ग

से गाने गाकर नाचने लगीं। बारात की अगवानी करने गये प्रमुख लोग जैसे शतानंद जी, सचिव, मागध, सूत इत्यादि सब व्यवस्था करके महाराज से आज्ञा माँगकर जनवासे से चल देते हैं।

लग्न से पहले बारात आ गयी, नगरवासी बहुत प्रसन्न हैं

प्रथम बरात लगन तें आई। तातें पुर प्रमोदु अधिकाई ॥309:7॥
ब्रह्मानंदु लोग सब लहहीं। बढ़हुँ दिवस निसि बिधि सन कहहीं ॥309:8॥

प्रथम बरात लगन तें आई = बारात लग्न के पहले ही आ गयी है, *तातें पुर प्रमोदु अधिकाई* = इसलिये नगर में अधिक आनंद है, *ब्रह्मानंदु लोग सब लहहीं* = सब लोग ब्रह्म के आनंद में मग्न हैं, *बढ़हुँ दिवस निसि बिधि सन कहहीं* = ब्रह्मा जी से मनाते हैं कि दिन-रात को और बड़ा कर दें।

महाराज दशरथ के पास जो निमंत्रण दूतों के द्वारा भेजा गया था उसमें लग्न का मुहूर्त भी था। परंतु बारात उस मुहूर्त के कई दिन पहले ही जनकपुर पहुँच गयी। इसलिये नगरवासी बहुत प्रसन्न हैं। सब लोग ब्रह्म के आनंद में मग्न हैं। लोग ब्रह्मा जी से प्रार्थना करते हैं कि दिन-रात लंबे हो जायें। पर होता उल्टा है। दु:ख के दिन बड़े लगते हैं, सुख के जल्दी व्यतीत होते लगते हैं।

जनक व दशरथ के पुण्यों की मूर्ति सीता व राम

रामु सीय सोभा अवधि सुकृत अवधि दोउ राज ।
जहँ तहँ पुरजन कहहिं अस मिलि नर नारि समाज ॥दोहा 309॥

रामु सीय सोभा अवधि = राम व सीता सुंदरता की सीमा हैं, *सुकृत अवधि दोउ राज* = दोनों राजा पुण्य की सीमा हैं, *जहँ तहँ पुरजन कहहिं अस* = जहाँ-तहाँ नगर के लोग इस प्रकार कहते हैं, *मिलि नर नारि समाज* = स्त्री व पुरुषों के समूह आपस में बातें करते हैं।

जनक सुकृत मूरति बैदेही। दसरथ सुकृत रामु धरें देही ॥310:1॥
इन्ह सम काहुँ न सिव अवराधे। काहुँ न इन्ह समान फल लाधे ॥310:2॥
इन्ह सम कोउ न भयउ जग माहीं। है नहिं कतहूँ होनेउ नाहीं ॥310:3॥

जनक सुकृत मूरति बैदेही = जनक जी के पुण्यों की मूर्ति सीता जी हैं, *दसरथ सुकृत रामु धरें देही* = दशरथ जी के पुण्यों के कारण राम ने शरीर धारण किया है, *इन्ह सम काहुँ न सिव अवराधे* = इन दोनों के समान किसी ने शिव की आराधना नहीं की है, *काहुँ न इन्ह समान फल लाधे* = पूजा का फल इनके समान किसी और को नहीं मिला, *इन्ह सम कोउ न भयउ जग माहीं* = इनके समान संसार में कोई नहीं हुआ है, *है नहिं कतहूँ होनेउ नाहीं* = न ही कोई है न कोई होगा।

हम सब सकल सुकृत कै रासी। भए जग जनमि जनकपुर बासी ॥310:4॥
जिन्ह जानकी राम छबि देखी। को सुकृती हम सरिस बिसेषी ॥310:5॥
पुनि देखब रघुबीर बिआहू। लेब भली बिधि लोचन लाहू ॥310:6॥

हम सब सकल सुकृत कै रासी = हम लोग भी बहुत पुण्यवान् हैं, *भए जग जनमि जनकपुर बासी* = इस संसार में जनकपुर में जन्म लिया है, *जिन्ह जानकी राम छबि देखी* = जिन्होंने राम-जानकी की छवि देखी है, *को सुकृती हम सरिस बिसेषी* = हमारे समान और कौन पुण्यात्मा होगा, *पुनि देखब रघुबीर बिआहू* = और अब राम जी का विवाह देखेंगे, *लेब भली बिधि लोचन लाहू* = भली-भाँति नेत्रों का लाभ लेंगे।

आधारभूत तत्त्व पुण्य है। इसी से सुख मिलता है, धर्म मिलता है, गुरु मिलते हैं। परमात्मा भी मिलते हैं। पुण्य की महिमा के बारे में जनकपुर के लोग आपस में बातचीत करते हैं:

1. जनक जी ने बहुत पुण्य किये होंगे! तभी परमेश्वरी सीता ने उनके यहाँ जन्म लिया है। इसी प्रकार महाराज दशरथ के पुण्यों के फल के कारण राम ने अयोध्या में उनका पुत्र बनकर अवतार लिया है।
2. दशरथ जी व जनक जी ने शिवजी की बहुत आराधना की है। शंकर जी की पूजा का फल जैसा इन्हें मिला वैसा अन्य किसी को नहीं मिला है।
3. इन दोनों के समान पुण्यात्मा एवं भाग्यशाली संसार में न कोई हुआ है, न है, न होगा।
4. हम सब भी बहुत पुण्यात्मा हैं तभी तो जनकपुर में जन्म हुआ है। हमने अपनी आँखों से राम-सीता की सुंदरता देखी है। अब राम-सीता विवाह भी देखकर नेत्रों का फल प्राप्त करेंगे ।

जनकपुर की स्त्रियों की बातचीत का सुंदर चित्रण

नगर के पुरुषों ने सबको देखा। स्त्रियाँ अगवानी में नहीं गयीं, बारात नहीं देखी, उनके अंदर जिज्ञासा थी। पुरुषों ने स्त्रियों को बताया, स्त्रियों ने एक-दूसरे को बताया। जो कुछ ज्यादा उत्सुक थीं, कहीं से जाकर देख आयीं और बहुत उत्साह से वर्णन करती हैं। सखियों की बातचीत का तुलसीदास जी ने सुंदर चित्रण किया है।

विवाह से लाभ, राम-लक्ष्मण बार-बार आयेंगे, हम उनको देखेंगे

कहहिं परसपर कोकिलबयनीं। एहि बिआहँ बड़ लाभु सुनयनीं ॥310:7॥
बड़ें भाग बिधि बात बनाई। नयन अतिथि होइहहिं दोउ भाई ॥310:8॥

कहहिं परसपर कोकिलबयनीं = कोयल के समान मधुर आवाज वाली स्त्रियाँ आपस में बातें करती हैं, *एहि बिआहँ बड़ लाभु सुनयनीं* = हे सुंदरनेत्रों वाली इस विवाह के बहुत से लाभ हैं, *बड़ें भाग बिधि बात बनाई* = बहुत भाग्य से विधाता ने सब बात बना दी है, *नयन अतिथि होइहहिं दोउ भाई* = ये दोनों भाई हमारे नेत्रों के अतिथि हुआ करेंगे।

बारहिं बार सनेह बस जनक बोलाउब सीय ।
लेन आइहहिं बंधु दोउ कोटि काम कमनीय ॥दोहा 310॥

बारहिं बार सनेह बस जनक बोलाउब सीय = जनक जी स्नेहवश बार-बार सीताजी को बुलायेंगे, *लेन आइहहिं बंधु दोउ* = दोनों भाई उन्हें लेने आयेंगे, *कोटि काम कमनीय* = जिनकी करोड़ों कामदेवों के समान सुंदरता है।

बिबिध भाँति होइहि पहुनाई। प्रिय न काहि अस सासुर माई ॥311:1॥
तब तब राम लखनहि निहारी। होइहहिं सब पुर लोग सुखारी ॥311:2॥

बिबिध भाँति होइहि पहुनाई = तब उनका अनेक प्रकार से सत्कार होगा, *प्रिय न काहि अस सासुर माई* = हे सखी! ऐसा ससुराल किसे न प्यारा होगा? *तब तब राम लखनहि निहारी* = तब-तब राम व लक्ष्मण को देखकर, *होइहहिं सब पुर लोग सुखारी* = नगर के सारे लोग सुखी होंगे।

कोयल के समान मधुर बोलने वाली व सुंदर नेत्रों वाली स्त्रियाँ आपस में कहती हैं कि इस विवाह से बहुत लाभ है। बहुत भाग्य से विधाता ने सब बातें बना दी

हैं। ये दोनों भाई हमारे नेत्रों के अतिथि हुआ करेंगे। जनक जी स्नेहवश बार-बार सीता जी को बुलवायेंगे, ये दोनों सुंदर राजकुमार सीता जी को लेने आया करेंगे। उनका यहाँ बहुत प्रकार से स्वागत सत्कार होगा। ऐसा ससुराल किसे न प्यारा होगा। तब राम व लक्ष्मण को देखकर सारे नगर के लोग सुखी होंगे।

राम-लक्ष्मण के जैसे भरत-शत्रुघ्न दो भाई और आये हैं

सखि जस राम लखन कर जोटा। तैसेइ भूप संग दुइ ढोटा ॥311:3॥
स्याम गौर सब अंग सुहाए। ते सब कहहिं देखि जे आए ॥311:4॥

सखि जस राम लखन कर जोटा = हे सखी! जैसे राम-लक्ष्मण की जोड़ी है, *तैसेइ भूप संग दुइ ढोटा* = उसी प्रकार के दो राजकुमार राजा के साथ में हैं, *स्याम गौर* = श्याम व गोरे रंग के हैं, *सब अंग सुहाए* = उनके सारे अंग सुंदर हैं, *ते सब कहहिं देखि जे आए* = जो देखकर आये हैं वे सब बताते हैं।

कहा एक मैं आजु निहारे। जनु बिरंचि निज हाथ सँवारे ॥311:5॥
भरतु रामही की अनुहारी। सहसा लखि न सकहिं नर नारी ॥311:6।
लखनु सत्रुसूदनु एकरूपा। नख सिख ते सब अंग अनूपा ॥311:7॥
मन भावहिं मुख बरनि न जाहीं। उपमा कहुँ त्रिभुवन कोउ नाहीं ॥311:8॥

कहा एक मैं आजु निहारे = एक ने कहा मैंने आज ही उन्हें देखा है, *जनु बिरंचि निज हाथ सँवारे* = मानो ब्रह्मा जी ने अपने हाथ से संवारा है, *भरतु रामही की अनुहारी* = भरत तो राम की शक्ल-सूरत के हैं, *सहसा लखि न सकहिं नर नारी* = स्त्री-पुरुष उन्हें सहज पहचान नहीं सकते, *लखनु सत्रुसूदनु एकरूपा* = लखन व शत्रुघ्न एक समान हैं, *नख सिख ते सब अंग अनूपा* = सिर से लेकर पैर तक सभी अंग अनुपम हैं, *मन भावहिं* = मन को बहुत अच्छे लगते हैं, *मुख बरनि न जाहीं* = मुख से वर्णन नहीं किया जा सकता है, *उपमा कहुँ त्रिभुवन कोउ नाहीं* = तीनो लोकों में उनकी उपमा नहीं दी जा सकती है।

दूसरी सखी कहती है तुम तो राम व लक्ष्मण की ही बात करती जा रही हो, अरे! महाराज दशरथ के साथ दो और राजकुमार आये हैं। एक श्यामवर्ण व दूसरे गौरवर्ण के हैं, नाम मालूम नहीं। जो लोग देखकर आये हैं वे बता रहे हैं। एक सखी कहती है, तुमने तो बस सुना है, मैं तो आज ही उन्हें अच्छे से

देखकर आयी हूँ। वे दोनों ऐसे सुंदर हैं मानो ब्रह्मा जी ने उन्हें अपने हाथों से ही सँवारा हो। एक का नाम भरत व दूसरे का शत्रुघ्न है। राम व भरत एक साथ हों, तो पहचान पाना मुश्किल है। दोनों एक जैसे श्यामवर्ण के हैं। लखन व शत्रुघ्न एक जैसे गोरे हैं। सिर से लेकर पैर तक सभी अंग अनुपम हैं। सुंदरता देख सकती हो, मुख से वर्णन नहीं की जा सकती है।

चारों भाइयों के जनकपुर में विवाह की कामना करती हैं

उपमा न कोउ कह दास तुलसी कतहुँ कबि कोबिद कहैं ।
बल बिनय बिद्या सील सोभा सिंधु इन्ह से एइ अहैं ॥
पुर नारि सकल पसारि अंचल बिधिहि बचन सुनावहीं ।
ब्याहिअहुँ चारिउ भाइ एहिं पुर हम सुमंगल गावहीं ॥छंद॥

उपमा न कोउ = कोई उपमा नहीं दी जा सकती है, *कह दास तुलसी* = भगवान के दास तुलसीदास कहते हैं, *कतहुँ कबि कोबिद कहैं* = कोई विद्वान् या कवि कितना भी कहे, *बल बिनय बिद्या सील सोभा* = बल; विनय; विद्या; शीलता व शोभा, *सिंधु* = के से समुद्र हैं, *इन्ह से एइ अहैं* = इनके समान ही ये हैं, *पुर नारि सकल* = जनकपुर की सब स्त्रियाँ, *पसारि अंचल* = आँचल फैलाकर, *बिधिहि बचन सुनावहीं* = ब्रह्मा जी से प्रार्थना करती हैं, *ब्याहिअहुँ चारिउ भाइ एहिं पुर* = चारों भाइयों का इसी नगर में विवाह हो, *हम सुमंगल गावहीं* = हम सब सुंदर मंगल गीत गायें।

कहहिं परस्पर नारि बारि बिलोचन पुलक तन ।
सखि सबु करब पुरारि पुन्य पयोनिधि भूप दोउ ॥सोरठा 311॥

कहहिं परस्पर नारि = स्त्रियाँ आपस में कह रही हैं, *बारि बिलोचन* = नेत्रों में प्रेम के अश्रु हैं, *पुलक तन* = शरीर रोमांचित है, *सखि सबु करब पुरारि* = हे सखी त्रिपुरारि शिव जी सब पूरा करेंगे, *पुन्य पयोनिधि भूप दोउ* = दोनों राजा पुण्यों के समुद्र हैं।

एहि बिधि सकल मनोरथ करहीं। आनँद उमगि उमगि उर भरहीं ॥312:1॥

एहि बिधि सकल मनोरथ करहीं = इस प्रकार सब मनोरथ करती हैं, *आनँद उमगि उमगि उर भरहीं* = मन उत्साह से भर रही हैं।

जे नृप सीय स्वयंबर आए। देखि बंधु सब तिन्ह सुख पाए ॥312:2॥
कहत राम जसु बिसद बिसाला। निज निज भवन गए महिपाला ॥312:3॥
गए बीति कछु दिन एहि भाँती। प्रमुदित पुरजन सकल बराती ॥312:4॥

जे नृप सीय स्वयंबर आए = सीता के स्वयंवर में जो राजा आये थे, *देखि बंधु सब तिन्ह सुख पाए* = भाइयों को देखकर वे सब सुखी होते हैं, *कहत राम जसु बिसद बिसाला* = राम का निर्मल व महान् यश कहते हुए, *निज निज भवन गए महिपाला* = राजा अपने-अपने घर चले गये, *गए बीति कछु दिन एहि भाँती* = इस प्रकार कुछ दिन व्यतीत हो गये, *प्रमुदित पुरजन सकल बराती* = जनकपुर के लोग व बाराती बहुत प्रसन्न हैं।

भगवान के दास तुलसीदास भी यही बात कहते हैं कि उन भाइयों के समान सुंदर भला कौन हो सकता है? उनकी उपमा नहीं दी जा सकती है। इनमें अपार शक्ति है, विनम्रता है, शील है, ज्ञानस्वरूप हैं, विद्यानिधान हैं, शोभानिधान हैं। इनके समान ये ही हैं, दूसरा कोई नहीं है। अब स्त्रियाँ आँचल फैलाकर विधाता से प्रार्थना करती हैं कि चारों भाइयों का विवाह यहीं हो जाये। अभी व्यवस्था राम-सीता के विवाह की है, तुलसीदास जी नगर की स्त्रियों से चर्चा शुरू करवा देते हैं। सखियाँ कहती हैं, चारों का विवाह होगा, हमें मंगलगीत गाने को मिलेगा। गद्‌गद् हैं। आँखों में प्रेम के अश्रु हैं। शरीर पुलकित है। कहती हैं विधाता ऐसा ही करेगा। दूसरी सखी समर्थन करती है, शंकर जी की कृपा से ऐसा ही होगा। दोनों राजा शिव के आराधक हैं। पुण्यात्मा हैं। शिव जी इस मनोरथ को अवश्य ही पूरा करेंगे। सीता स्वयंवर में आये सज्जन राजा अभी रुके थे। चारों भाइयों के दर्शन करके वे अपने-अपने राज्य वापस चले गये। इस प्रकार कुछ दिन व्यतीत हो गये। नगर के लोग व बाराती सब बहुत प्रसन्न हैं।

6. राम की बारात, द्वारचार, मंडप में स्वागत

(दोहा 312 से 321)

अगहन माह, शुभ लग्न तिथि, गोधूलि बेला में राम की बारात जनवासे से चलकर महाराज जनक के राजमहल के द्वार पर पहुँचती है। इस प्रसंग में चलती हुई बारात का सुंदर चित्रण है। महाराज दशरथ के साथ साधु समाज है। राम के साथ तीनों भाई हैं। कामदेव स्वयं घोड़ा बने हैं जिस पर वर राम बैठे हैं। आकाश से देवता अपनी शक्तियों सहित बारात देख रहे हैं। द्वार पर पहुँचते ही

माँ सुनयना वर राम का परिछन करती हैं। मंडप में ले जाकर उन्हें बैठाया जाता है। दशरथ जी व जनक जी का समधी मिलन होता है। पूरी बारात को मंडप में ले जाकर आदर सहित बैठाया जाता है। वसिष्ठ जी, विश्वामित्र जी व अन्य ऋषि मुनियों का पूजन व सम्मान के बाद दशरथ जी का पूजन होता है। सभी बारातियों का स्वागत होता है। देवता विप्र वेष में मंडप में बैठे हैं। देवांगनायें स्त्री बनकर रनिवास के साथ हैं। चारों तरफ आनंद ही आनंद छाया है।

ब्रह्मा जी ने जो लग्न भेजी वही जनकपुर के ज्योतिषी निकाले थे

मंगल मूल लगन दिनु आवा। हिम रितु अगहनु मासु सुहावा ॥312:5॥
ग्रह तिथि नखतु जोगु बर बारू। लगन सोधि बिधि कीन्ह बिचारू ॥312:6॥
पठै दीन्हि नारद सन सोई। गनी जनक के गनकन्ह जोई ॥312:7॥
सुनी सकल लोगन्ह यह बाता। कहहिं जोतिषी आहिं बिधाता ॥312:8॥

मंगल मूल = मंगल का मूल, *लगन दिनु आवा* = लग्न का दिन आ गया, *हिम रितु* = हेमंत ऋतु है, *अगहनु मासु सुहावा* = सुंदर अगहन का महीना है, *ग्रह तिथि नखतु जोगु बर बारू* = ग्रह; तिथि; नक्षत्र; योग श्रेष्ठ थे, *लगन सोधि बिधि कीन्ह बिचारू* = लग्न शोधकर ब्रह्मा जी ने उस पर विचार करके, *पठै दीन्हि नारद सन सोई* = नारद जी के हाथ जनक जी के यहाँ भेज दिया, *गनी जनक के* = जनक जी के ज्योतिषियों ने भी, *गनकन्ह जोई* = वही गणना करके रखी थी, *सुनी सकल लोगन्ह यह बाता* = जब सब लोगों ने यह बात सुनी, *कहहिं जोतिषी आहिं बिधाता* = तो कहा कि यहाँ के ज्योतिषी ब्रह्मा ही हैं।

धेनुधूरि बेला बिमल सकल सुमंगल मूल ।
बिप्रन्ह कहेउ बिदेह सन जानि सगुन अनुकूल ॥दोहा 312॥

धेनुधूरि बेला = गोधूलि की बेला है, *बिमल* = जो पवित्र है, *सकल सुमंगल मूल* = सभी मंगलों की मूल है, *बिप्रन्ह कहेउ बिदेह सन* = विप्रों ने जनक जी को बताया, *जानि सगुन अनुकूल* = अनुकूल सगुन समझकर।

राम-सीता के विवाह की वह शुभ लग्न आ गयी। अगहन का पवित्र महीना है, हेमंत ऋतु है, ब्रह्मा जी ने ग्रह, नक्षत्र, तिथि, दिन सब विचार करके विवाह की शुभ लग्न निकालकर नारद जी के द्वारा जनक जी के पास भिजवाया। जनक

जी के ज्योतिषियों ने भी यही लग्न पहले से ही निकालकर रखी थी। सबने कहा कि यहाँ के ज्योतिषी तो विधाता के समान ही हैं। तुलसीदास जी ने यहाँ पर तिथि नहीं बतायी है पर ऐसी मान्यता है कि अगहन शुक्ल, पंचमी, दिन गुरुवार को राम-सीता विवाह हुआ था। जो तिथि निकली थी, उस दिन गोधूलि बेला को विप्रों ने सब प्रकार से सुमंगल बताया। गोधूलि मायने सायंकाल जब गाय वन से धूल उड़ाती हुई लौटती है। आज भी इस समय को बहुत अच्छा माना जाता है।

मंगल सामग्री लेकर बारात को लेने जनवासा पहुँचे

उपरोहितहि कहेउ नरनाहा। अब बिलंब कर कारनु काहा ॥313:1॥
सतानंद तब सचिव बोलाए। मंगल सकल साजि सब ल्याए ॥313:2॥

उपरोहितहि कहेउ नरनाहा = राजा जनक ने उपरोहित शतानंद जी से कहा, *अब बिलंब कर कारनु काहा* = अब देर का क्या कारण है? *सतानंद तब सचिव बोलाए* = शतानंद जी ने तब मंत्रियों को बुलवाया, *मंगल सकल साजि सब ल्याए* = वे सब मंगल का सामान सजाकर ले आये।

संख निसान पनव बहु बाजे। मंगल कलस सगुन सुभ साजे ॥313:3॥
सुभग सुआसिनि गावहिं गीता। करहिं बेद धुनि बिप्र पुनीता ॥313:4॥
लेन चले सादर एहि भाँती। गए जहाँ जनवास बराती ॥313:5॥

संख निसान पनव बहु बाजे = शंख; नगाड़े; ढोल और बहुत से बाजे बजने लगे, *मंगल कलस सगुन सुभ साजे* = मंगल कलश व शुभ शकुन की वस्तुयें सजायी गयीं, *सुभग सुआसिनि गावहिं गीता* = सुंदर स्त्रियाँ गीत गाने लगीं, *करहिं बेद धुनि बिप्र पुनीता* = विप्र लोग पवित्र वेद पाठ कर रहे हैं, *लेन चले सादर एहि भाँती* = इस प्रकार आदरपूर्वक बारात को लेने चले, *गए जहाँ जनवास बराती* = जनवासे पहुँचे जहाँ बाराती ठहरे थे।

लग्न का समय सुनने के बाद जनक जी ने राज-पुरोहित शतानंद जी से कहा अब विलंब का कोई कारण नहीं है। शुभ कार्य प्रारंभ करना चाहिये। शतानंद जी ने मंत्रियों को बुलवाया। वे सब मंगल सामग्री जैसे दही, दूब, कलश, दीपक, आम के पत्ते इत्यादि लेकर आये, इस समय भेंट की सामग्री नहीं दी जाती है।

बाजे बजने लगे, स्त्रियाँ मंगल गीत गाने लगीं, विप्र लोग वेद ध्वनि उच्चारित करने लगे। इस प्रकार सब तैयारी करके बारात को लिवाने जनवासा जाते हैं।

निमंत्रण मिलते ही दशरथ जी बारात लेकर चलते हैं

कोसलपति कर देखि समाजू। अति लघु लाग तिन्हहि सुरराजू ॥313:6॥
भयउ समउ अब धारिअ पाऊ। यह सुनि परा निसानहिं घाऊ ॥313:7।
गुरहि पूछि करि कुल बिधि राजा। चले संग मुनि साधु समाजा ॥313:8॥

कोसलपति कर देखि समाजू = दशरथ जी का राज्य वैभव देखकर, *अति लघु लाग तिन्हहि सुरराजू* = देवताओं के राजा इन्द्र भी छोटे लगने लगे, *भयउ समउ अब धारिअ पाऊ* = समय हो गया है अब पधारिये, *यह सुनि परा निसानहिं घाऊ* = यह सुनते ही बाजे बजाये जाने लगे, *गुरहि पूछि* = गुरु से पूछकर, *करि कुल बिधि* = कुल की रीति करके, *राजा चले संग मुनि साधु समाजा* = राजा मुनियों व साधुओं को लेकर चलते हैं।

भाग्य बिभव अवधेस कर देखि देव ब्रह्मादि ।
लगे सराहन सहस मुख जानि जनम निज बादि ॥दोहा 313॥

भाग्य बिभव अवधेस कर देखि = राजा दशरथ के भाग्य व वैभव को देखकर, *देव ब्रह्मादि* = ब्रह्मा जी व अन्य देवता, *लगे सराहन सहस मुख* = हजारों मुखों से सराहना करके, *जानि जनम निज बादि* = अपना जन्म व्यर्थ समझते हैं।

जनवासे में महाराज दशरथ का राज वैभव देखकर, सब आश्चर्यचकित रह गये, उन्हें इन्द्र का राज्य भी छोटा दिखाई देने लगा। महाराज दशरथ का जब कौसल्या जी से विवाह हुआ तो कोसल राज्य उन्हें दहेज में प्राप्त हुआ। इसलिये वे कोसलपति कहलाते हैं। अवध के राजा होने के कारण अवधेश कहलाते हैं। जो लोग लेने गये थे उन्होंने प्रार्थना की कि विवाह की लग्न का समय आ गया है, अब आप चलिये। सब तैयार ही थे। बाजे बजने लगे। दशरथ जी गुरु वसिष्ठ से पूछते हैं, चलने की तैयारी है क्या करना चाहिये? वसिष्ठ जी ने जो कुलरीति बतायी, उसे पूरा करके विप्रों व साधुओं को साथ लेकर चलते हैं। इन्द्र इत्यादि देवता, ब्रह्मा-विष्णु-महेश दशरथ जी के भाग्य की खूब प्रशंसा करते हैं। उन्हें लगा इनके सामने हमारा भाग्य कुछ नहीं है।

राम-बारात देखने विमानों में बैठकर देवता गण जनकपुर पहुँचे

सुरन्ह सुमंगल अवसरु जाना। बरषहिं सुमन बजाइ निसाना ॥314:1॥
सिव ब्रह्मादिक बिबुध बरूथा। चढ़े बिमानन्हि नाना जूथा ॥314:2॥
प्रेम पुलक तन हृदयँ उछाहू। चले बिलोकन राम बिआहू ॥314:3॥

सुरन्ह सुमंगल अवसरु जाना = देवताओं ने सुंदर मंगल का अवसर समझकर, *बरषहिं सुमन बजाइ निसाना* = फूलों की वर्षा करके बाजे बजाते हैं, *सिव ब्रह्मादिक* = ब्रह्मा-विष्णु-महेश, *बिबुध बरूथा* = अन्य देवताओं के समूह, *चढ़े बिमानन्हि नाना जूथा* = अनके समूहों में विमानों में बैठकर चल दिये, *प्रेम पुलक तन* = प्रेम से शरीर रोमांचित है, *हृदयँ उछाहू* = मन में उत्साह है, *चले बिलोकन राम बिआहू* = राम विवाह को देखने चल दिये।

बारात चलने की जब तैयारी हो गयी, देवता आकाश में छा गये। फूलों की वर्षा करते हैं। देवता बारातियों व जनकपुरवासियों को दिखते नहीं पर तुलसीदास जी सबको देख रहे हैं। श्रीराम के अद्भुत व अलौकिक विवाह को देखने ब्रह्मा, विष्णु व महेश अपने-अपने वाहनों से, इन्द्र इत्यादि देवताओं के समूह के समूह विमानों में बैठकर जनकपुर पहुँचते हैं। इन सबके अंदर बहुत उत्साह है। शरीर पुलकित हो रहा है।

जनकपुर व विचित्र मंडप देख देवता अपने को फीका समझने लगे

देखि जनकपुरु सुर अनुरागे। निज निज लोक सबहिं लघु लागे ॥314:4॥
चितवहिं चकित बिचित्र बिताना। रचना सकल अलौकिक नाना ॥314:5॥

देखि जनकपुरु सुर अनुरागे = जनकपुर को देखकर देवता अनुरक्त हो गये, *निज निज लोक सबहिं लघु लागे* = उन्हें अपने-अपने लोक फीके लगने लगे, *चितवहिं चकित बिचित्र बिताना* = आश्चर्यचकित होकर विचित्र मंडप को देखते हैं, *रचना सकल अलौकिक नाना* = उसकी सारी रचना अलौकिक है।

नगर नारि नर रूप निधाना। सुघर सुधरम सुसील सुजाना ॥314:6॥
तिन्हहि देखि सब सुर सुरनारीं। भए नखत जनु बिधु उजिआरीं ॥314:7॥

नगर नारि नर रूप निधाना = नगर के स्त्री-पुरुष बहुत सुंदर हैं, *सुघर सुधरम सुसील सुजाना* = स्वस्थ हैं; धर्मात्मा हैं; सुशील व ज्ञानवान् हैं, *तिन्हहि देखि सब सुर सुरनारीं* = उन्हें देखकर सब देवता व उनकी पत्नियाँ, *भए नखत जनु बिधु उजिआरीं* = इस प्रकार तेजहीन हो गये जैसे चन्द्रमा के प्रकाश में तारेगण हो जाते हैं।

देवताओं ने आकाश से पहले जनकपुर देखा। वह बहुत सुंदर दिखाई दिया। उन्हें अपने लोक फीके लगने लगे। जनकपुर के राज-भवन के निकट आ गये, विचित्र मंडप दिखाई दिया। इसकी रचना अलौकिक लगी। नगर के स्त्री-पुरुष सब बहुत सुंदर, सुशील, धर्मात्मा व ज्ञानवान् दिखाई दिये। देवताओं के साथ देवांगनायें भी थीं। उन्हें लगा इनके सामने हमारी सुंदरता कुछ नहीं है। जैसे चन्द्रमा के प्रकाश के सामने तारों का प्रकाश तेजहीन हो जाता है।

ब्रह्मा जी आश्चर्यचकित! उन्हें अपनी रचना कहीं नहीं दिखी

बिधिहि भयउ आचरजु बिसेषी। निज करनी कछु कतहुँ न देखी ॥314:8॥

बिधिहि भयउ आचरजु बिसेषी = ब्रह्मा जी को विशेष आश्चर्य हुआ, *निज करनी कछु कतहुँ न देखी* = क्योंकि उन्हें अपनी रचना कहीं दिखी नहीं।

जनकपुर की शोभा, दशरथ जी सहित चारों भाइयों की अलौकिकता, विचित्र मंडप इत्यादि देखकर ब्रह्मा जी को देवताओं से ज्यादा आश्चर्य हुआ, क्यों? उन्हें लगा कि हमने जो जगत् की रचना कर रखी है उसमें से यहाँ कोई वस्तुयें हैं ही नहीं। जो मणियाँ हमारी खदानों में हैं उनमें से यहाँ कोई नहीं है। तुलसीदास जी हम सबको भी यह बताना चाहते हैं कि जैसे राम व सीता स्वयं दिव्य हैं इसी प्रकार उनके आभूषण, धनुष-बाण, सवारी, सजावट इत्यादि पंच भौतिक तत्त्वों से नहीं बने हैं, सब अलौकिक हैं।

शिव जी ने समझाया, यह राम-सीता का अलौकिक विवाह है

सिवँ समुझाए देव सब जनि आचरज भुलाहु ।
हृदयँ बिचारहु धीर धरि सिय रघुबीर बिआहु ॥दोहा 314॥

सिवँ समुझाए देव सब = शिव जी ने सभी देवताओं को समझाया, *जनि आचरज भुलाहु* = इस प्रकार आश्चर्य में मत रहो, *हृदयँ बिचारहु धीर धरि* = मन में धैर्य धारण करके यह सोचो कि, *सिय रघुबीर बिआहु* = यह राम व सीता का विवाह है।

जिन्ह कर नामु लेत जग माहीं। सकल अमंगल मूल नसाहीं ॥315:1॥
करतल होहिं पदारथ चारी। तेइ सिय रामु कहेउ कामारी ॥315:2॥
एहि बिधि संभु सुरन्ह समुझावा। पुनि आगें बर बसह चलावा ॥315:3॥

जिन्ह कर नामु लेत जग माहीं = जिनका नाम लेते ही संसार में, *सकल अमंगल मूल नसाहीं* = सारे अमंगल जड़ से समाप्त हो जाते हैं, *करतल होहिं पदारथ चारी* = चारों फल हाथ में आ जाते हैं, *तेइ सिय रामु कहेउ कामारी* = शंकर जी कहते हैं ये वही राम व सीता हैं, *एहि बिधि संभु सुरन्ह समुझावा* = इस प्रकार शिव जी ने देवताओं को समझाकर, *पुनि आगें बर बसह चलावा* = फिर अपने श्रेष्ठ बैल नंदी को आगे बढ़ा दिया।

जब ब्रह्मा जी यहाँ-वहाँ देखने लगे तब शिव जी ने देवताओं को समझाया, अपने से बड़ों को सीधे नहीं कहते। शिव जी का लौकिक व्यवहार सदैव प्रेरणादायक रहता है। कहते हैं, इस प्रकार आश्चर्य मत करो। यह तो परब्रह्म राम व उनकी आदिशक्ति सीता का विवाह हो रहा है। इनका नाम लेते ही समस्त अमंगल जड़ से समाप्त हो जाते हैं। अर्थ, धर्म, काम व मोक्ष, ये चारों फल सहज ही प्राप्त हो जाते हैं। शिव जी ज्ञान व भक्ति, दोनों का उपदेश देते हैं। इस प्रकार समझाने के बाद नंदी बैल पर बैठे हुए शिव जी आगे चल दिये।

दशरथ जी के साथ विप्र व साधु साक्षात् सुख जैसे दिखे

देवन्ह देखे दसरथु जाता। महामोद मन पुलकित गाता ॥315:4॥
साधु समाज संग महिदेवा। जनु तनु धरें करहिं सुख सेवा ॥315:5॥

देवन्ह देखे दसरथु जाता = देवताओं ने दशरथ जी को जाते हुए देखा, *महामोद मन पुलकित गाता* = उनका मन प्रसन्न व शरीर रोमांचित है, *साधु समाज संग महिदेवा* = उनके साथ साधुओं व विप्रों का समूह है, *जनु तनु धरें करहिं सुख सेवा* = ऐसा लगता है जैसे समस्त सुख शरीर धारण करके सेवा कर रहे हैं।

देवताओं ने देखा कि दशरथ जी बारात लेकर जनक जी के यहाँ जा रहे हैं। उनका मन बहुत अधिक प्रसन्न व शरीर पुलकित है। उनके साथ में चल रहा साधुओं व विप्रों का समाज इस प्रकार लग रहा है मानो सुखों ने ही शरीर धारण कर लिया हो। सब प्रकार का आनंद ही साथ में चल रहा है।

चारों पुत्र ऐसे दिखे मानो चारों प्रकार की मुक्ति ने शरीर धारण किया हो

सोहत साथ सुभग सुत चारी। जनु अपबरग सकल तनुधारी ॥315:6॥

सोहत साथ सुभग सुत चारी = चारों सुंदर पुत्र साथ में ऐसे सुशोभित हैं, *जनु अपबरग सकल तनुधारी* = मानो चारों तरह की मुक्ति ने शरीर धारण कर लिया हो।

पहले कहा था कि चारों पुत्र चार पुरुषार्थ– अर्थ, धर्म, काम व मोक्ष जैसे लगते हैं। अब चलती हुई बारात में महाराज दशरथ के साथ इनके सुंदर स्वरूप को देखकर देवताओं को लगा कि मानो चार तरह की मुक्ति– सालोक्य, सामीप्य, सारूप्य, सायुज्य ने शरीर धारण कर लिया हो। इसे समझने का प्रयास करें।

1. जिस लोक में भगवान हैं वहाँ यदि व्यक्ति पहुँच जाये तो उसे सालोक्य मुक्ति कहते हैं। शत्रुघ्न जी यहाँ पर सालोक्य मुक्ति जैसे हैं।
2. जब व्यक्ति भगवान के नजदीक रहने लगता है तो उसे सामीप्य मुक्ति कहते हैं। लक्ष्मण जी सदैव राम के पास रहते हैं। वे सामीप्य मुक्ति जैसे हैं।
3. जब भगवान जैसा रूप प्राप्त हो जाये तो उसे सारूप्य कहते हैं। भरत जी को राम जैसा श्यामवर्ण प्राप्त है। वे सारूप्य मुक्ति के समान लगते हैं।
4. मुक्ति की अंतिम अवस्था में भेद रह ही नहीं जाता है, व्यक्ति भगवान से एकाकार हो जाता है, उसे सायुज्य मुक्ति कहते हैं। प्रभु राम सायुज्य मुक्ति हैं।

नीलमणि व स्वर्ण की जोड़ियाँ, फिर राम को देख देवता प्रसन्न

मरकत कनक बरन बर जोरी। देखि सुरन्ह भै प्रीति न थोरी ॥315:7॥
पुनि रामहि बिलोकि हियँ हरषे। नृपहि सराहि सुमन तिन्ह बरषे ॥315:8॥

मरकत = नीलमणि व, *कनक* = स्वर्ण, *बरन बर जोरी देखि* = के रंग की सुंदर जोड़ी को देखकर, *सुरन्ह भै प्रीति न थोरी* = देवताओं को कम प्रेम नहीं हुआ,

पुनि रामहि बिलोकि हियँ हरषे = फिर राम को देखकर मन में हर्षित हुए, *नृपहि सराहि सुमन तिन्ह बरषे* = राजा की प्रशंसा करके फूलों की वर्षा की।

चमचमाती नीली मणि व स्वर्ण की दो जोड़ियों की तरह राम-लक्ष्मण व भरत-शत्रुघ्न को देख देवताओं के मन में बहुत प्रेम आया। अब उनकी दृष्टि राम पर टिक गयी, मन हर्षित हो गया। महाराज जनक की प्रशंसा कर फूलों की वर्षा करने लगे।

राम को दूल्हे रूप में देख शिव-पार्वती पुलकित, प्रेमाश्रु आ गये

राम रूपु नख सिख सुभग बारहिं बार निहारि ।
पुलक गात लोचन सजल उमा समेत पुरारि ॥दोहा 315॥

राम रूपु नख सिख सुभग = प्रभु राम का पैर से लेकर सिर तक सुंदर रूप, *बारहिं बार निहारि* = बार-बार देखकर, *पुलक गात* = शरीर पुलकित हो गया, *लोचन सजल* = नेत्रों में जल आ गये, *उमा समेत पुरारि* = पार्वती सहित शिव जी के।

केकि कंठ दुति स्यामल अंगा। तड़ित बिनिंदक बसन सुरंगा ॥316:1॥
ब्याह बिभूषन बिबिध बनाए। मंगल सब सब भाँति सुहाए ॥316:2॥

केकि कंठ दुति = मोर के गले के समान, *स्यामल अंगा* = श्यामल शरीर है, *तड़ित बिनिंदक* = बिजली की चमक को फीका करते हुए, *बसन सुरंगा* = पीले रंग के वस्त्र धारण किये हैं, *ब्याह बिभूषन* = विवाह के आभूषण, *बिबिध बनाए* = अनेक तरह के बने हुए पहने हैं, *मंगल सब* = सभी मांगलिक हैं, *सब भाँति सुहाए* = सब प्रकार से सुंदर हैं।

सरद बिमल बिधु बदनु सुहावन। नयन नवल राजीव लजावन ॥316:3॥
सकल अलौकिक सुंदरताई। कहि न जाइ मनहीं मन भाई ॥316:4॥

सरद बिमल बिधु = शरद पूर्णिमा के चन्द्रमा जैसे, *बदनु सुहावन* = सुंदर मुख है, *नयन नवल राजीव लजावन* = ताजे खिले हुए कमल को लजाने वाले नेत्र हैं, *सकल अलौकिक सुंदरताई* = सारी सुंदरता अलौकिक है, *कहि न जाइ* = वाणी से बताया नहीं जा सकता, *मनहीं मन भाई* = मन ही मन बहुत प्रिय है।

शिव जी राम के विशेष भक्त हैं, साथ में माँ पार्वती भी हैं। वर के रूप में सजे हुए प्रभु राम को देखकर शिव-पार्वती के शरीर पुलकित हो गये, आँखों में प्रेम के अश्रु आ गये। शिव जी को राम कैसे दिखे, उसका सुंदर चित्रण तुलसीदास जी इस प्रकार करते हैं–

1. राम के श्यामवर्ण की तुलना मेघ, नीलमणि व नीले कमल से की जाती है। परंतु यहाँ पर मोर के गले के नीले रंग से की है। क्यों? मोर जब नाचता है तो कलगी लगी रहती है, सजा रहता है। इस समय राम वर हैं।
2. सुंदर तरीके से रंगा हुआ चमकदार पीला वस्त्र पहने हैं। वर राम के वस्त्र की चमक आकाशीय बिजली की चमक से ज्यादा तेज है।
3. विवाह के समय पहने जाने वाले अनेक तरह के मांगलिग आभूषण जैसे हाथ में कंगन, सिर पर कलगी इत्यादि धारण किये हैं। ये बहुत सुंदर लग रहे हैं।
4. वर राम के मुख-मण्डल की शोभा शरद ऋतु के सुंदर प्रकाशवान् चन्द्रमा जैसी है।
5. लाल नेत्र ताजे खिले हुए कमल के समान प्रतीत होते हैं।

राम की सुंदरता लौकिक नहीं है, पूरा श्रृंगार उसी परमतत्त्व का है जिस परमतत्त्व का राम का शरीर है। यह सुंदर स्वरूप मन में बहुत अच्छा लगता है। वाणी में इतनी शक्ति नहीं कि उसका वर्णन किया जा सके।

राम के साथ तीनों भाई घोड़ों को नचाते चल रहे हैं

बंधु मनोहर सोहहिं संगा। जात नचावत चपल तुरंगा ॥316:5॥
राजकुँअर बर बाजि देखावहिं। बंस प्रसंसक बिरिद सुनावहिं ॥316:6॥

बंधु मनोहर सोहहिं संगा = साथ में सुंदर भाई सुशोभित हैं, *जात नचावत चपल तुरंगा* = जो चंचल घोड़ों को नचाते हुए चल रहे हैं, *राजकुँअर बर बाजि देखावहिं* = राजकुमार श्रेष्ठ घोड़ों की चाल दिखाते हैं, *बंस प्रसंसक बिरिद सुनावहिं* = वंश की प्रशंसा करने वाले विरदावली गा रहे हैं।

राम के साथ तीनों भाई सुशोभित हैं। ये अपने घोड़ों को नचाते हुए चल रहे हैं। ये सुंदर घोड़े बाजे की थाप पर नाचते हुए चलते हैं। विरदावली गाने वाले मागध सूत भी हैं जो वंश की परंपरा गा-गाकर बता रहे हैं।

वर राम का घोड़ा तो इतना सुंदर है जैसे कामदेव ही हो

जेहि तुरंग पर रामु बिराजे। गति बिलोकि खगनायकु लाजे ॥316:7॥
कहि न जाइ सब भाँति सुहावा। बाजि बेषु जनु काम बनावा ॥316:8॥

जेहि तुरंग पर रामु बिराजे = जिस घोड़े पर राम बैठे हैं, *गति बिलोकि खगनायकु लाजे* = उसकी गति देख पक्षिराज गरुड़ भी लज्जित हो जाये, *कहि न जाइ सब भाँति सुहावा* = उसका वर्णन नहीं हो सकता वह सब प्रकार से सुंदर है, *बाजि बेषु जनु काम बनावा* = मानो कामेदव ने घोड़े का वेश धारण कर लिया हो।

जनु बाजि बेषु बनाइ मनसिजु राम हित अति सोहई ।
आपनें बय बल रूप गुन गति सकल भुवन बिमोहई ॥
जगमगत जीनु जराव जोति सुमोति मनि मानिक लगे ।
किंकिनि ललाम लगामु ललित बिलोकि सुर नर मुनि ठगे ॥छंद॥

जनु बाजि बेषु बनाइ मनसिजु = मानो कामदेव ने घोड़े का वेश बनाकर, *राम हित* = राम के लिये, *अति सोहई* = बहुत शोभायमान है, *आपनें बय बल रूप गुन गति* = वह अपनी अवस्था; बल; रूप; गुण और चाल से, *सकल भुवन बिमोहई* = समस्त लोकों को मोहित कर रहा है, *जगमगत जीनु जराव जोति* = जड़ाऊ जीन ज्योति जैसी चमक रही है, *सुमोति मनि मानिक लगे* = क्योंकि उसमें सुंदर मोती व माणिक लगे हैं। *किंकिनि ललाम लगामु ललित* = घुँघुरू लगी ललित लगाम है, *बिलोकि सुर नर मुनि ठगे* = जिसे देखकर देवता; मनुष्य व मुनि आश्चर्यचकित हैं।

प्रभु मनसहिं लयलीन मनु चलत बाजि छबि पाव ।
भूषित उड़गन तड़ित घनु जनु बर बरहि नचाव ॥दोहा 316॥

प्रभु मनसहिं = प्रभु राम की इच्छा में, *लयलीन मनु* = मन को लीन किये हुए, *चलत बाजि* = चलता हुआ घोड़ा, *छबि पाव* = शोभायमान है, *भूषित उड़गन तड़ित घनु* = तारों व बिजली से सज्जित बादल, *जनु* = मानो, *बर बरहि* = सुंदर मोर को, *नचाव* = नचा रहा हो।

राम जिस घोड़े पर वर बनकर सवार हैं उसे देखकर मुनि, देवता व मनुष्य सब ठगे से रह जाते हैं।

1. घोड़ा एकदम युवा, सुंदर, शक्तिशाली, गुणी है और चाल इतनी तेज है कि विष्णु जी की सवारी पक्षी-राज गरुड़ भी अपने को धीमा समझने लगे।
2. घोड़े के ऊपर जो जीन कसी है वह सुंदर मोतियों व मणियों से जड़ी हुई जगमगा रही है। घुँघुरुओं से सजी हुई लगाम भी बहुत सुंदर है।
3. घोड़े ने अपने मन को राम के मन के साथ इस प्रकार लीन कर लिया है कि राम सोचते हैं रुक जाये तो वह रुक जाता है। सोचते हैं चले तो चल देता है।
4. ऐसा लगता है कि कामदेव ने स्वयं घोड़े का रूप धारण कर लिया हो।
5. श्यामवर्ण के राम, पीताम्बर पहने, चमकती मोती व मणियों की जीन पर बैठे हैं। प्रभु का स्पर्श पाकर घोड़ा अपने आप आनंदित होकर जब नाचता है तो ऐसा लगता है जैसे आकाश में तारे हैं, बिजली की चमक है, मेघ है जिन्हें देखकर मोर नाच रहा हो।

कामदेव व राम के संबंध को समझें

सारे विश्व को कामनाओं के देवता कामदेव ने अपने वश में कर रखा है। हम सबको वही नचाता रहता है। वह जैसा चाहे हम नाचते रहते हैं। यहाँ पर राम कामदेव के ऊपर बैठ गये हैं। उसे अपने वश में कर लिया है। राम जैसा चाहें वैसा वह नाचेगा। उन्हीं के अनुसार चलेगा। बारात का आनंद लेते हुए इस बात को भी समझकर प्रभु से प्रार्थना करते रहें कि हम भी कामनाओं के घोड़े पर कभी तो सवार हो सकें।

ब्रह्मा, विष्णु व महेश, जिसके जितने नेत्र हैं उससे राम को देखते हैं

जेहिं बर बाजि रामु अवसारा। तेहि सारदउ न बरनै पारा ॥317:1॥
संकरु राम रूप अनुरागे। नयन पंचदस अति प्रिय लागे ॥317:2॥
हरि हित सहित रामु जब जोहे। रमा समेत रमापति मोहे ॥317:3॥
निरखि राम छबि बिधि हरषाने। आठइ नयन जानि पछिताने ॥317:4॥

जेहिं बर बाजि रामु अवसारा = जिस सुंदर घोड़े पर राम सवार हैं, *तेहि सारदउ न बरनै पारा* = उसका वर्णन सरस्वती जी भी नहीं कर सकती हैं, *संकरु राम रूप अनुरागे* = शंकर जी राम का रूप देखकर ऐसे गद्‌गद् हुए, *नयन पंचदस अति प्रिय लागे* = कि उन्हें अपने पन्द्रह नेत्र प्रिय लगने लगे, *हरि हित सहित रामु जब जोहे* = विष्णु जी ने जब प्रेम सहित राम की ओर देखा, *रमा समेत*

रमापति मोहे = तो लक्ष्मी जी सहित वे भी मोहित हो गये, *निरखि राम छबि बिधि हरषाने* = राम की सुंदरता देखकर ब्रह्मा जी हर्षित हैं, *आठइ नयन जानि पछिताने* = आठ ही नेत्रों से देख पाने से पछता रहे हैं।

जिस घोड़े पर राम सवार हैं सरस्वती भी उसका वर्णन नहीं कर सकती हैं। आभूषणों से सजे राम व घोड़े को देखकर शिव जी गद्‌गद् हो जाते हैं। शिव जी के पाँच मुख हैं, प्रत्येक में तीन नेत्र हैं, इस प्रकार पन्द्रहों नेत्रों से राम को देखकर शिव जी प्रसन्न हैं। विष्णु जी राम के रूप को देख लक्ष्मी जी सहित मोहित हो गये। सभी देवता अपनी शक्तियों सहित हैं। ब्रह्मा जी के चार मुख व आठ नेत्र हैं। उन्हें पछतावा लग रहा है कि हम आठ ही नेत्रों से वर राम के दिव्य शृंगार को देख पा रहे हैं।

इन्द्र हजार नेत्रों से देखकर अपने को भाग्यशाली मान रहे हैं

सुर सेनप उर बहुत उछाहू। बिधि ते डेवढ़ लोचन लाहू ॥317:5॥
रामहि चितव सुरेस सुजाना। गौतम श्रापु परम हित माना ॥317:6॥
देव सकल सुरपतिहि सिहाहीं। आजु पुरंदर सम कोउ नाहीं ॥317:7॥
मुदित देवगन रामहि देखी। नृपसमाज दुहुँ हरषु बिसेषी ॥317:8॥

सुर सेनप उर बहुत उछाहू = देवताओं के सेनापति स्वामिकार्तिकेय के मन में बहुत उत्साह है, *बिधि ते डेवढ़ लोचन लाहू* = ब्रह्मा जी से ड्योढ़े नेत्रों से देख पा रहे हैं, *रामहि चितव सुरेस सुजाना* = राम को देखकर इन्द्र अपने को ज्ञानवान् समझ रहे हैं, *गौतम श्रापु परम हित माना* = गौतम ऋषि के श्राप को अपना परम हित मान रहे हैं, *देव सकल सुरपतिहि सिहाहीं* = सारे देवता इन्द्र से ईर्ष्या करके कहते हैं, *आजु पुरंदर सम कोउ नाहीं* = आज इन्द्र के समान दूसरा कोई नहीं है, *मुदित देवगन रामहि देखी* = राम को देखकर देवता प्रसन्न हैं, *नृपसमाज दुहुँ हरषु बिसेषी* = दोनों ओर के राजाओं का समाज हर्षित है।

देवताओं के सेनापति स्वामिकार्तिकेय हैं। उनके छः मुख हैं। इसलिये बारह आँखें हैं। उन्हें लगा कि हम तो ब्रह्मा जी से ड्योढ़े ज्यादा नेत्रों से राम को देख रहे हैं। इसलिये उनके मन में बहुत उत्साह है। गौतम ऋषि के श्राप के कारण

इन्द्र के हजार नेत्र हैं। वे श्राप को हितकारी समझने लगे। हजार नेत्रों से राम को देखकर अपने को ज्ञानवान् समझने लगे। सारे देवता इन्द्र से ईर्ष्या करके कहते हैं ये तो हम सबसे ज्यादा अच्छे से देख पा रहे हैं।

बारात राजमहल के नजदीक पहुँची, परछन की तैयारी

अति हरषु राजसमाज दुहु दिसि दुंदुभीं बाजहिं घनी ।
बरषहिं सुमन सुर हरषि कहि जय जयति जय रघुकुलमनी ॥
एहि भाँति जानि बरात आवत बाजने बहु बाजहीं ।
रानी सुआसिनि बोलि परिछनि हेतु मंगल साजहीं ॥छंद॥

अति हरषु राजसमाज दुहु = दोनों तरफ के राज-समाज बहुत प्रसन्न हैं, *दिसि दुंदुभीं बाजहिं घनी* = दोनों तरफ बाजे बजने लगे, *बरषहिं सुमन सुर हरषि कहि* = हर्षित होकर देवता फूलों की वर्षा यह कहकर करते हैं कि, *जय जयति जय रघुकुलमनी* = रघुकुलमणि श्रीराम की जय हो, *एहि भाँति जानि बरात आवत* = इस प्रकार बारात को आती हुई जानकर, *बाजने बहु बाजहीं* = बहुत से बाजे बजने लगे, *रानी सुआसिनि बोलि* = रानी स्त्रियों को बुलवाकर, *परिछनि हेतु मंगल साजहीं* = परछन के लिये मंगल द्रव्य सजाने लगीं।

सजि आरती अनेक बिधि मंगल सकल सँवारि ।
चलीं मुदित परिछनि करन गजगामिनि बर नारि ॥दोहा 317॥

सजि आरती अनेक बिधि = अनेक प्रकार से आरती सजाकर, *मंगल सकल सँवारि* = समस्त मंगल द्रव्यों को सजाकर, *चलीं मुदित परिछनि करन* = प्रसन्नता से परछन के लिये चलती हैं, *गजगामिनि बर नारि* = इन सुंदर स्त्रियों की चाल हथिनियों जैसी है।

एक तरफ जनक जी का राज समाज है दूसरी तरफ दशरथ जी का, दोनों तरफ बहुत अधिक हर्ष का माहौल है, बाजे बजाये जा रहे हैं। देवता आकाश से फूलों की वर्षा करके श्रीराम की जय-जयकार करते हैं। बारात जब महल के नजदीक पहुँची, रानी सुनयना स्त्रियों को बुलवाकर परछन की तैयारी करवाने लगीं। अनेक प्रकार से आरती सजाकर, मंगल सामग्री लेकर, सुंदर स्त्रियाँ प्रसन्नता से परछन करने चलती हैं। बारात को जनवासे से चलकर

जनकपुर के द्वार तक पहुँचने में जितना समय लगा, तब तक रास्ते में चलती हुई बारात का वर्णन कर दिया।

सज-धज कर स्त्रियाँ मंगलगीत गाते परछन के लिये चलीं

बिधुबदनीं सब सब मृगलोचनि। सब निज तन छबि रति मदु मोचनि ॥318:1॥
पहिरें बरन बरन बर चीरा। सकल बिभूषन सजें सरीरा ॥318:2॥
सकल सुमंगल अंग बनाएँ। करहिं गान कलकंठि लजाएँ ॥318:3॥
कंकन किंकिनि नुपूर बाजहिं। चालि बिलोकि काम गज लाजहिं ॥318:4॥
बाजहिं बाजने बिबिध प्रकारा। नभ अरु नगर सुमंगलचारा ॥318:5॥

बिधुबदनीं सब = सभी स्त्रियाँ चन्द्रमा के समान मुखवाली हैं, *सब मृगलोचनि* = सबके नेत्र हिरणी की आँखों जैसे हैं, *सब निज तन छबि रति मदु मोचनि* = सभी अपने शरीर की सुंदरता से रति के गर्व को कम कर रही हैं, *पहिरें बरन बरन बर चीरा* = रंग-बिरंगे सुंदर वस्त्र पहने हैं, *सकल बिभूषन सजें सरीरा* = सभी अंग आभूषण से सजे हैं, *सकल सुमंगल अंग बनाएँ* = सभी अंगों का मांगलिक वस्तुओं से श्रृंगार किये हैं, *करहिं गान कलकंठि लजाएँ* = कोयल से भी मधुर वाणी में गा रही हैं, *कंक किंकिनि नुपूर बाजहिं* = कंगन; करधनी; और नूपुर बज रहे हैं, *चालि बिलोकि काम गज लाजहिं* = चाल देखकर कामदेव के हाथी भी लजा जायें, *बाजहिं बाजने बिबिध प्रकारा* = अनेक प्रकार के बाजे बज रहे हैं, *नभ अरु नगर सुमंगलचारा* = आकाश व नगर में मंगलाचार हो रहे हैं।

जो स्त्रियाँ वर राम के परछन के लिये जा रही हैं उन सबकी सुंदरता का वर्णन है। मुख की सुंदरता चन्द्रमा के समान है, आँखें मृगनी की आँखों जैसी सुंदर हैं और चाल हाथी के समान है। रंग-बिरंगे वस्त्र पहने हैं। शरीर मांगलिक वस्तुओं से सजा है, जैसे पैरों में महावर, हाथों में मेंहदी, नाखूनों में रंग, माथे पर बिंदी लगी है। शरीर के अंगों में सुंदर आभूषण धारण किये हैं। कोयल से भी ज्यादा मधुर वाणी में मंगलगीत गा रही हैं। इनके चलने से कंगन, करधन, पायल में लगे घुँघुरु बज रहे हैं। कामदेव की पत्नी रति से भी ज्यादा ये सब सुंदर हैं। आकाश में व नगर में तरह-तरह के बाजे बज रहे हैं, सब तरफ मांगलिकता व सुंदरता है।

देवांगनायें नारियों का वेष बनाकर रनिवास में शामिल

सची सारदा रमा भवानी। जे सुरतिय सुचि सहज सयानी ॥318:6॥
कपट नारि बर बेष बनाई। मिलीं सकल रनिवासहिं जाई ॥318:7॥
करहिं गान कल मंगल बानीं। हरष बिबस सब काहुँ न जानीं ॥318:8॥

सची सारदा = इन्द्राणी; सरस्वती, *रमा भवानी* = लक्ष्मी व पार्वती जी, *जे सुरतिय सुचि सहज सयानी* = जो स्वभाव से ही सुंदर व समझदार देवताओं की स्त्रियाँ हैं, *कपट नारि बर बेष बनाई* = छल से सुंदर स्त्री का वेष बनाकर, *मिलीं सकल रनिवासहिं जाई* = रनिवास में स्त्रियों के साथ वे सब मिलकर, *करहिं गान कल मंगल बानीं* = मनोहर वाणी से मंगलगान करने लगीं, *हरष बिबस सब काहुँ न जानीं* = हर्ष के वशीभूत होने से किसी ने उन्हें पहचाना नहीं।

देवता तो आकाश से बारात देखते रहे, परंतु उनके साथ की देवांगनाओं ने क्या किया? इन्द्राणी, सरस्वती, ब्रह्माणी, लक्ष्मी व पार्वती व अन्य देव-स्त्रियाँ जो समझदार थीं, जिन्हें लगा कि हम अपने आपको अन्य स्त्रियों के साथ छिपा लेंगी वे कपट से नारी का वेष बनाकर रनिवास में घुस गयीं। सब के साथ ये भी मंगलगीत गाने लगीं। सब आनंद में मग्न हैं, कोई किसी को पहचान नहीं पाया।

आनंदकंद ब्रह्म को वर देखकर सब प्रेमाश्रु से भरकर रोमांचित

को जान केहि आनंद बस सब ब्रह्मु बर परिछन चली ।
कल गान मधुर निसान बरषहिं सुमन सुर सोभा भली ॥
आनंदकंदु बिलोकि दूलहु सकल हियँ हरषित भई ।
अंभोज अंबक अंबु उमगि सुअंग पुलकावलि छई ॥छंद॥

को जान केहि = कौन किसे जाने, *आनंद बस सब* = सब आनंदित होकर, *ब्रह्मु बर परिछन चली* = वर बने हुए ब्रह्म के परछन के लिये चल दीं, *कल गान मधुर निसान* = मंगल गान के साथ बाजे बज रहे हैं, *बरषहिं सुमन सुर* = देवता फूल बरसा रहे हैं, *सोभा भली* = बहुत शोभा है, *आनंदकंदु बिलोकि दूलहु* = आनंद से भरपूर दुल्हे को देखकर, *सकल हियँ हरषित भई* = सभी मन में हर्षित हो गयीं, *अंभोज अबंक* = कमल के समान नेत्रों में, *अंबु उमगि* = प्रेम के अश्रु आ गये, *सुअंग पुलकावलि छई* = सुंदर शरीर रोमांचित हो गया।

जो सुखु भा सिय मातु मन देखि राम बर बेषु ।
सो न सकहिं कहि कलप सत सहस सारदा सेषु ॥दोहा 318॥

जो सुखु भा सिय मातु मन = सीता जी की माँ के मन में जो सुख हुआ, *देखि राम बर बेषु* = राम को वर के वेष में देखकर, *सो न सकहिं कहि* = उसका वर्णन नहीं कर सकते, *कलप सत* = सौ कल्पों में भी, *सहस सारदा सेषु* = हजार सरस्वती व हजार शेषनाग।

कौन किसकी ओर देखे! जिसका ध्यान ब्रह्म की तरफ होगा, जिसे ब्रह्म का परछन करना है, वह आसपास क्यों देखेगा कि कौन है। एक दूसरे को कोई पहचान ही नहीं रहा है। तुलसीदास जी बीच-बीच में यह याद दिला देते हैं कि राम ब्रह्म हैं, जिनका परछन होने जा रहा है। यही जीवनशैली हमारी भी होनी चाहिये। संसार में कार्य करते-करते भगवान का चिंतन करते रहो। देवता फूल बरसा रहे हैं। मधुर गीत गाये जा रहे हैं। स्त्रियाँ रनिवास से निकलकर द्वार पर आ गयीं। बाहर आकर दूल्हे को देखा जो आनंदकंद हैं। आनंद ही ब्रह्म का लक्षण है। आनंद से परिपूर्ण दूल्हे राम को देखकर स्त्रियाँ इतनी आनंदित हो गयीं कि उनके नेत्रों में प्रेम का जल भर आया, सुंदर शरीर रोमांचित हो गया। राम के सुदंर स्वरूप को देखकर सीता जी की माँ सुनयना को जो सुख की अनुभूति हुई उसे सरस्वती व शेषनाग हजारों वर्षों तक वर्णन करते रहें तो भी नहीं कर सकते।

रानी ने वर राम का परछन किया, वेदरीति व कुलरीति पूरी की

नयन नीरु हटि मंगल जानी। परिछनि करहिं मुदित मन रानी ॥319:1॥
बेद बिहित अरु कुल आचारू। कीन्ह भली बिधि सब ब्यवहारू ॥319:2॥

नयन नीरु हटि = नेत्रों के जल को रोका, *मंगल जानी* = मंगल का अवसर समझकर, *परिछनि करहिं मुदित मन रानी* = प्रसन्न मन से रानी परछन करती हैं, *बेद बिहित* = वेदों में कहे हुए, *अरु कुल आचारू* = और कुल की रीति के अनुसार, *कीन्ह भली बिधि सब ब्यवहारू* = सभी रस्में अच्छी तरह से पूरी कीं।

मंगल का अवसर समझकर प्रेम के आँसुओं को स्त्रियों ने आँख में ही रोक लिया। कन्या की माँ जब वर की द्वार पर पहली बार आरती करती है, उसे

भारतीय विवाह की रीति में परछन कहते हैं। दूल्हा राम घोड़े पर ही बैठे हैं, रानी सुनयना ने प्रसन्न मन से उनकी आरती की। वैदिक रीति व कुल की रीति से सब व्यवहार किया गया।

घोड़े से उतरकर वर-राम पैदल विवाह-मंडप की ओर चले

पंच सबद धुनि मंगल गाना। पट पाँवड़े परहिं बिधि नाना ॥319:3॥
करि आरती अरघु तिन्ह दीन्हा। राम गमनु मंडप तब कीन्हा ॥319:4॥

पंच सबद धुनि = पाँच प्रकार के बाजों के शब्द व पाँच ध्वनि हो रही है, *मंगल गाना* = मंगलगीत गाये जा रहे हैं, *पट पाँवड़े परहिं बिधि नाना* = अनेक प्रकार के वस्त्रों के पाँवड़े बिछाये गये, *करि आरती* = रानी ने आरती करके, *अरघु तिन्ह दीन्हा* = अर्घ्य दिया, *राम गमनु मंडप तब कीन्हा* = तब राम मंडप की ओर चल दिये।

दसरथु सहित समाज बिराजे। बिभव बिलोकि लोकपति लाजे ॥319:5॥
समयँ समयँ सुर बरषहिं फूला। सांति पढ़हिं महिसुर अनुकूला ॥319:6॥
नभ अरु नगर कोलाहल होई। आपनि पर कछु सुनइ न कोई ॥319:7॥

दसरथु सहित समाज बिराजे = महाराज दशरथ बारातियों सहित द्वार पर ही हैं, *बिभव बिलोकि लोकपति लाजे* = उनके वैभव को देखकर लोकपाल भी लजा गये, *समयँ समयँ सुर बरषहिं फूला* = समय-समय पर देवता फूल बरसते हैं, *सांति पढ़हिं महिसुर अनुकूला* = अवसर के अनुकूल विप्र शांति पाठ करते हैं, *नभ अरु नगर कोलाहल होई* = आकाश व नगर में शोर मच रहा है, *आपनि पर कछु सुनइ न कोई* = अपनी स्वयं की व दूसरों की कुछ बात सुनायी नहीं देती है।

तन्त्री, ताल, झाँझ, नगारा व तुरही, इन पाँच प्रकार के बाजों के शब्द बज रहे हैं। वेदध्वनि, वन्दिध्वनि, जयध्वनि, शंखध्वनि और हर्षध्वनि, ये पाँच प्रकार की ध्वनि हो रही है। मंगलगीत गाये जा रहे हैं। राम घोड़े से उतरे, जिस रास्ते से मंडप में जाना था वहाँ सुंदर वस्त्रों के पाँवड़े बिछाये गये थे, उसी के ऊपर से पैदल चलकर मंडप की ओर गये। जब अंदर जाने लगे तो अर्घ्य देकर दुबारा आरती हुई। महाराज दशरथ व बारात अभी द्वार पर ही हैं। उनका वैभव देखकर लोकपति कुबेर भी लज्जित हैं। समय-समय पर देवता फूल बरसाते

हैं। अवसर के अनुकूल विप्र शांति पाठ कर रहे हैं। आकाश व नगर में इतना शोर है कि कुछ सुनाई नहीं दे रहा है। सबका ध्यान दूल्हे राम की तरफ है, कोई कुछ बोलता भी है तो कोई ध्यान नहीं देता है।

वर-राम मंडप पहुँचे, आसन पर बैठाकर आरती की गई

एहि बिधि रामु मंडपहिं आए। अरघु देइ आसन बैठाए ॥319:8॥

एहि बिधि रामु मंडपहिं आए = इस प्रकार राम मंडप के अंदर आये, *अरघु देइ आसन बैठाए* = अर्घ्य देकर आसन पर बैठाया गया।

बैठारि आसन आरती करि निरखि बरु सुखु पावहीं ।
मनि बसन भूषन भूरि वारहिं नारि मंगल गावहीं ॥
ब्रह्मादि सुरबर बिप्र बेष बनाइ कौतुक देखहीं ।
अवलोकि रघुकुल कमल रबि छबि सुफल जीवन लेखहीं ॥छंद॥

बैठारि आसन = आसन पर बैठाकर, *आरती करि* = आरती करके, *निरखि बरु सुखु पावहीं* = वर को देखकर स्त्रियाँ सुखी हो रही हैं, *मनि बसन भूषन भूरि* = बहुत सारी मणियाँ; वस्त्र व गहने, *वारहिं* = न्योछावर करके, *नारि मंगल गावहीं* = स्त्रियाँ मंगलगीत गाती हैं, *ब्रह्मादि सुरबर* = ब्रह्मा इत्यादि श्रेष्ठ देवता, *बिप्र बेष बनाइ* = विप्र का वेष बनाकर, *कौतुक देखहीं* = इस कौतुक को देख रहे हैं, *अवलोकि रघुकुल कमल रबि छबि* = रघुकुल के कमल को खिलाने वाले सूर्य के समान राम को देखकर, *सुफल जीवन लेखहीं* = अपना जीवन सफल मान रहे हैं।

दूल्हे राम पाँवड़ों के ऊपर चलते हुए मंडप के अंदर पहुँचे, अर्घ्य देकर आसन पर बैठाकर आरती की गई। वर के रूप में खूब सजे हुए राम मंडप में बैठे हैं। उस समय वहाँ पर स्त्रियाँ ही स्त्रियाँ हैं। वे सब राम को देखकर आनंदित होती हैं। मणि, वस्त्र, आभूषण, धन इत्यादि से न्योछावर करके बाँट दी जाती है। स्त्रियों के बीच में विप्र लोग भी हैं जो वेदध्वनि कर रहे हैं। अब ब्रह्मा, विष्णु, महेश, इन्द्र इत्यादि देवतागण विप्र का वेष बनाकर मंडप में पहुँच गये हैं। वे सब प्रभु राम की यह लीला देखकर आनंदित हो अपना जीवन सफल मान रहे हैं। सूर्यवंश का कमल श्रीराम रूपी सूर्य के प्रकाश से खिल उठा है।

निचले तबके के लोगों से आशीषें लेना भारतीय समाजवाद है

नाऊ बारी भाट नट राम निछावरि पाइ ।
मुदित असीसहिं नाइ सिर हरषु न हृदयँ समाइ ॥दोहा 319॥

नाऊ बारी भाट नट = नाई; बारी; भाट व नट, *राम निछावरि पाइ* = राम की न्योछावर पाकर, *मुदित असीसहिं नाइ सिर* = सिर झुकाकर प्रसन्नता से आशीष देते हैं, *हरषु न हृदयँ समाइ* = मन में हर्ष समा नहीं रहा है।

नाई, बारी, भाट व नट इत्यादि को वर राम की न्योछावरें दी गईं, इसे पाकर ये बहुत प्रसन्नता से सिर झुकाकर दूल्हे को आशीष देते हैं। इन सबका मन अपार हर्ष से भरा है। यहाँ पर देखें कि गुरु, माता-पिता के साथ समाज के निचले वर्ग के आशीर्वाद की भी आवश्यकता होती है। इन सबका भी आदर होना चाहिये। विवाह में विप्र के साथ नाई का भी महत्त्व है, यही भारत का समाजवाद है।

द्वार पर जनक जी व दशरथ जी का समधी मिलन

मिले जनकु दसरथु अति प्रीतीं। करि बैदिक लौकिक सब रीतीं ॥320:1॥
मिलत महा दोउ राज बिराजे। उपमा खोजि खोजि कबि लाजे ॥320:2॥
लही न कतहुँ हारि हियँ मानी। इन्ह सम एइ उपमा उर आनी ॥320:3॥

मिले जनकु दसरथु अति प्रीतीं = जनक जी बहुत प्रेम से दशरथ जी से मिले, *करि बैदिक लौकिक सब रीतीं* = वैदिक व लौकिक रीतियाँ की गईं, *मिलत महा दोउ राज बिराजे* = दोनों महाराजा मिलते हुए बहुत शोभित हैं, *उपमा खोजि खोजि कबि लाजे* = इनके लिये कवि उपमा खोज-खोजकर लजा गये, *लही न कतहुँ* = जब कहीं भी उपमा नहीं मिली, *हारि हियँ मानी* = तो मन में हार मान ली, *इन्ह सम एइ* = इनके समान ये ही हैं, *उपमा उर आनी* = यही उपमा मन में बैठा ली।

मंडप के नीचे वर राम को बैठाकर, तुलसीदास जी द्वार पर क्या हो रहा है उसका वर्णन करते हैं। द्वार पर महाराज दशरथ सबसे आगे खड़े हैं। जनक जी आकर बहुत प्रेम से वैदिक व लौकिक रीति से उनसे मिलते हैं। द्वार पर कन्या

के पिता व वर के पिता को मिलना चाहिये, यह वैदिक रीति है। कैसे मिलना है? जैसे गले लगाकर, हाथ मिलाकर, पैर छूकर, भेंट देकर, यह लौकिक रीति है। इन दोनों के मिलन की सुंदरता के दृश्य का वर्णन करने के लिये कवियों को बहुत खोजने के बाद भी जब कोई उपमा नहीं मिली तो उन्होनें कहा इनके समान ये ही हैं।

देवताओं ने कहा इतने बराबर के समधी तो आज तक हुए ही नहीं

सामध देखि देव अनुरागे। सुमन बरषि जसु गावन लागे ॥320:4॥
जगु बिरंचि उपजावा जब तें। देखे सुने ब्याह बहु तब तें ॥320:5॥
सकल भाँति सम साजु समाजू। सम समधी देखे हम आजू ॥320:6॥
देव गिरा सुनि सुंदर साँची। प्रीति अलौकिक दुहु दिसि माची ॥320:7॥

सामध देखि = समधियों का मिलन देखकर, *देव अनुरागे* = देवता अनुरक्त हो गये, *सुमन बरषि जसु गावन लागे* = फूलों की वर्षा करके उनका यश गाने लगे, *जगु बिरंचि उपजावा जब तें* = ब्रह्मा जी ने जब से संसार की रचना की है, *देखे सुने ब्याह बहु तब तें* = तब से बहुत सारे विवाह देखे व सुने हैं, *सकल भाँति सम* = सभी प्रकार से बराबर, *साजु समाजू* = सामान व समाज, *सम समधी देखे हम आजू* = बराबर के समधी आज ही देखे हैं, *देव गिरा सुनि सुंदर साँची* = देवताओं की सुंदर सत्यवाणी सुनकर, *प्रीति अलौकिक दुहु दिसि माची* = दोनों दिशाओं में अलौकिक प्रीती छा गई।

समधी का शाब्दिक अर्थ है *सम* = समान, *धी* = बुद्धि यानि एक समान बुद्धि वाले। इन दोनों की संस्कृतियाँ, खान-पान, रहन-सहन, पुण्य, साज-सामान, समाज, वैभव, ऐश्वर्य, भक्ति, भाग्य, चरित्र एक समान हैं। देवता कहने लगे कि जब से ब्रह्मा जी ने सृष्टि की रचना की है हमने बहुत सारे विवाह देखे व सुने हैं पर इतने बराबर के समधी आज पहली बार ही देख रहे हैं। देवताओं की सत्य वाणी सुनकर दोनों तरफ अलौकिक प्रेम छा गया।

जनक जी आदर सहित सबको मंडप में लेकर लाये

देत पाँवड़े अरघु सुहाए। सादर जनकु मंडपहिं ल्याए ॥320:8॥

देत पाँवड़े अरघु सुहाए = रास्ते में पाँवड़े बिछाते व अर्घ्य देते हुए, *सादर जनकु मंडपहिं ल्याए* = आदरपूर्वक जनक जी दशरथ जी को मंडप में लेकर आते हैं।

सामध के बाद जनक जी आदरपूर्वक सबको मंडप में लिवा लाये। अंदर आने के लिये पाँवड़े बिछाये गये, अर्घ्य देते हुए आगे-आगे जनक जी, उनके पीछे दशरथ जी व साधु समाज चल रहा है।

वसिष्ठ जी, विश्वामित्र जी व अन्य मुनियों का पूजन

मंडपु बिलोकि बिचित्र रचनाँ रुचिरताँ मुनि मन हरे ।
निज पानि जनक सुजान सब कहुँ आनि सिंघासन धरे ॥
कुल इष्ट सरिस बसिष्ट पूजे बिनय करि आसिष लही ।
कौसिकहि पूजत परम प्रीति कि रीति तौ न परै कही ॥छंद॥

मंडपु बिलोकि = मंडप को सबने देखा, *बिचित्र रचनाँ रुचिरताँ* = उसकी विचित्र रचना व सुंदरता निहारकर, *मुनि मन हरे* = मुनियों के मन भी आकर्षित हो गये, *निज पानि जनक सुजान* = अपने हाथों से सुजान जनक जी ने, *सब कहुँ* = सब लोगों को, *आनि सिंघासन धरे* = लाकर बैठने के लिये आसन रखे, *कुल इष्ट सरिस* = कुल के इष्ट देवता के समान, *बसिष्ट पूजे* = वसिष्ठ जी की पूजा की, *बिनय करि आसिष लही* = विनती की व आशीर्वाद प्राप्त किया, *कौसिकहि पूजत परम प्रीति* = परम प्रेम से विश्वामित्र जी की पूजा की, *कि रीति तौ न परै कही* = उस प्रेम की रीति का तो वर्णन ही नहीं किया जा सकता है।

बामदेव आदिक रिषय पूजे मुदित महीस ।
दिए दिब्य आसन सबहि सब सन लही असीस ॥दोहा 320॥

बामदेव आदिक रिषय = वामदेव इत्यादि ऋषियों की, *पूजे मुदित महीस* = राजा ने प्रसन्नता से पूजा की, *दिए दिब्य आसन सबहि* = सबको दिव्य आसन पर बैठाया, *सब सन लही असीस* = सबसे आशीर्वाद प्राप्त किया।

मंडप की रचना होते समय उसकी सुंदरता का वर्णन कर दिया था। अब विस्तार नहीं करके इतना कहते हैं कि सभी बारातियों, दशरथ जी व मुनियों

ने इसकी विचित्र रचना व सुंदरता को देखा। मणियों, रत्नों से जगमग मंडप की खूबसूरती देखकर मुनि लोग भी आकर्षित हो गये। अब जनक जी ने अपने हाथों से आसन ला-लाकर सब ऋषि-मुनियों को दिव्य आसनों पर बैठाया। सबसे पहले वसिष्ठ जी का पूजन किया गया, कैसे? जैसे कुल के इष्ट देव हों। हाथ जोड़कर विनती की, प्रार्थना की, आशीर्वाद प्राप्त किया। फिर विश्वामित्र जी की बहुत प्रेम से पूजा की। प्रेम इतना है कि वर्णन नहीं किया जा सकता है। जनक जी को लगा इन्हीं के कारण यह सब कार्य संभव हो पाया है। वामदेव इत्यादि अन्य ऋषियों की पूजा की, विप्रों की पूजा करके सबसे आशीर्वाद प्राप्त किया।

शिव के समान समझकर दशरथ जी का पूजन व सम्मान

बहुरि कीन्ह कोसलपति पूजा। जानि ईस सम भाउ न दूजा ॥321:1॥
कीन्हि जोरि कर बिनय बड़ाई। कहि निज भाग्य बिभव बहुताई ॥321:2॥

बहुरि कीन्ह कोसलपति पूजा = फिर दशरथ जी की पूजा की, *जानि ईस सम* = शिव जी जैसा जानकर, *भाउ न दूजा* = दूसरा भाव नहीं था, *कीन्हि जोरि कर बिनय बड़ाई* = हाथ जोड़कर विनती व प्रशंसा की, *कहि निज भाग्य बिभव बहुताई* = अपने भाग्य व वैभव के विस्तार की सराहना की।

दशरथ जी का पूजन जनक जी इस भाव से करते हैं मानो शिव जी का पूजन कर रहे हों। हाथ जोड़कर विनती की, प्रशंसा करके कहा कि हमारा बहुत भाग्य है जो आप यहाँ पधारे हैं। आपके यहाँ आने से हमारा वैभव बढ़ गया है।

सभी बारातियों का समधी के समान पूजन व सम्मान

पूजे भूपति सकल बराती। समधी सम सादर सब भाँती ॥321:3॥
आसन उचित दिए सब काहू। कहौं काह मुख एक उछाहू ॥321:4॥
सकल बरात जनक सनमानी। दान मान बिनती बर बानी ॥321:5॥

पूजे भूपति सकल बराती = राजा जनक ने सभी बारातियों का पूजन किया, *समधी सम सादर सब भाँती* = सबको समधी के समान आदर दिया, *आसन उचित दिए सब काहू* = सबको उचित आसन दिया, *कहौं काह मुख एक*

उछाहू = मैं एक मुख से उस उत्साह का क्या वर्णन करूँ, *सकल बरात जनक सनमानी* = राजा जनक ने सारी बारात का सम्मान किया, *दान मान बिनती बर बानी* = दान; मान; विनती व श्रेष्ठ वचनों से।

सब बारातियों की समधी समझकर पूजा की। स्तर के अनुसार सबको आदर सहित आसन प्रदान किया। दान दिया, सम्मान किया, हाथ जोड़कर विनती की, श्रेष्ठ वचनों से स्वागत किया। तुलसीदास जी कहते हैं उस समय इतना अधिक उत्साह था कि एक मुख से मैं कितनी प्रशंसा कर सकता हूँ?

विप्र बने देवताओं का देवताओं के समान पूजन कर आसन दिया

बिधि हरि हरु दिसिपति दिनराऊ। जे जानहिं रघुबीर प्रभाऊ ॥321:6॥
कपट बिप्र बर बेष बनाएँ। कौतुक देखहिं अति सचु पाएँ ॥321:7॥
पूजे जनक देव सम जानें। दिए सुआसन बिन पहिचानें ॥321:8॥

बिधि हरि हरु = ब्रह्मा; विष्णु व शिव, *दिसिपति दिनराऊ* = दिक्पाल और सूर्य, *जे जानहिं रघुबीर प्रभाऊ* = जो राम जी का प्रभाव जानते हैं, *कपट बिप्र बर बेष बनाएँ* = वे कपट से सुंदर विप्रों का वेष बनाये हुए, *कौतुक देखहिं* = उस लीला को देखकर, *अति सचु पाएँ* = बहुत सुखी हो रहे थे, *पूजे जनक देव सम जानें* = जनक जी ने देवताओं के समान जानकर पूजा की, *दिए सुआसन बिन पहिचानें* = बिना पहचाने ही सुंदर आसन प्रदान किया।

ब्रह्मा, विष्णु, शिव, दिक्पाल और सूर्य जो राम जी का प्रभाव जानते हैं, वे कपट से सुंदर विप्रों का वेष बनाये हुए उस लीला को देखकर बहुत सुखी हो रहे थे। जनक जी ने देवताओं के समान जानकर उनकी पूजा की। बिना पहचाने ही उन सबको सुंदर आसन प्रदान किया। बिना पहचाने भी सबका सम्मान किया गया।

राम ने देवताओं को पहचान कर मानसिक पूजन किया

पहिचान को केहि जान सबहि अपान सुधि भोरी भई ।
आनंद कंदु बिलोकि दूलहु उभय दिसि आनँदमई ॥
सुर लखे राम सुजान पूजे मानसिक आसन दए ॥
अवलोकि सीलु सुभाउ प्रभु को बिबुध मन प्रमुदित भए ॥छंद॥

पहिचान को केहि जान = कौन किसको जाने-पहचाने, *सबहि अपान सुधि भोरी भई* = सबको अपनी ही सुधि भूली हुई है, *आनंद कंदु बिलोकि दूलहु* = आनन्दकन्द दूल्हे को देखकर, *उभय दिसि आनँदमई* = दोनों ओर आनंदमयी स्थिति हो रही है, *सुर लखे राम सुजान* = सर्वज्ञ राम ने देवताओं को पहचान लिया, *पूजे मानसिक आसन दए* = मन में ही पूजा करके मन में आसन प्रदान किया, *अवलोकि सीलु सुभाउ प्रभु को* = प्रभु राम का शील व स्वभाव देखकर, *बिबुध मन प्रमुदित भए* = देवगण मन में बहुत आनंदित हुए।

उस समय कौन किसको पहचाने, सब अपने में मग्न हैं। सबको अपने ही देह की याद नहीं। सब आनंद में मग्न हैं। वर राम तो सर्वज्ञ हैं। वे पहचान गये कि कौन-कौन देवता विप्र-वेष में यहाँ विराजमान हैं। सबका मानसिक आदर किया, सम्मान करके मन में ही आसन प्रदान किया। जनक जी ने बाहर आसन दिया, राम जी ने मन के अंदर। इस प्रकार यह समझा दिया कि मूर्ति पूजा करें, यह बाहरी पूजन है, उसके बाद उस मूर्ति को आँखें बंद करके मन में भी देखें। मानसिक पूजन की महिमा देखें, देवताओं ने राम के पूजन को तुरंत ग्रहण कर लिया। राम की प्रशंसा करने लगे कि ये कितने शीलवान् हैं, सब देवता प्रमुदित हो गये।

चन्द्र के समान राम के मुख को चकोर के समान नेत्र देख रहे हैं

रामचंद्र मुख चंद्र छबि लोचन चारु चकोर ।
करत पान सादर सकल प्रेमु प्रमोदु न थोर ।।दोहा 321।।

रामचंद्र मुख चंद्र छबि = राम के चन्द्रमा के समान मुख की छवि को, *लोचन चारु चकोर* = सुंदर चकोर के समान सबके नेत्र, *करत पान सादर सकल* = आदरपूर्वक पान कर रहे हैं, *प्रेमु प्रमोदु न थोर* = प्रेम व आनंद कम नहीं है।

प्रभु राम के सुंदर मुख की छवि चन्द्रमा की सुंदरता के समान है। जैसे चकोर पक्षी चन्द्रमा को टकटकी लगाये देखकर उसकी किरणों का पान करता रहता है। उसी प्रकार मंडप में बैठे सभी लोगों की आँखें दूल्हे राम के मुख की छवि का आदर पूर्वक रसपान कर रही हैं। अपार प्रेम व आनंद छाया हुआ है।

7. दिव्य मंडप में श्रीराम सीता विवाह

(दोहा 322 से 324)

भारतीय संस्कृति के अनुसार विवाह रीति का सुंदर चित्रण इस प्रसंग में किया गया है। मंडप में वर बने प्रभु राम विराजमान हैं, सीता जी दिव्य सौंदर्य में सखियों के साथ मंडप में आती हैं। गणेश-गौरी का पूजन करवाकर वैवाहिक रीति प्रारंभ होती है। राजा जनक-रानी सुनयना वर राम के चरण पखारते हैं। कन्या सीता का हाथ वर राम के हाथों में रखकर पाणिग्रहण मंत्रोच्चार के बीच किया जाता है। राजा-रानी कन्यादान करते हैं। हवन करके राम व सीता की गाँठें जोड़ी गयीं, फिर दोनों सात फेरे लेते हैं। वधू सीता के मस्तक पर वर राम सिंदूर लगाते हैं। वैवाहिक रीति पूरी होने के बाद राम व सीता एक साथ सिंहासन पर बैठते हैं। वसिष्ठ जी राम-सीता विवाह संपन्न होने की घोषणा करते हैं। रामचरितमानस का यह प्रसंग बहुत महिमावान् है, प्रेमपूर्वक इसका पाठ करके दिव्य विवाह के साक्षी बनें।

मंडप में राजकुमारी को लाने के लिये बुलावा भेजा गया

समउ बिलोकि बसिष्ठ बोलाए। सादर सतानंदु सुनि आए ॥322:1॥
बेगि कुअँरि अब आनहु जाई। चले मुदित मुनि आयसु पाई ॥322:2॥
रानी सुनि उपरोहित बानी। प्रमुदित सखिन्ह समेत सयानी ॥322:3॥

समउ बिलोकि = पाणिग्रहण का समय आ गया है यह देखकर, *बसिष्ठ बोलाए सादर सतानंदु* = वसिष्ठ जी ने आदर सहित शतानंद जी को बुलवाया, *सुनि आए* = बुलावा सुनकर शतानंद जी आये, *बेगि कुअँरि अब आनहु जाई* = वसिष्ठ जी ने कहा शीघ्र ही राजकुमारी को ले आइये, *चले मुदित मुनि आयसु पाई* = मुनि की आज्ञा सुनकर प्रसन्नता से शतानंद जी चल दिये, *रानी सुनि उपरोहित बानी* = रानी ने उपरोहित शतानंद जी की बातें सुनकर, *प्रमुदित सखिन्ह समेत सयानी* = बुद्धिमान रानी सखियों सहित प्रसन्न हुईं।

वसिष्ठ जी वर पक्ष के व शतानंद जी कन्या पक्ष के पुरोहित हैं। भारतीय विवाह परंपरा में तिथि-लग्न कन्या पक्ष के पुरोहित निर्धारित करते हैं, परंतु मार्गदर्शन वर पक्ष के पुरोहित करते हैं। वसिष्ठ जी ने देखा कि पाणिग्रहण

का समय आ गया है तब आदरपूर्वक शतानंद जी को बुलवाकर कहा कि अब आप शीघ्र ही राजकुमारी को लेकर आइये। शतानंद जी ने प्रसन्नतापूर्वक रनिवास में जाकर रानी सुनयना को जब सूचना दी तो वे सखियों सहित बहुत आनंदित हुईं।

मंडप में जाने के पहले वैदिक व कुलरीति की गई

बिप्र बधू कुलबृद्ध बोलाईं। करि कुलरीति सुमंगल गाईं ॥322:4॥

बिप्र बधू = विप्रों की स्त्रियों, *कुलबृद्ध बोलाईं* = व कुल की बड़ी महिलाओं को बुलवाकर, *करि कुलरीति* = कुल की रस्में पूरी कीं, *सुमंगल गाईं* = मंगलगीत गाये गये।

नारि बेष जे सुर बर बामा। सकल सुभायँ सुंदरी स्यामा ॥322:5॥
तिन्हहि देखि सुखु पावहिं नारीं। बिनु पहिचानि प्रानहु ते प्यारीं ॥322:6॥
बार बार सनमानहिं रानी। उमा रमा सारद सम जानी ॥322:7॥

नारि बेष जे सुर बर बामा = देवताओं की सुंदर देवांगनायें जो नारी वेश में हैं, *सकल सुभायँ सुंदरी* = सभी स्वभाव से ही सुंदर, *स्यामा* = व सभी 16 वर्ष की आयु की हैं, *तिन्हहि देखि सुखु पावहिं नारीं* = उन्हें देखकर सब स्त्रियों को सुख की अनुभूति होती है, *बिनु पहिचानि प्रानहु ते प्यारीं* = बिना जान पहचान के वे सब प्राणों के समान प्रिय लगती हैं, *बार बार सनमानहिं रानी* = रानी बार-बार उनका सम्मान करती हैं, *उमा रमा सारद सम जानी* = पार्वती; लक्ष्मी व सरस्वती के समान समझकर।

रानी सुनयना बहुत बुद्धिमान हैं। समझदार व सावधान हैं। रानी ने विप्रों की स्त्रियों को बुलवाकर मंडप में ले जाने से पहले वैदिक रीति से पूजन करवाया। कुल की बुजुर्ग महिलाओं से कुलरीति से पूजन करवाया। इन सब रीतियों को पूरा करते समय स्त्रियाँ मंगलगीत गाती जाती हैं। वहाँ पर देवताओं की स्त्रियाँ हैं जिन्होंने 16 बर्ष की आयु की मनुष्य नारी का सहज ही सुंदर रूप धारण किया है। ये सब बहुत प्रेम से सेवा कार्य करती हैं। स्त्रियों के साथ जब सरस्वती जी भी गाती हैं तो बहुत ही कोमलता व मधुरता रहती है, पर कोई पहचान नहीं पाता है। इन नारियों का रानी बार-बार पार्वती, सरस्वती, लक्ष्मी

इत्यादि देवियाँ समझकर सम्मान करती हैं। ये सब इस प्रकार घुलमिल गयी हैं कि सबको प्राणों के समान प्रिय लगने लगी हैं।

16 श्रृंगार से सजी सखियाँ सीता जी को लेकर चलीं

सीय सँवारि समाजु बनाई। मुदित मंडपहिं चलीं लवाई ॥322:8॥

सीय सँवारि = सीता जी का श्रृंगार करके, *समाजु बनाई* = सखियों ने अपना पूरा समाज बनाकर, *मुदित मंडपहिं चलीं लवाई* = प्रसन्नता से सीता जी को लेकर मंडप में चलीं।

चलि ल्याइ सीतहि सखीं सादर सजि सुमंगल भामिनीं ।
नवसप्त साजें सुंदरीं सब मत्त कुंजर गामिनीं ॥
कल गान सुनि मुनि ध्यान त्यागहिं काम कोकिल लाजहीं ।
मंजीर नूपुर कलित कंकन ताल गति बर बाजहीं ॥छंद॥

चलि ल्याइ सीतहि = सीता जी को लेकर चलती हैं, *सखीं सादर* = सखियाँ आदर पूर्वक, *सजि सुमंगल भामिनीं* = वे मांगलिक श्रृंगार से सजी हैं, *नवसप्त साजें सुंदरी* = 9+7=16 श्रृंगार से सजीं सखियाँ, *सब मत्त कुंजर गामिनीं* = सभी हाथियों की चाल से चल रही हैं, *कल गान सुनि* = मनोहर गीत को सुनकर, *मुनि ध्यान त्यागहिं* = मुनि ध्यान त्याग देते हैं, *काम कोकिल लाजहीं* = कामदेव की कोयलें भी लज्जित हो जाती हैं, *मंजीर* = करधनी, *नूपुर* = पायल, *कलित कंकन* = सुंदर कंगन, *ताल गति बर बाजहीं* = ये सब चलने की ताल पर बज रहे हैं।

सखियों का समाज सब पहले से ही तैयार है। जब तक रानी पूजा करती हैं तबतक झटपट वे सीता जी को सँवार देती हैं। सीता जी को आदरपूर्वक आगे करके सखियों का पूरा समाज चल देता है। इतनी मधुर ध्वनि से मंगलगीत गा रही हैं जिसे सुनकर मुनियों का ध्यान ही छूट जाये। सभी सखियाँ 16 श्रृंगार से सजी हुई हाथियों की सुंदर चाल से चली जा रही हैं। कमर में करधनी, हाथ में कंगन व पैरों में पायल पहने हैं। इन सब आभूषणों में घुँघुरू भी लगे हैं। वे इस प्रकार एक ताल में चलती हैं, जिससे घुँघुरुओं की आवाज एक लय में होती है।

सीता जी इतनी सुंदर हैं जिसका वर्णन नहीं किया जा सकता

सोहति बनिता बृंद महुँ सहज सुहावनि सीय ।
छबि ललना गन मध्य जनु सुषमा तिय कमनीय ॥दोहा 322॥

सोहति बनिता बृंद महुँ = स्त्रियों के समूह के बीच में शोभायमान हैं, *सहज सुहावनि सीय* = सहज ही सुंदर सीता जी, *छबि ललना गन मध्य जनु* = मानो उनके चारों ओर की स्त्रियाँ छवि हैं, *सुषमा तिय कमनीय* = सीता जी उन स्त्रियों की सुंदरता हैं।

सिय सुंदरता बरनि न जाई। लघु मति बहुत मनोहरताई ॥323:1॥

सिय सुंदरता बरनि न जाई = सीता जी की सुंदरता का वर्णन नहीं किया जा सकता, *लघु मति बहुत मनोहरताई* = बुद्धि कम है सुंदरता बहुत ज्यादा है।

सखियों के बीच में सीता जी इस प्रकार सहज ही सुंदर दिखती हैं मानो उनके आसपास की स्त्रियाँ छवि हों और सीता जी उस छवि की सुंदरता हों। तुलसीदास जी कहते हैं कि मेरी बुद्धि छोटी है, सीता जी की सुंदरता बहुत ज्यादा है, इसलिये मैं उसका वर्णन नहीं कर सकता हूँ।

मंडप में प्रवेश, बाराती मन में प्रणाम कर राम-सीता जोड़ी से संतुष्ट

आवत दीखि बरातिन्ह सीता। रूप रासि सब भाँति पुनीता ॥323:2॥
सबहि मनहिं मन किए प्रनामा। देखि राम भए पूरनकामा ॥323:3॥

आवत दीखि बरातिन्ह सीता = बारातियों ने सीता जी को आते हुए देखा, *रूप रासि सब भाँति पुनीता* = वे सब प्रकार से सुंदर व पवित्र दिखीं, *सबहि मनहिं मन किए प्रनामा* = सबने मन ही मन उन्हें प्रणाम किया, *देखि राम भए पूरनकामा* = बाराती राम को देखकर पूरी तरह संतुष्ट हो गये।

बारातियों ने सीता जी को देखा, उन सभी को सीता जी सब प्रकार से सुंदर व पवित्र दिखीं। बारातियों के अंदर पूज्य भाव आ गया। मन ही मन सब सीता जी को प्रणाम करते हैं। फिर एक दृष्टि राम पर डालकर, दोनों की सुंदरता की तुलना करके यह सोचते हैं कि जितने सुंदर हमारे राजकुमार राम हैं उतनी

ही सुंदर राजकुमारी सीता हैं। अयोध्या वाले चाहते थे कि राजकुमार राम का विवाह एक अच्छी राजकुमारी से हो। जब उन्हें लगा कि राजकुमार राम के लिए जैसी वधू होनी चाहिये वैसी मिल गयी है तो वे सब पूर्णकाम हो गये मायने संतुष्ट हो गये।

दशरथ जी पुत्रों सहित आनंदित, मुनि आशीष देते हैं

हरषे दसरथ सुतन्ह समेता। कहि न जाइ उर आनँदु जेता ॥323:4॥
सुर प्रनामु करि बरिसहिं फूला। मुनि असीस धुनि मंगल मूला ॥323:5॥

हरषे दसरथ सुतन्ह समेता = महाराज दशरथ पुत्रों सहित हर्षित हैं, *कहि न जाइ उर आनँदु जेता* = हृदय में इतना आनंद है जिसका वर्णन नहीं हो सकता है, *सुर प्रनामु करि बरिसहिं फूला* = देवता प्रणाम करके फूलों की वर्षा करते हैं, *मुनि असीस* = मुनि लोग आशीर्वाद देते हैं, *धुनि मंगल मूला* = मंगल की मूल वेदध्वनि चल रही है।

गान निसान कोलाहलु भारी। प्रेम प्रमोद मगन नर नारी ॥323:6॥
एहि बिधि सीय मंडपहिं आई। प्रमुदित सांति पढ़हिं मुनिराई ॥323:7॥

गान = गाना चल रहा है, *निसान* = बाजे बज रहे हैं, *कोलाहलु भारी* = भारी शोर है, *प्रेम प्रमोद मगन नर नारी* = नगर के स्त्री-पुरुष प्रेम में आनंदित हैं, *एहि बिधि सीय मंडपहिं आई* = इस प्रकार सीता जी मंडप में पहुँचीं, *प्रमुदित सांति पढ़हिं मुनिराई* = मुनि लोग प्रसन्नता से शांति पाठ करते हैं।

सीता जी को देखकर दशरथ जी पुत्रों सहित आनंदित हुए, उन्हें जितना आनंद हुआ कहते नहीं बनता। देवताओं ने प्रणाम करके फूलों की वर्षा की। मुनि लोग आशीर्वाद देते हैं। मंगलगीत व वेदध्वनि के साथ बाजे भी बज रहे हैं। भारी शोर है, नगर के लोग प्रेम में आनंदित हैं। इस प्रकार जब सीता जी मंडप में पहुँचीं, मुनि लोग प्रसन्न होकर शांति पाठ करने लगे।

सीता जी से गौरी-गणेश पूजन करवाकर सिंहासन पर बैठाया गया

तेहि अवसर कर बिधि ब्यवहारू। दुहुँ कुलगुर सब कीन्ह अचारू ॥323:8॥

तेहि अवसर कर बिधि = उस अवसर की रीति, *ब्यवहारू* = व्यवहार, *दुहुँ कुलगुर सब कीन्ह अचारू* = और कुलाचार दोनों तरफ के कुल गुरुओं ने किया।

आचारु करि गुर गौरि गनपति मुदित बिप्र पुजावहीं ।
सुर प्रगटि पूजा लेहिं देहिं असीस अति सुखु पावहीं ॥
मधुपर्क मंगल द्रब्य जो जेहि समय मुनि मन महुँ चहैं ।
भरे कनक कोपर कलस सो तब लिएहिं परिचारक रहैं ॥छंद॥

आचारु करि = कुलाचार करने के बाद, *गुर गौरि गनपति* = गुरु; पार्वती जी व गणेश जी का, *मुदित बिप्र पुजावहीं* = विप्रों ने प्रसन्नता से पूजन करवाया, *सुर प्रगटि पूजा लेहिं* = देवता प्रगट होकर पूजा स्वीकार करके, *देहिं असीस* = आशीर्वाद देकर, *अति सुखु पावहीं* = बहुत सुखी होते हैं, *मधुपर्कमंगल द्रब्य* = मधु पर्क या अन्य मंगल द्रव्य, *जो जेहि समय* = जो भी जिस समय, *मुनि मन महुँ चहैं* = मुनि मन में चाहते हैं, *भरे कनक कोपर कलस सो* = सोने की परात व स्वर्ण कलशों में भरकर, *तब लिएहिं परिचारक रहैं* = तुरंत ही सेवक उपस्थित हो जाते हैं।

कुल रीति प्रीति समेत रबि कहि देत सबु सादर कियो ।
एहि भाँति देव पुजाइ सीतहि सुभग सिंघासनु दियो ॥
सिय राम अवलोकनि परसपर प्रेमु काहुँ न लखि परै ।
मन बुद्धि बर बानी अगोचर प्रगट कबि कैसें करै ॥छंद॥

कुल रीति प्रीति समेत = कुल की रीतियाँ प्रेम सहित, *रबि कहि देत* = स्वयं सूर्य देव बता देते हैं, *सबु सादर कियो* = वे सब आदरपूर्वक की जा रही हैं, *एहि भाँति देव पुजाइ* = इस प्रकार देवताओं की पूजा करवाकर, *सीतहि सुभग सिंघासनु दियो* = सीता जी को सुंदर आसन पर बैठाया गया, *सिय राम अवलोकनि परसपर प्रेमु* = सीता व राम का आपस में एक-दूसरे को देखना व प्रेम करना, *काहुँ न लखि परै* = किसी को दिखाई नहीं देता है, *मन बुद्धि बर बानी अगोचर* = जो बात श्रेष्ठ मन; बुद्धि और वाणी से भी परे है, *प्रगट कबि कैसें करै* = उसे कवि कैस प्रगट करे।

होम समय तनु धरि अनलु अति सुख आहुति लेहिं ।
बिप्र बेष धरि बेद सब कहि बिबाह बिधि देहिं ॥दोहा 323॥

होम समय= हवन के समय, *तनु धरि अनलु*= अग्निदेव शरीर धारण करके, *अति सुख आहुति लेहिं*= अत्यंत सुख से आहुतियाँ ग्रहण करते हैं, *बिप्र बेष धरि बेद सब*= सारे वेद विप्र का वेष बनाकर, *कहि बिबाह बिधि देहिं*= विवाह की विधियाँ बता देते हैं।

सीता जी के मंडप में पहुँचने पर शतानंद व वसिष्ठ जी ने दोनों कुलों की परंपरा का पालन करते हुए कुल रीति पूरी की। इसके बाद विप्रों ने सीता जी से गुरु, गौरी व गणेश का पूजन करवाया। ये देवता प्रगट होकर पूजा ग्रहण करते हैं, आशीर्वाद देकर सुख की अनुभूति करते हैं। दही, घी व शहद को मिलाने से तैयार हुई मंगल सामग्री को मधुपर्क कहते हैं, इसी प्रकार की अन्य जो भी पूजन व मंगल सामग्री विप्र माँगते हैं सेवक लोग तुरंत उपलब्ध कराते हैं। कैसे, कितनी मात्रा में? द्रव्य पदार्थों को स्वर्ण कलशों में भरकर, व सूखे पदार्थ जैसे चावल, हल्दी इत्यादि को परातों में भरकर। पूजन करवाकर सीता जी को बहुत सुंदर सिंहासन पर बैठाया जाता है।

सूर्य कुलरीति, वेद वैदिकरीति बताते हैं, अग्नि हवन ग्रहण करते हैं

राम सूर्यवंश के हैं इसलिये सूर्यदेव वहाँ पर स्वयं विद्यमान रहकर कुल की परंपरायें बताते हैं, जिसका सब पालन करते हैं। चारों वेद भी स्वयं उपस्थित होकर वैदिक रीति बताते हैं। हवन के लिये अग्नि प्रज्ज्वलित कर जब आहुतियाँ दी जाती हैं तो अग्निदेव स्वयं प्रगट होकर उसे स्वीकार करते हैं। सब देवता अपनी-अपनी पूजा स्वयं लेते हैं।

सीता व राम परस्पर देखते हैं, अलौकिक प्रेम अवर्णनीय

सीता ने राम को देखा, राम ने सीता को, इस प्रकार परस्पर देखने से उनके हृदय में जो प्रेम उत्पन्न हुआ वह किसी को पता नहीं चला। उनके मन में अलौकिक प्रेम है, जो मन, बुद्धि व वाणी के परे है। इसलिये कवि उसका वर्णन नहीं कर सकता है।

यशस्वी, पुण्यवान्, सुखी व सुंदर सुनयना जी को बुलवाया

जनक पाटमहिषी जग जानी। सीय मातु किमि जाइ बखानी ॥324:1॥
सुजसु सुकृत सुख सुंदरताई। सब समेटि बिधि रची बनाई ॥324:2॥

समउ जानि मुनिबरन्ह बोलाईं। सुनत सुआसिनि सादर ल्याईं ॥324:3॥
जनक बाम दिसि सोह सुनयना। हिमगिरि संग बनी जनु मयना ॥324:4॥

जनक पाटमहिषी = जनक जी की मुख्य रानी, *जग जानी* = जिन्हें सारा संसार जानता है, *सीय मातु* = सीता जी की माँ, *किमि जाइ बखानी* = उनकी महिमा का किस प्रकार वर्णन हो! *सुजसु सुकृत सुख सुंदरताई* = यश; पुण्य; सुख व सुंदरता, *सब समेटि बिधि रची बनाई* = सबको एकत्रित करके विधाता ने उनकी रचना की है, *समउ जानि मुनिबरन्ह बोलाईं* = समय जानकर श्रेष्ठ मुनियों ने उन्हें बुलवाया, *सुनत सुआसिनि सादर ल्याईं* = सुनते ही सुंदर स्त्रियाँ उन्हें तुरंत लेकर आयीं, *जनक बाम दिसि सोह सुनयना* = सुनयना जी जनक जी के साथ इस प्रकार शोभित हैं, *हिमगिरि संग बनी जनु मयना* = मानो हिमाचल के साथ मैना जी बैठी हों।

हवन के बाद जब पाणिग्रहण का समय आया तब मुनियों ने जनक जी की मुख्य रानी व सीता जी की माँ सुनयना जी को बुलवाया। तुलसीदास जी कहते हैं कि उन्होंने इतने पुण्य किये हैं कि मानो विधाता ने सुयश, सुख व सुंदरता को एकत्रित किया और उसे सँवार करके रानी सुनयना की रचना कर दी। सुंदर स्त्रियाँ आदरपूर्वक रानी सुनयना को लेकर विवाह मंडप में आती हैं। जब उन्हें राजा जनक के बाँयी ओर बैठाया जाता है तब वे इस प्रकार शोभायमान हैं मानो हिमाचल के बगल में मैना बैठी हों।

जनक-सुनयना वर राम के पाँव पखारते हैं

कनक कलस मनि कोपर रूरे। सुचि सुगंध मंगल जल पूरे ॥324:5॥
निज कर मुदित रायँ अरु रानी। धरे राम के आगें आनी ॥324:6॥
पढ़हिं बेद मुनि मंगल बानी। गगन सुमन झरि अवसरु जानी ॥324:7॥
बरु बिलोकि दंपति अनुरागे। पाय पुनीत पखारन लागे ॥324:8॥

कनक कलस = सोने के कलश, *मनि कोपर रूरे* = मणियों की सुंदर परात, *सुचि सुगंध मंगल जल पूरे* = कलश पवित्र; सुगंधित व मंगल जल से भरे हैं, *निज कर मुदित* = अपने हाथों से प्रसन्नता से, *रायँ अरु रानी* = राजा व रानी ने, *धरे राम के आगें आनी* = राम के आगे लाकर रखा, *पढ़हिं बेद मुनि मंगल बानी* = मुनि मंगलवाणी से वेद का पाठ कर रहे हैं, *गगन सुमन झरि अवसरु*

जानी = सुअवसर जानकर आकाश से फूलों की वर्षा हो रही है, *बरु बिलोकि दंपति अनुरागे* = वर को देखकर राजा-रानी प्रेम में मग्न हो गये, *पाय पुनीत पखारन लागे* = और राम के पवित्र चरणों को पखारने लगे।

लागे पखारन पाय पंकज प्रेम तन पुलकावली ।
नभ नगर गान निसान जय धुनि उमगि जनु चहुँ दिसि चली ।।छंद।।

लागे पखारन पाय पंकज = कमल के समान चरणों को पखारने लगे, *प्रेम तन पुलकावली* = प्रेम के कारण शरीर रोमांचित हो गया, *नभ नगर* = आकाश व नगर में होने वाले, *गान निसान जय धुनि* = गाने; बाजों व जयकारों की ध्वनि, *उमगि जनु चहुँ दिसि चली* = चारों दिशाओं में उमड़कर चल दी।

राजा व रानी ने जल से भरे स्वर्ण कलश व मांगलिक पदार्थों से भरी मणि की परात अपने हाथों से बहुत हर्षित मन से वर राम के सामने रखी। मुनि लोग सस्वर सामवेदीय पाठ कर रहे हैं। देवता प्रसन्न होकर फूल बरसा रहे हैं। वर राम को देखकर राजा-रानी के मन में बहुत प्रेम उत्पन्न हो गया। वर राम के पवित्र चरणों को राजा व रानी पखारने लगे। कमल के समान कोमल राम के चरणों के स्पर्श से राजा-रानी के मन में प्रेम का प्रबल भाव आया जिससे शरीर रोमांचित हो गया। आकाश व नगर में हो रही जय-जयकारों, बाजों व गानों की ध्वनि चारों दिशाओं में फैल गयी। भारतीय संस्कृति में विवाह की इस रीति को पाँव पखारना कहते हैं।

वर बने प्रभु राम के चरणों की महिमा

जे पद सरोज मनोज अरि उर सर सदैव बिराजहीं ।
जे सकृत सुमिरत बिमलता मन सकल कलि मल भाजहीं ।।छंद।

जे पद सरोज = जो चरण कमल, *मनोज अरि* = कामदेव के शत्रु शिव जी के, *उर सर सदैव बिराजहीं* = हृदय के सरोवर में सदा विराजते हैं, *जे सकृत सुमिरत* = जिन चरणों का एक बार स्मरण करने से, *बिमलता मन* = मन में निर्मलता आती है, *सकल कलि मल भाजहीं* = और कलियुग के समस्त पाप भाग जाते हैं।

जे परसि मुनिबनिता लही गति रही जो पातकमई ।
मकरंदु जिन्ह को संभु सिर सुचिता अवधि सुर बरनई ।।छंद।

जे परसि = जिनका स्पर्श पाकर, *मुनिबनिता* = गौतम मुनि की स्त्री, *लही गति* = परम गति पायी, *रही जो पातकमई* = जो पापमयी हो गयी थी, *मकरंदु जिन्ह को* = जिनके चरणों का मकरंद यानि गंगा जी, *संभु सिर सुचिता* = शिव जी के मस्तक पर शोभित हैं, *अवधि सुर बरनई* = जिसे देवता पवित्रता की सीमा बताते हैं।

करि मधुप मन मुनि जोगिजन जे सेइ अभिमत गति लहैं ।
ते पद पखारत भाग्यभाजनु जनकु जय जय सब कहैं ॥छंद।

करि मधुप मन = मन को भौंरा बनाकर, *मुनि जोगिजन जे* = जो मुनि व योगी लोग, *सेइ* = उसका पान करते हैं, *अभिमत गति लहैं* = वे मन चाही गति पाते हैं, *ते पद पखारत* = उन्हीं चरणों को धो रहे, *भाग्यभाजनु जनकु* = बहुत ही भाग्यशाली जनक की, *जय जय सब कहैं* = सब लोग जय-जयकार कर रहे हैं।

प्रभु राम के चरणों की महिमा इस प्रकार है –

1. ये ही चरण कामशत्रु शिव के हृदय के सरोवर में सदा विराजमान रहते हैं। मायने शिव जी सदैव अपने इष्ट श्रीराम के चरणों का स्मरण करते रहते हैं।
2. इन चरणों का एक बार स्मरण मात्र कर लेने से मन में निर्मलता आ जाती है। कलियुग के सब दोष दूर हो जाते हैं।
3. इन्हीं चरणों का स्पर्श प्राप्त करके गौतम मुनि की पत्नी अहिल्या, जो पाप के कारण पत्थर बनी हुई थी, उसने फिर से परम गति प्राप्त की।
4. इन्हीं चरण कमलों का मकरंद रस यानि गंगा जी शंकर जी के मस्तक पर सुशोभित है, जिसे देवता लोग परम पवित्र मानते हैं।
5. मुनि लोग अपने मन को भौंरा बनाकर इन्हीं चरण कमलों में लगाकर मनचाही गति प्राप्त करते हैं।

सब लोग जनक जी की जय-जयकार करने लगे कि ये कितने भाग्यवान् हैं जो इतने महान् चरणों को अपने हाथों से स्पर्श कर रहे हैं।

वर राम के हाथ में कन्या सीता का हाथ रखकर पाणिग्रहण हुआ

बर कुअँरि करतल जोरि साखोचारु दोउ कुलगुर करैं ।
भयो पानिगहुन बिलोकि बिधि सुर मनुज मुनि आनँद भरैं ॥छंद॥

बर कुअँरि करतल जोरि = वर राम व कन्या सीता की हथेलियों को मिलाकर, *साखोचारु दोउ कुलगुर करैं* = दोनों तरफ के कुलगुरु शंखोच्चार करने लगे, *भयो पानिगहुन बिलोकि* = पाणिग्रहण हुआ देखकर, *बिधि सुर मनुज मुनि आनँद भरैं* = ब्रह्मा जी; देवता; मनुष्य व मुनि आनंद से भर गये।

भारतीय संस्कृति में विवाह के समय पाणिग्रहण की रीति के अनुसार वर राम के दाहिने हाथ में कुअँरि सीता जी का दाहिना हाथ रखवाया गया। दोनों ओर के कुलगुरु, कुल परंपरा के अनुसार मंत्रोच्चार व शंखोच्चार करने लगे। इसके बाद कन्या सीता की हथेली पलटकर वर राम की हथेली पर रखी। इस प्रकार यह देखकर कि पाणिग्रहण हो गया, वहाँ उपस्थित ब्रह्माजी, अन्य देवता, मुनि व मनुष्य सब आनंद से परिपूर्ण हो गये। समस्त सुखों के मूल प्रभु राम को दूल्हा बना देखकर राजा व रानी का मन आनंद से पुलकित होकर उमंग से भर गया।

राजा-रानी ने कन्यादान किया

सुखमूल दूलहु देखि दंपति पुलक तन हुलस्यो हियो ।
करि लोक बेद बिधानु कन्यादानु नृपभूषन कियो ॥छंद॥

सुखमूल दूलहु देखि = सुख के मूल दूल्हे को देखकर, *दंपति पुलक तन हुलस्यो हियो* = राजा-रानी का शरीर रोमांचित व मन आनंद से भर गया, *करि लोक बेद बिधानु* = लोकरीति व वेदरीति करके, *कन्यादानु नृपभूषन कियो* = महाराज जनक ने कन्यादान किया।

हिमवंत जिमि गिरिजा महेसहि हरिहि श्री सागर दई ।
तिमि जनक रामहि सिय समरपी बिस्व कल कीरति नई ॥
क्यों करै बिनय बिदेहु कियो बिदेहु मूरति सावँरीं ॥छंद॥

हिमवंत जिमि गिरिजा महेसहि = जिस प्रकार हिमाचल ने शिव जी को पार्वती, *हरिहि श्री सागर दई* = सागर ने विष्णु को लक्ष्मी दी, *तिमि जनक रामहि सिय समरपी* = उसकी प्रकार जनक जी ने राम को सीता सौंपी, *बिस्व कल कीरति नई* = जिससे विश्व में नया यश छा गया, *क्यों करै बिनय बिदेहु* = विदेह विनती कैसे करें! *कियो बिदेहु मूरति सावँरीं* = श्यामल राम ने तो उन्हें सचमुच ही देह रहित कर दिया।

राजा जनक ने लोक रीति व वेदरीति से कन्यादान करके वर राम को कन्या सीता सौंप दी। कैसे सौंपी? दो पौराणिक उदाहरण देते हैं–
1. जैसे हिमाचल ने शिव जी को पार्वती जी सौंपी थी।
2. जैसे समुद्र ने विष्णु जी को लक्ष्मी जी समर्पित की थी।

जनक जी इतने ज्यादा प्रेम से परिपूर्ण हो गये कि उनका गला रूँध गया, अब वे विनती कैसें करें! तुलसीदास जी कहते हैं अभी तक तो वे आत्मज्ञानी होने के कारण विदेह कहलाते थे, परंतु अब तो राम के श्यामल सुंदर रूप को देखकर वास्तव में अपने देह की सुधि भूल गये, अब प्रेम के कारण विदेह हो गये।

हवन करके राम व सीता की गाँठें जोड़ी गयीं

करि होमु बिधिवत गाँठि जोरी होन लागीं भावँरी ॥छंद॥

करि होमु बिधिवत = विधिपूर्वक हवन करके, *गाँठि जोरी* = गठजोड़ी की गयी, *होन लागीं भावँरी* = भाँवरें होने लगीं।

जय धुनि बंदी बेद धुनि मंगल गान निसान ।
सुनि हरषहिं बरषहिं बिबुध सुरतरु सुमन सुजान ॥दोहा 324॥

जय धुनि बंदी बेद धुनि = जयध्वनि; बंदी ध्वनि; वेदध्वनि, *मंगल गान निसान* = मंगल गीत व बाजे, *सुनि* = सुनकर, *हरषहिं बरषहिं बिबुध सुरतरु सुमन सुजान* = चतुर देवता हर्षित होकर कल्पवृक्ष के फूलों की वर्षा कर रहे हैं।

पाणिग्रहण के बाद यज्ञ हुआ फिर वर राम व वधू सीता की विधिवत् गाँठें जोड़ी गईं। भाँवर देने की तैयारी पूरी की गई। बंदी, मागध लोग जय-जयकार कर रहे हैं। विप्र वेद पाठ कर रहे हैं। स्त्रियाँ मंगलगान कर रही हैं। बाजे बज रहे हैं। यह सुनकर देवता हर्षित होकर कल्पवृक्ष के फूलों की वर्षा कर रहे हैं।

राम व सीता की सुंदर जोड़ी भाँवरें कर रही है

कुअँरु कुअँरि कल भावँरि देहीं। नयन लाभु सब सादर लेहीं ॥325:1॥

कुअँरु = वर राम, *कुअँरि* = वधू सीता, *कल* = सुंदर, *भावँरि देहीं* = भाँवरें कर रहे हैं, *नयन लाभु सब सादर लेहीं* = सब लोग आदर पूर्वक इसे देखकर नेत्रों को लाभान्वित कर रहे हैं।

अब श्यामल राम व गौर वर्ण सीता की सुंदर जोड़ी मंडप के चारों ओर सुंदर भाँवरें डाल रही है। सब लोग आदरपूर्वक इन्हें देखकर आनंदित हो रहे हैं।

राम-सीता की उपमा नहीं, परंतु परछाई की उपमा कामदेव-रति से

जाइ न बरनि मनोहर जोरी। जो उपमा कछु कहौं सो थोरी ॥325:2॥
राम सीय सुंदर प्रतिछाहीं। जगमगात मनि खंभन माहीं ॥325:3॥
मनहुँ मदन रति धरि बहु रूपा। देखत राम बिआहु अनूपा ॥325:4॥
दरस लालसा सकुच न थोरी। प्रगटत दुरत बहोरि बहोरी ॥325:5॥

जाइ न बरनि मनोहर जोरी = इस सुंदर जोड़ी का वर्णन नहीं किया जा सकता है, *जो उपमा कछु कहौं सो थोरी* = जितनी भी उपमा दी जाये वह कम है, *राम सीय सुंदर प्रतिछाहीं* = राम व सीता की सुंदर परछाई, *जगमगात मनि खंभन माहीं* = खंभों में जगमगा रही है, *मनहुँ मदन रति धरि बहु रूपा* = मानो कामदेव व रति बहुत से रूप धारण करके, *देखत राम बिआहु अनूपा* = राम के अनुपम विवाह को देख रहे हैं, *दरस लालसा सकुच न थोरी* = दर्शन की इच्छा व संकोच कम नहीं है, *प्रगटत दुरत बहोरि बहोरी* = इसलिये बार-बार प्रगट होते व छिपते हैं।

तुलसीदास जी कहते हैं कि भाँवरें देते हुए राम व सीता की जोड़ी इतनी सुंदर लग रही है कि उसकी उपमा अन्य किसी से की ही नहीं जा सकती है। परंतु उनकी परछाई की उपमा कामदेव-रति से करते हैं। मंडप में चारों ओर मणियों के खंभे लगे हैं। इनमें राम-सीता का प्रतिबिम्ब बनता है। वह इतना सुंदर लगता है मानो कामदेव व रति बहुत से रूप धारण करके राम-सीता के अनुपम विवाह को देख रहे हैं। राम-सीता की जोड़ी एक खंभे के पास से निकलती है, उसमें परिछाई दिखती है, दूसरे खंभे के पास गये पहले की परिछाई मिट गयी, यह क्रम चल रहा है। कहते हैं मानो कामदेव-रति बार-बार प्रगट होते व छिपते हैं। उनके मन में दर्शन की लालसा बहुत है, पर सामने न आकर छिप-छिप कर देख रहे हैं।

देखने वाले सभी लोग जनक की तरह विदेह हो गये

भए मगन सब देखनिहारे। जनक समान अपान बिसारे ॥325:6॥

भए मगन सब देखनिहारे = देखने वाले सब आनन्दमग्न हो गये, *जनक समान अपान बिसारे* = जनक जी की तरह सभी अपनी सुधि भूल गये।

जैस जनक जी ने अपने शरीर को भुला दिया था, वैसे ही वहाँ उपस्थित सब लोग अपने अस्तित्व को भूल गये कि हम भी कुछ हैं। मंडप परिसर में बैठे सारे लोग आत्मभाव तक पहुँच गये। अहं भाव भुला गया। रामचरितमानस का सजगतापूर्वक पाठ गृहस्थ जीवन में ही व्यक्ति को सरलता से आत्मभाव तक पहुँचाकर जीवन के परम-लक्ष्य को प्राप्त करा देता है। इस ग्रंथ की महिमा को समझने का अभ्यास करें।

सातवीं चौपाई में भाँवरें पूरी हुईं

प्रमुदित मुनिन्ह भावँरीं फेरीं। नेगसहित सब रीति निबेरीं ॥325:7॥

प्रमुदित मुनिन्ह भावँरीं फेरीं = मुनियों ने आनंद सहित भाँवरी की, *नेगसहित सब रीति निबेरीं* = फिर नेग प्राप्त करके सब रीतियों को पूरा किया।

विशेष प्रसन्नता से मुनियों ने भाँवरें करवायीं। वे बताते गये कि एक और करो, एक और करो। सातवीं चौपाई में तुलसीदास जी इसका समापन करते हैं। मायने सात भाँवरें करवाई गयीं। मुनियों को नेग देकर यह कार्य पूर्ण किया गया।

राम ने सीता के मस्तक पर सिंदूर लगाया

राम सीय सिर सेंदुर देहीं। सोभा कहि न जाति बिधि केहीं ॥325:8॥
अरुन पराग जलजु भरि नीकें। ससिहि भूष अहि लोभ अमी कें ॥325:9॥

राम सीय सिर = राम सीता के सिर में, *सेंदुर देहीं* = सिंदूर लगा रहे हैं, *सोभा कहि न जाति बिधि केहीं* = वह शोभा अवर्णनीय है, *अरुन पराग* = लाल पराग से, *जलजु भरि नीकें* = कमल को अच्छी तरह से भरकर, *ससिहि भूष* = चन्द्रमा को ऊपर लगा रहा है, *अहि* = सर्प, *लोभ अमी कें* = अमृत की लालच में।

पाणिग्रहण, कन्यादान, भाँवरों के बाद राम के हाथ में सिंदूर दिया गया। राम सीता के मस्तक पर अपने हाथों से सिंदूर लगा रहे हैं। यह दृश्य इतना सुंदर है कि उसकी शोभा का वर्णन किसी भी विधि से करना मुश्किल है। ऐसा लगता है मानो एक सर्प कमल के फूल में लाल पराग को अच्छे से भरकर चन्द्रमा के ऊपर लगा रहा है। सर्प के पास विष है, चन्द्रमा के पास अमृत, सर्प अमृत की चाहत में चन्द्रमा को लाल पराग से विभूषित कर रहा है।

विवाह संपन्न, राम-सीता एक सिंहासन पर साथ में बैठे

बहुरि बसिष्ठ दीन्हि अनुसासन। बरु दुलहिनि बैठे एक आसन ॥325:10॥

बहुरि बसिष्ठ दीन्हि अनुसासन = फिर वसिष्ठ जी ने आज्ञा दी, *बरु दुलहिनि बैठे एक आसन* = तब दूल्हा व दूल्हन एक सिंहासन पर साथ में बैठे।

बैठे बरासन रामु जानकि मुदित मन दसरथु भए ।
तनु पुलक पुनि पुनि देखि अपनें सुकृत सुरतरु फल नए ॥
भरि भुवन रहा उछाहु राम बिबाहु भा सबहीं कहा ।
केहि भाँति बरनि सिरात रसना एक यहु मंगलु महा ॥छंद॥

बैठे बरासन रामु जानकि = राम व जानकी एक आसन पर बैठे, *मुदित मन दसरथु भए* = दशरथ जी मन में बहुत आनंदित हुए, *तनु पुलक* = शरीर रोमांचित है, *पुनि पुनि देखि* = बार-बार देख करके, *सुकृत सुरतरु फल नए* = अपने पुण्यों के कल्पवृक्ष में नये-नये फल देखकर, *भरि भुवन रहा उछाहु* = चौदहों भुवन में उत्साह भर गया, *राम बिबाहु भा सबहीं कहा* = सबने कहा कि राम जी का विवाह हो गया, *केहि भाँति बरनि सिरात* = किस प्रकार वर्णन समाप्त करें, *रसना एक* = जीभ तो एक ही है, *यहु मंगलु महा* = इस महान् मंगल कार्य का।

वसिष्ठ जी ने आज्ञा दी कि विवाह संपन्न हो गया है। इसके बाद वर राम व वधू सीता एक सिंहासन पर बैठाये गये। राम व जानकी को एक साथ सिंहासन पर बैठे हुए देखकर दशरथ जी प्रसन्न हो गये। अपने पुण्यों के कल्प वृक्ष में नये-नये फल देखकर शरीर रोमांचित हो रहा है। सबने कहा कि राम-सीता विवाह हो गया है। सब जगह उत्साह छा गया। तुलसीदास जी कहते हैं जीभ तो एक ही है, तब इस महान् मंगल कार्य के वर्णन का समापन कैसे करें?

8. भरत-मांडवी, लक्ष्मण-उर्मिला, शत्रुघ्न-श्रुतकीर्ति विवाह

(दोहा 325 से 326)

जनकपुरवासी विधाता से मनौती माँग ही रहे थे कि चारों भाइयों का विवाह जनकपुर में ही हो जाये। जनक जी के मन में भी यह बात थी। वसिष्ठ जी की आज्ञा से जनक जी के भाई कुशध्वज की दो कन्यायों व जनक जी की छोटी पुत्री का विवाह तीनों भाइयों के साथ विधिवत्, प्रेम व आदर के साथ किया गया। महाराज दशरथ के चारों पुत्रों व चारों पुत्रवधुओं को एक ही मंडप में एक साथ बैठे हुए देखने का अद्‌भुत अवसर जनकपुर व अयोध्यावासियों के साथ ही तुलसीदास जी हम सबको भी सुलभ करवा रहे हैं। इनके दर्शन करके अर्थ, धर्म, काम व मोक्ष, चारों फलों को सरलता से प्राप्त करें।

राजकुमारी मांडवी का विवाह भरत जी से किया

तब जनक पाइ बसिष्ठ आयसु ब्याह साज सँवारि कै ।
मांडवी श्रुतकीरति उरमिला कुअँरि लईं हँकारि कै ॥
कुसकेतु कन्या प्रथम जो गुन सील सुख सोभामई ।
सब रीति प्रीति समेत करि सो ब्याहि नृप भरतहि दई ॥छंद॥

तब जनक पाइ बसिष्ठ आयसु = तब वसिष्ठ जी की आज्ञा पाकर जनक जी ने, *ब्याह साज सँवारि कै* = विवाह का सामान सजाकर, *मांडवी श्रुतकीरति उरमिला कुअँरि* = राजकुमारी मांडवी; श्रुतकीर्ति व उर्मिला, *लईं हँकारि कै* = को बुलवाया, *कुसकेतु कन्या प्रथम* = कुशध्वज की बड़ी कन्या, *जो गुन सील सुख सोभामई* = जो गुण; शील; सुख व शोभा से परिपूर्ण थी, *सब रीति प्रीति समेत करि* = विवाह की सभी रीतियाँ प्रेमपूर्वक करके, *सो ब्याहि नृप भरतहि दई* = राजा ने उनका ब्याह भरत जी से कर दिया।

तीनों भाइयों के विवाह की व्यवस्था बनाई गई। जनक जी के भाई कुशध्वज की दो कन्यायें मांडवी व श्रुतकीर्ति को व सीता जी की छोटी बहन उर्मिला को वसिष्ठ जी की आज्ञा से मंडप में लाया गया। ये तीनों भी सीता जी की ही तरह सज-सँवर के विवाह की तैयारी से मंडप पहुँचीं। कुशध्वज की बड़ी कन्या का नाम मांडवी है, वे गुणवती, शीलवती, सुंदर व सुखनिधान हैं। मांडवी का विवाह पूरे रीतिरिवाज से भरत जी से किया गया।

राजकुमारी उर्मिला का विवाह लक्ष्मण जी से किया

जानकी लघु भगिनी सकल सुंदरि सिरोमनि जानि कै ।
सो तनय दीन्ही ब्याहि लखनहि सकल बिधि सनमानि कै ॥छंद॥

जानकी लघु भगिनी = सीता जी की छोटी बहन, *सकल सुंदरि सिरोमनि जानि कै* = जो सभी सुंदरियों की शिरोमणि हैं, *सो तनय दीन्ही ब्याहि* = उस कन्या का विवाह कर दिया, *लखनहि* = लक्ष्मण जी के साथ, *सकल बिधि सनमानि कै* = सभी विवाह की रीतियाँ सम्मानपूर्वक पूरी करके।

सीता जी की छोटी बहन का नाम उर्मिला है जो सब प्रकार से सुंदर व श्रेष्ठ हैं। विवाह की सब रीतियाँ आदरपूर्वक करते हुए राजा जनक ने इनका विवाह लक्ष्मण जी के साथ किया।

राजकुमारी श्रुतकीर्ति का विवाह शत्रुघ्न जी से किया

जेहि नामु श्रुतकीरति सुलोचनि सुमुखि सब गुन आगरी ।
सो दई रिपुसूदनहि भूपति रूप सील उजागरी ॥छंद॥

जेहि नामु श्रुतकीरति = जिनका नाम श्रुतकीर्ति है, *सुलोचनि सुमुखि सब गुन आगरी* = जिनके सुंदर नेत्र हैं; सुंदर मुख है व सब गुणों की खान हैं, *सो दई रिपुसूदनहि भूपति* = राजा ने उसका विवाह शत्रुघ्न जी से कर दिया, *रूप सील उजागरी* = जिनका रूप व शील उजागर है।

जनक जी के भाई कुशध्वज की छोटी कन्या का नाम राजकुमारी श्रुतकीर्ति है। इनके नेत्र व मुख-मण्डल बहुत सुंदर हैं, वे रूपवती के साथ-साथ शीलवती भी हैं। राजा जनक ने पूरे विधि-विधान से इनका विवाह शत्रुघ्न जी के साथ कर दिया।

वर-वधू एक-दूसरे के अनुरूप देख संकोच के साथ हर्षित

अनुरूप बर दुलहिनि परस्पर लखि सकुच हियँ हरषहीं ।
सब मुदित सुंदरता सराहहिं सुमन सुर गन बरषहीं ॥छंद॥

अनुरूप बर दुलहिनि = दूल्हे व दुल्हन एक दूसरे के अनुरूप हैं, *परस्पर लखि* = वे आपस में एक दूसरे को देखकर, *सकुच हियँ हरषहीं* = सकुचाकर मन में हर्षित होते हैं, *सब मुदित सुंदरता सराहहिं* = सब लोग प्रसन्न होकर उनकी सुंदरता की प्रशंसा करते हैं, *सुमन सुर गन बरषहीं* = देवता लोग फूलों की वर्षा करते हैं।

विवाह के बाद वर-वधू एक साथ सिंहासन पर बैठे हैं। परस्पर वे सब एक-दूसरे को देखते हैं। श्यामवर्ण के साथ गौरवर्ण की जोड़ी है। भरत श्यामवर्ण हैं तो मांडवी गौरवर्ण हैं। इसी प्रकार शत्रुघ्न गोरे हैं तो श्रुतकीर्ति श्यामली हैं। सभी सुंदर, शांत, बुद्धिमान हैं। एक-दूसरे को देखकर संकोच के साथ प्रसन्नता व्यक्त करते हैं। सारे लोग सुंदरता की सराहना करते हैं। देवता फूलों की वर्षा करते हैं।

जीव की चारों अवस्थायें अपने स्वामियों के साथ विराजमान हैं

सुंदरीं सुंदर बरन्ह सह सब एक मंडप राजहीं ।
जनु जीव उर चारिउ अवस्था बिभुन सहित बिराजहीं ॥छंद॥

सुंदरीं सुंदर बरन्ह सह = सुन्दर दुल्हनें सुंदर दूल्हों के साथ, *सब एक मंडप राजहीं* = सभी एक ही मंडप में इस प्रकार शोभायमान हैं, *जनु जीव उर* = जैसे जीव के हृदय में, *चारिउ अवस्था* = चारों अवस्थायें, *बिभुन सहित बिराजहीं* = चारों स्वामियों सहित विराजमान हों।

चारों सुंदर दुल्हनें चारों सुंदर दूल्हों के साथ एक ही मंडप में बैठे हुए तुलसीदास जी को कैसे दिखे?

1. श्रुतकीर्ति जीव की जागृत अवस्था हों व उसके स्वामी शत्रुघ्न जी वैश्वानर हों।
2. उर्मिला जीव की स्वप्न अवस्था हों व लक्ष्मण जी उसके स्वामी तैजस हों।
3. मांडवी जीव की सुषुप्ति अवस्था हों व भरत जी उसके स्वामी प्राज्ञ हों।
4. सीता जीव की तुरीय अवस्था हों व राम उसके स्वामी ईश्वर हों।

दशरथ जी चारों क्रियाओं के चारों फलों को पाकर मुदित हैं

मुदित अवधपति सकल सुत बधुन्ह समेत निहारि ।
जनु पाए महिपाल मनि क्रियन्ह सहित फल चारि ॥दोहा 325॥

मुदित अवधपति = अवध के राजा दशरथ इस प्रकार प्रसन्न हैं, *सकल सुत बधुन्ह समेत निहारि* = सभी पुत्रों को वधुओं सहित देखकर, *जनु पाए महिपाल मनि* = मानो राजाओं के शिरोमणि ने प्राप्त कर लिया हो, *क्रियन्ह सहित फल चारि* = चारों क्रियाओं के चारों फलों को।

चारों पुत्रों को चारों पुत्रवधुओं सहित देखकर दशरथ जी कैसे प्रसन्न हैं, जैसे उन्हें चार प्रकार के कर्मों के चारों फल प्राप्त हो गये हों।
1. पुत्रवधू मांडवी मानो पुण्य कर्म हैं तो पुत्र भरत उसके फल धर्म हैं।
2. पुत्रवधू श्रुतकीर्ति मानो उद्योग कर्म हैं तो पुत्र शत्रुघ्न उसका फल अर्थ हैं।
3. पुत्रवधू उर्मिला मैत्री कर्म हैं तो लक्ष्मण उसके फल काम्य पदार्थ की प्राप्ति हैं।
4. पुत्रवधू सीता भक्ति व ज्ञान कर्म हैं तो पुत्र राम उसका फल मोक्ष हैं।

राम की तरह चारों भाइयों का विवाह करके दहेज दिया

जसि रघुबीर ब्याह बिधि बरनी। सकल कुअँर ब्याहे तेहिं करनी ॥326:1॥

जसि रघुबीर ब्याह बिधि बरनी = राम जी के विवाह की जैसी विधि वर्णित की गई, *सकल कुअँर ब्याहे तेहिं करनी* = उसी रीति से सभी राजकुमारों का विवाह संपन्न हुआ।

कहि न जाइ कछु दाइज भूरी। रहा कनक मनि मंडपु पूरी ॥326:2॥
कंबल बसन बिचित्र पटोरे। भाँति भाँति बहु मोल न थोरे ॥326:3॥
गज रथ तुरग दास अरु दासी। धेनु अलंकृत कामदुहा सी ॥326:4॥
बस्तु अनेक करिअ किमि लेखा। कहि न जाइ जानहिं जिन्ह देखा ॥326:5॥

कहि न जाइ कछु = कुछ वर्णन नहीं किया जा सकता, *दाइज भूरी* = दहेज की अधिकता का, *रहा कनक मनि मंडपु पूरी* = मंडप स्वर्ण और मणियों से भर गया, *कंबल बसन बिचित्र पटोरे* = कंबल; वस्त्र व विचित्र रेशमी कपड़े, *भाँति भाँति बहु मोल न थोरे* = तरह-तरह के हैं जिनकी कीमत कम नहीं है, *गज रथ तुरग* = हाथी; रथ व घोड़े, *दास अरु दासी* = सेवक व सेविकायें, *धेनु अलंकृत कामदुहा सी* = गहनों से सजी कामधेनु जैसी गायें, *बस्तु अनेक* = और अनेक वस्तुयें, *करिअ किमि लेखा* = जिनकी गिनती कैसे की जाये, *कहि न जाइ* = उनका वर्णन नहीं हो सकता, *जानहिं जिन्ह देखा* = जिन्होंने देखा वही जान सकते हैं।

राम के विवाह की जैसी रीति वर्णन की गई थी उसी रीति का अलग-अलग पालन करते हुए सभी राजकुमारों का राजकुमारियों के साथ विवाह किया गया। महाराज जनक ने बहुत अधिक मात्रा में दहेज में अनेक वस्तुयें दीं जिसका पूरा वर्णन नहीं हो सकता है। जिसने स्वयं देखा हो वही जान सकता है। कुछ वस्तुओं के नाम गिनाते हैं जैसे स्वर्ण, मणियाँ, कंबल, वस्त्र, विचित्र रेशमी कपड़े, हाथी, रथ, घोड़े, गहनों से सजी कामधेनु जैसी गायें इत्यादि। इसके अतिरिक्त सेवक व सेविकायें भी प्रदान कीं।

दशरथ जी ने प्रेमपूर्वक दहेज स्वीकार कर याचकों को बाँटा

लोकपाल अवलोकि सिहाने। लीन्ह अवधपति सबु सुखु माने ॥326:6॥
दीन्ह जाचकन्हि जो जेहि भावा। उबरा सो जनवासेहिं आवा ॥326:7॥

लोकपाल = बहुत धनवान् लोकपाल भी, *अवलोकि सिहाने* = दहेज देखकर ईर्ष्या करने लगे, *लीन्ह अवधपति सबु सुखु माने* = दशरथ जी ने सभी वस्तुयें प्रसन्नता से स्वीकार कीं, *दीन्ह जाचकन्हि जो जेहि भावा* = याचकों को जो पसंद आया बाँट दिया, *उबरा सो जनवासेहिं आवा* = फिर जो बचा वह जनवासे लाया गया।

लौकिक रूप से सबसे धनवान् माने जाने वाले को लोकपाल कहते हैं। इन्होंने जब देखा महाराज जनक ने इतनी संपत्ति, इतना धन, इतने आभूषण दहेज में दिये हैं तो उन्हें भी ईर्ष्या होने लगी। महाराज दशरथ ने प्रसन्नतापूर्वक दहेज को स्वीकार किया। फिर याचकों को बुलवाकर उसमें से जो जिसको अच्छा लगा, वह दे दिया। याचकों को देने के बाद जो सामान बचा वह जनवासे आया।

मुनियों व बारातियों का जनक जी मृदु शब्दों से सम्मान करते हैं

तब कर जोरि जनकु मृदु बानी। बोले सब बरात सनमानी ॥326:8॥

तब कर जोरि जनकु = फिर राजा जनक ने हाथ जोड़कर, *मृदु बानी बोले* = मधुर वाणी से बोले, *सब बरात सनमानी* = पूरी बारात के सम्मान में।

सनमानि सकल बरात आदर दान बिनय बड़ाइ कै ।
प्रमुदित महामुनि बृंद बंदे पूजि प्रेम लड़ाइ कै ॥

सिरु नाइ देव मनाइ सब सन कहत कर संपुट किएँ ।
सुर साधु चाहत भाउ सिंधु कि तोष जल अंजलि दिएँ ॥छंद॥

सनमानि सकल बरात = पूरी बारात का सम्मान करते हैं, *आदर दान बिनय बड़ाइ कै* = आदर; दान; विनय व प्रशंसा के द्वारा, *प्रमुदित महामुनि बृंद* = आनंदित होकर महान् मुनियों के समूह की, *बंदे पूजि* = वंदना करके पूजा करते हैं, *प्रेम लड़ाइ कै* = एक दूसरे के प्रति प्रेम की लड़ाई होती है, *सिरु नाइ देव मनाइ* = सिर नवाकर देवताओं को मनाते हैं, *सब सन कहत कर संपुट किएँ* = फिर हाथ जोड़कर सबसे कहते हैं, *सुर साधु चाहत भाउ सिंधु* = देवता व साधु तो प्रेम भाव का समुद्र ही चाहते हैं, *कि तोष जल अंजलि दिएँ* = और देने के लिये तो एक अंजलि जल से संतुष्ट हो जाते हैं।

इतना देने के बाद, जनक जी विनम्रता से बारातियों का आदरपूर्वक सम्मान करते हुए मधुर शब्दों से उनके गुणों की प्रशंसा करते हैं। फिर मुनियों के समुदाय को प्रसन्नतापूर्वक प्रणाम करके उनकी वंदना करते हैं। दोनों पक्ष एक से बढ़कर एक आदर व प्रेम का भाव व्यक्त करते हैं। जनक जी सिर झुकाकर देवताओं को प्रणाम करते हैं, फिर हाथ जोड़कर कहते हैं कि देवता व साधु का स्वभाव तो एक जैसा होता है, ये दोनों तो प्रेम भाव का समुद्र ही चाहते हैं। इन्हें यदि एक अंजलि जल भी प्रेम से दे दें तो ये संतुष्ट हो जाते हैं।

जनक जी ने दशरथ जी का शब्दों से सम्मान व विनती की

कर जोरि जनकु बहोरि बंधु समेत कोसलराय सों ।
बोले मनोहर बयन सानि सनेह सील सुभाय सों ॥
संबंध राजन रावरें हम बड़े अब सब बिधि भए ।
एहि राज समाज समेत सेवक जानिबे बिनु गथ लए ॥
ए दारिका परिचारिका करि पालिबीं करुना नई ।
अपराधु छमिबो बोलि पठए बहुत हौं ढीट्यो कई ॥छंद॥

कर जोरि जनकु बहोरि = फिर जनक जी हाथ जोड़कर, *बंधु समेत* = अपने भाई के साथ, *कोसलराय सों* = कौशल राजा दशरथ जी से, *बोले मनोहर बयन* = मनोहर वचन कहते हैं, *सानि सनेह सील सुभाय सों* = जो स्नेह; शील और सुंदर प्रेम से भरपूर हैं, *संबंध राजन रावरें* = हे राजन्! आपके

साथ संबंध हो जाने से, *हम बड़े अब सब बिधि भए* = अब हम सब प्रकार से बड़े हो गये हैं, *एहि राज समाज समेत* = इस राज-पाट सहित, *सेवक जानिबे* = मुझे अपना सेवक ही समझियेगा, *बिनु गथ लए* = बिना दाम के, *ए दारिका परिचारिका करि* = हमारी इन कन्याओं को अपना मानकर, *पालिबीं करुना नई* = नित्य दया करके पालन करियेगा, *अपराधु छमिबो* = मेरे अपराध को क्षमा करें, *बोलि पठए* = मैंने आपको यहाँ आने का बुलावा भेजा, *बहुत हौं ढीट्यो कई* = यह मैंने बहुत ढिठाई की है।

राजा जनक भाई कुशध्वज सहित हाथ जोड़कर महाराज दशरथ से प्रेम से सने हुए व अपने शील स्वभाव से युक्त सुंदर वचन इस प्रकार कहते हैं:

1. आपके साथ संबंध हो जाने से अब हम सब प्रकार से बड़े हो गये हैं। श्रेष्ठ लोगों से सम्बन्ध होने से श्रेष्ठता प्राप्त होती है।
2. हमें इस राज-पाट सहित बिना दाम का अपना सेवक ही समझियेगा।
3. ये चारों पुत्रियाँ जो हमने आपको दी हैं, इनका पालन अपनी पुत्री ही मानते हुए करियेगा, इन पर सदैव दया भाव बनाये रखियेगा।
4. आपको यहाँ आने का बुलावा भेजकर हमने जो अपराध किया है उसे क्षमा करियेगा। जनक जी छोटे राजा होने के नाते चक्रवर्ती सम्राट् को पत्र लिखकर बुलाने के लिय क्षमा माँगते हैं।

दशरथ जी ने समधी जनक जी के प्रति सम्मान व्यक्त किया

पुनि भानुकुलभूषन सकल सनमान निधि समधी किए ।
कहि जाति नहिं बिनती परस्पर प्रेम परिपूरन हिए ॥छंद॥

पुनि भानुकुलभूषन = फिर सूर्यकुल भूषण महाराज दशरथ ने, *सकल सनमान निधि समधी किए* = समधी जनक जी का पूरा सम्मान करके सम्मान का भंडार बना दिया, *कहि जाति नहिं* = वर्णन नहीं किया जा सकता, *बिनती परस्पर* = दोनों के आपस की विनती का, *प्रेम परिपूरन हिए* = दोनों के हृदय प्रेम से भर गये।

भारतीय संस्कृति में विवाह के समय वर पक्ष व वधू पक्ष दोनों एक दूसरे के प्रति सम्मान व प्रेम भाव रखते हैं। जनक जी द्वारा सम्मानित होने के बाद सूर्यकुल

भूषण महाराज दशरथ ने अपने समधी जनक जी को इतना सम्मानित किया कि वे सम्मान की निधि हो गये। इन दोनों का परस्पर प्रेम व विनती इतनी है कि वर्णन नहीं किया जा सकता है। दोनों के हृदय प्रेम से परिपूर्ण हो गये।

दशरथ जी जनवासे गये, चारों दूल्हा-दुल्हन को कोहबर लाया गया

बृंदारका गन सुमन बरिसहिं राउ जनवासेहि चले ।
दुंदुभी जय धुनि बेद धुनि नभ नगर कौतूहल भले ।।
तब सखीं मंगल गान करत मुनीस आयसु पाई कै ।
दूलह दुलहिनिन्ह सहित सुंदरि चलीं कोहबर ल्याइ कै ।।छंद।।

बृंदारका गन सुमन बरिसहिं = देवता व देवियाँ फूल बरसा रहे हैं, *राउ जनवासेहि चले* = राजा जनवासे चले गये, *दुंदुभी जय धुनि बेद धुनि* = नगाड़े की ध्वनि; जय ध्वनि व वेद ध्वनि हो रही है, *नभ नगर कौतूहल भले* = आकाश में व नगर में आनंद छाया है, *तब सखीं मंगल गान करत* = तब सखियाँ मंगलगीत गाते हुए, *मुनीस आयसु पाई कै* = मुनि की आज्ञा पाकर, *दूलह दुलहिनिन्ह सहित* = दुल्हनों सहित दूल्हों को, *सुंदरि चलीं* = लेकर सुंदर सखियाँ चलीं, *कोहबर ल्याइ कै* = और कोहबर में लिवा लायीं।

चारों भाइयों का विवाह संपन्न हो गया। देवता व देवियाँ आकाश से फूल बरसा रहे हैं। जैसे ही महाराज दशरथ राज-भवन से जनवासे की ओर चले तो नगाड़े बजने लगे। बंदी, मागध इत्यादि जय-जयकार बोलने लगे। विप्र लोग वेदध्वनि कर रहे हैं। नगर व आकाश में विवाह का आनंद छाया है। फिर वसिष्ठ जी की आज्ञा लेकर सुंदर सखियाँ दूल्हा-दुल्हनों को मंगल गान के साथ रनिवास में कोहबर के लिये लिवा ले चलीं।

कोहबर के महत्त्व को समझकर उसका पालन करें

कोहबर वह स्थान है जहाँ पर घर के भीतर कुल देवताओं की स्थापना की जाती है। वहाँ पर कुल के पितरों का भी आवाहन करके उनकी स्थापना की जाती है। जैसे विवाह में जीवित लोगों को निमंत्रण दिया जाता है, वैसे ही जो शरीर छोड़कर चले गये हैं, उन्हें बुलाया जाता है। ऐसी मान्यता है कि वे आते भी हैं और वहाँ रहते हैं। विवाह तक उनकी नित्य पूजा की जाती

है। विवाह के बाद वर-वधू उस स्थान पर पूजा करके आशीर्वाद प्राप्त करते हैं। वर, कन्या के यहाँ पितरों का पूजन करता है, कन्या ससुराल में वहाँ के पितरों की पूजा करती है।

सीता बार-बार राम की ओर देखती हैं पर आँखें तृप्त नहीं होतीं

पुनि पुनि रामहि चितव सिय सकुचति मनु सकुचै न ।
हरत मनोहर मीन छबि प्रेम पिआसे नैन ॥दोहा 326॥

पुनि पुनि रामहि चितव सिय = सीता जी बार-बार राम जी को देखकर, *सकुचति* = सकुचा जाती हैं, *मनु सकुचै न* = पर उनका मन नहीं सकुचाता, *हरत मनोहर मीन छबि* = सुंदर मछलियों की छवि को हर रहे हैं, *प्रेम पिआसे नैन* = प्रेम के प्यासे सीता जी के नेत्र।

सीता बार-बार राम की ओर देखती हैं, फिर उन्हें संकोच लगता है तो दृष्टि हटा लेती हैं। लेकिन मन में वे लगातर उन्हीं का स्मरण करती रहती हैं। सीता जी के प्रेम के प्यासे नेत्र इस समय मछली से भी ज्यादा सुन्दर व चंचल हो रहे हैं। मछली को जैसे जल ही प्रिय है, ऐसे ही सीता के नेत्रों को राम ही प्रिय हैं। बिना जल के मछली नहीं रह सकती। बिना राम के दर्शन के सीता जी के नेत्रों को तृप्ति नहीं है।

9. कोहबर में चारों वर-वधुओं ने विवाह रस्में कीं

(दोहा 327)

विवाह मंडप से कोहबर जाते हुए राम के सौंदर्य का पैर से लेकर सिर तक सजीव चित्रण इस प्रसंग में किया है। कोहबर में स्त्रियाँ अपनी प्रसन्नता खुलकर व्यक्त करती हैं। यहाँ लोकरीति के अनुसार रस्में की जाती हैं। एक लोकरीति जिसमें वर-वधू एक-दूसरे को खाना खिलाते हैं, इसका वर्णन है। इसी प्रकार की अन्य रीतियाँ की गईं। चारों भाइयों को वधू सहित अलग-अलग कोहबर में लोकरीति करायी जाती है। इसके बाद सखियाँ चारों की जोड़ी को जनवासे लेकर जाती हैं। रास्ते में चारों तरफ लोग चिरंजीवी होने का आशीर्वाद देते हैं। देवता व मुनि प्रभु को देखकर मुदित होकर जय हो, जय हो, जय हो कहते चले गये। यहाँ से विवाह का कार्य पूरा हो गया।

वर राम के सौंदर्य, सजावट, वस्त्र, आभूषण का सुंदर चित्रण

स्याम सरीरु सुभायँ सुहावन। सोभा कोटि मनोज लजावन ॥327:1॥
जावक जुत पद कमल सुहाए। मुनि मन मधुप रहत जिन्ह छाए ॥327:2॥
पीत पुनीत मनोहर धोती। हरति बाल रबि दामिनि जोती ॥327:3॥
कल किंकिनि कटि सूत्र मनोहर। बाहु बिसाल बिभूषन सुंदर ॥327:4॥

स्याम सरीरु = राम का श्यामल शरीर, *सुभायँ सुहावन* = स्वाभाविक सुंदर है, *सोभा* = उसकी शोभा, *कोटि मनोज लजावन* = करोड़ कामदेव को लज्जित करने वाली है, *जावक जुत पद कमल* = महावर लगे हुए चरण कमल, *सुहाए* = सुंदर लग रहे हैं, *मुनि मन मधुप* = मुनियों के मन भौंरों के समान, *रहत जिन्ह छाए* = जिन पर सदा लगे रहते हैं, *पीत पुनीत मनोहर धोती* = पवित्र व पीली सुंदर धोती पहने हैं, *हरति बाल रबि* = प्रात:काल के सूर्य की ज्योति फीकी है, *दामिनि जोती* = बिजली की ज्योति भी फीकी है, *कल किंकिनि कटि सूत्र मनोहर* = कमर में करधनी पहने हैं जिसमें सुंदर किंकिनी लगी है, *बाहु बिसाल बिभूषन सुंदर* = विशाल भुजाओं में सुंदर आभूषण पहने हैं।

पीत जनेउ महाछबि देई। कर मुद्रिका चोरि चतु लेई ॥327:5॥
सोहत ब्याह साज सब साजे। उर आयत उरभूषन राजे ॥327:6॥
पिअर उपरना काखासोती। दुहुँ आँचरन्हि लगे मनि जोती ॥327:7॥

पीत जनेउ महाछबि देई = पीला जनेऊ महान् सुंदरता दे रहा है, *कर मुद्रिका चोरि चतु लेई* = हाथ की अँगूठी तो मन को चुरा लेने वाली है, *सोहत ब्याह साज सब साजे* = विवाह के समय पहने जाने वाले चीजों से शोभायमान हैं, *उर आयत* = चौड़ी छाती पर, *उरभूषन राजे* = हृदय के आभूषण शोभा पा रहे हैं, *पिअर उपरना* = पीला वस्त्र का एक छोर कंधे पर, *काखासोती* = एक छोर कमर में बँधा है, *दुहुँ आँचरन्हि लगे मनि जोती* = दोनों छोरों पर मणि व मोती लगे हैं।

नयन कमल कल कुंडल काना। बदनु सकल सौंदर्ज निधाना ॥327:8॥
सुंदर भृकुटि मनोहर नासा। भाल तिलकु रुचिरता निवासा ॥327:9॥
सोहत मौरु मनोहर माथे। मंगलमय मुकुता मनि गाथे ॥327:10॥

नयन कमल = कमल के समान सुंदर नेत्र हैं, *कल कुंडल काना* = कानों में सुंदर कुंडल पहने हैं, *बदनु* = मुख तो, *सकल सौंदर्ज निधाना* = पूरी सुंदरता का खजाना ही है, *सुंदर भृकुटि* = सुंदर भौंहें हैं, *मनोहर नासा* = नाक भी सुंदर है, *भाल तिलकु रुचिरता निवासा* = माथे पर तिलक तो सुंदरता का घर ही है, *सोहत मौरु मनोहर माथे* = माथे के ऊपर सिर पर मौर धारण किये हैं, *मंगलमय* = जो मांगलिक है, *मुकुता मनि गाथे* = उसमें मणि व मोती गुँथे हुए हैं।

विवाह मंडप में पुरुष व स्त्रियाँ दोनों थे। संकोच के कारण स्त्रियों ने वर राम को ठीक से नहीं देखा। कोहबर ले जाते समय साथ में स्त्रियाँ ही स्त्रियाँ हैं, अब वे नि:संकोच राम के रूप को सिर से लेकर पैर तक देखती हैं। चलते हुए वर राम स्त्रियों को कैसे दिखे, उसका सजीव चित्रण तुलसीदास जी हम सब के लिये कर रहे हैं। राम का दूल्हे के रूप में शृंगार का आनंद लें। वर राम का शरीर श्याम वर्ण है, जो अपने आप ही सुंदर है, शृंगार के कारण सुंदर नहीं है। यदि करोड़ों कामदेव की सुंदरता को एकत्रित कर लिया जाये तो उससे भी सुंदर प्रभु राम की सुंदरता है। पैर से लेकर सिर तक का वर्णन इस प्रकार है:

1. वर राम के कमल के समान सुंदर दोनों चरणों में महावर लगा हुआ है। भारतीय परंपरा में विवाह के समय पुरुष को भी महावर लगाते हैं। ये वही चरण हैं जिनके चारों ओर मुनियों के मन भ्रमर के समान मँडराते रहते हैं।
2. चरणों के ऊपर देखा तो कमर में पीली धोती दिखाई दी। रेशमी धोती का पीला रंग कैसा है? प्रात: काल के सूर्य की पीली रोशनी से तेज। साँवले शरीर पर पीली धोती की चमक कैसी है? नीले बादलों के बीच बिजली की चमक से ज्यादा तेज।
3. कमर में करधनी पहने हैं जिसमें सुंदर किंकिनी लगी है।
4. लंबे हाथ हैं जो घुटनों तक आ जाते हैं, इसमें सुंदर आभूषण पहने हैं।
5. बाँये कंधे पर पीला जनेऊ सुंदर लग रहा है। यह संस्कार का सूचक है।
6. अंगुली में विवाह की अँगूठी पहने हैं, जो इतनी आकर्षक है कि देखने वाला उसे देखता ही रह जाये।
7. विशाल छाती है जिस पर आभूषण व पुष्प की माला पहने हैं।
8. पीले रंग का ऊपर पहनने वाला वस्त्र जिसे पीताम्बर कहते हैं उसे कैसे पहने हैं? एक तरफ कंधे पर डाले हैं दूसरा हिस्सा कमर में लपेटे हैं। दोनों तरफ मोती जड़ी है व रेशम से चित्रकारी की गई है।

9. नेत्र कमल के समान सुंदर हैं, कानों में कुंडल पहने हैं, भौंहें व नासिका सुंदर हैं, माथे पर तिलक लगा है। ऐसा लगता है कि सारी सौंदर्यता मुख में ही आकर केन्द्रित हो गयी है।
10. सिर पर मांगलिक मौर बाधें हैं जिसमें मोती व मणि जड़ी है। विवाह के समय वर को एक मुकुट पहनाया जाता है जो प्राय: पत्तों का बना होता है, इसे मौर कहते हैं। यहाँ वर राजा के पुत्र हैं इसलिये मौर स्वर्ण की बनी होगी।

स्त्रियाँ नजर उतार कर आरती व न्यौछावर करती हैं

गाथे महामनि मौर मंजुल अंग सब चित चोरहीं ।
पुर नारि सुर सुंदरीं बरहि बिलोकि सब तिन तोरहीं ॥
मनि बसन भूषन वारि आरति करहिं मंगल गावहीं ।
सुर सुमन बरिसहिं सूत मागध बंदि सुजसु सुनावहीं ॥छंद॥

गाथे महामनि मौर = मौर में बहुमूल्य मणियाँ जड़ी हैं, *मंजुल अंग सब चित चोरहीं* = सुंदर अंग मन को चुरा लेने वाले हैं, *पुर नारि सुर सुंदरीं* = नगर की स्त्रियाँ व देव सुंदरियाँ, *बरहि बिलोकि सब* = सबलोग वर को देखकर, *तिन तोरहीं* = तिनका तोड़ती हैं, *मनि बसन भूषन वारि* = मणि; वस्त्र व आभूषण से न्योछावर करती हैं, *आरति करहिं मंगल गावहीं* = आरती उतार रही हैं व मंगलगीत गाती हैं, *सुर सुमन बरिसहिं* = देवता फूल बरसाते हैं, *सूत मागध बंदि सुजसु सुनावहीं* = सूत; मागध व भाट सुयश का गान कर रहे हैं।

तुलसीदास जी की बारीकी देखें, इस छंद में 'पुर नारि ' कहा है 'नर नारि' नहीं, मायने स्त्रियाँ ही स्त्रियाँ हैं। नगर की स्त्रियाँ, देवताओं की स्त्रियाँ, अप्सरायें, ये सब देखती हैं कि वर राम के अंग-अंग की सुंदरता तो मन को मोह लेने वाली है। इन्हें लगा कहीं राम को नजर न लग जाये इसलिये नजर उतारने के लिये तिनका तोड़ती हैं। मणि, वस्त्र व आभूषण से न्योछावर करती हैं। ऐसी मान्यता है कि न्योछावर करने से भी नजर उतर जाती है। आरती करती हैं, मंगलगीत गाती हैं। बाहर देवता फूल बरसा रहे हैं, सूत, मागध व भाट सुयश का गान कर रहे हैं। ये लोग अंदर नहीं आते हैं।

कोहबर में लौकिक रीति हुई, स्त्रियाँ खूब प्रसन्न हैं

कोहबरहिं आने कुअँर कुअँरि सुआसिनिन्ह सुख पाइ कै ।
अति प्रीति लौकिक रीति लागीं करन मंगल गाइ कै ॥छंद॥

कोहबरहिं आने कुअँर कुअँरि = वर व वधू को कोहबर लाया गया, *सुआसिनिन्ह सुख पाइ कै* = स्त्रियाँ सब प्रसन्नता से सुख पा रही हैं, *अति प्रीति* = बहुत प्रेम से, *लौकिक रीति लागीं करन* = लौकिक रीति करने लगीं, *मंगल गाइ कै* = मंगल गीत भी गाती जाती हैं।

वर-वधू कोहबर पहुँचे। यहाँ पर स्त्रियाँ अकेली हैं, इसलिये वे खुलकर प्रसन्नता व्यक्त करती हैं। बहुत प्रेम के साथ कोहबर की लौकिक रीति होने लगी। यहाँ पर वैदिक रीति नहीं है। वेद पाठ नहीं है। वंश रीति नहीं है। लौकिक रीति एक दूसरे की अपना ली जाती है। इनसे वर-वधू की झिझक मिट जाती है। संकोच दूर होता है। आपस में प्रेम बढ़ता है। मंगलगीत भी गाये जा रहे हैं।

राम-सीता से एक-दूसरे को कौर खिलवाया जाता है

लहकौरि गौरि सिखाव रामहि सीय सन सारद कहैं ।
रनिवासु हास बिलास रस बस जन्म को फलु सब लहैं ॥
निज पानि मनि महुँ देखिअति मूरति सुरूपनिधान की।
चालति न भुजबल्ली बिलोकनि बिरह भय बस जानकी ॥छंद॥

लहकौरि गौरि सिखाव रामहि = पार्वती जी राम से सीता को कौर खिलवाती हैं, *सीय सन सारद कहैं* = सीता से सरस्वती जी राम को कौर खिलवाती हैं, *रनिवासु हास बिलास रस बस* = रनिवास हास-विलास के आनंद में मग्न है, *जन्म को फलु सब लहैं* = सभी लोग अपने जन्म का फल प्राप्त कर रहे हैं। *निज पानि मनि महुँ* = अपने हाथ की मणियों में, *देखिअति मूरति सुरूपनिधान की* = सौंदर्य निधान राम का प्रतिबिम्ब देखती हैं, *चालति न भुजबल्ली* = हाथ को हिलाती नहीं हैं, *बिलोकनि बिरह भय बस जानकी* = सीता जी को डर है कि कहीं हिला देने से छवि दिखाई देना बंद न हो जाये।

वर-वधू एक-दूसरे को खाना खिलाते हैं, इस लोकरीति को लहकौर कहते हैं। एक स्त्री वर से कहेगी वधू को खिलाओ, दूसरी वधू से कहेगी वर को खिलाओ। यहाँ सिखाने वाली स्त्री कौन हैं? पार्वती व सरस्वती जी। वर राम के पास पार्वती जी बैठकर राम के हाथ से वधू सीता को खिलवाती हैं। सरस्वती जी वधू सीता के पास बैठ गयीं, कहती हैं, यह हाथ से उठाओ और राम को खिलाओ। सीता का हाथ राम के मुँह तक पहुँचा, राम जैसे ही मुँह खोलते हैं, सरस्वती जी सीता का हाथ खींच लेती हैं। राम मुँह बंद करके रह जाते हैं। फिर कहती हैं अबकी बार खिलाओ। इस प्रकार मनोरंजन भी हो रहा है। सीता जी के हाथ के आभूषण में मणियाँ लगी हैं, इसमें सौंदर्य निधान राम की छवि दिखाई देती है। सीता जी एकटक राम की परछाई देख रही हैं। उन्हें लगा यदि हाथ हिल गया तो राम नहीं दिखेंगे। न दिखने का वियोग होगा, फिर उसका दु:ख होगा। इसलिये सरस्वती जी के कहने से वे जल्दी हाथ उठाना नहीं चाहती हैं।

कोहबर की रीतियाँ पूरी, वर-वधू को जनवासे लाया गया

कौतुक बिनोद प्रमोदु प्रेमु न जाइ कहि जानहिं अलीं ।
बर कुअँरि सुंदर सकल सखीं लवाइ जनवासेहि चलीं ॥छंद॥

कौतुक बिनोद प्रमोदु प्रेमु = हँसी-खेल व विनोद के आनंद का, *न जाइ कहि* = वर्णन नहीं हो सकता है, *जानहिं अलीं* = सखियाँ ही जानती हैं, *बर कुअँरि सुंदर सकल* = सभी सुंदर वर व वधुओं को, *सखीं लवाइ जनवासेहि चलीं* = सखियाँ जनवासे लेकर चलती हैं।

तेहि समय सुनिअ असीस जहँ तहँ नगर नभ आनँदु महा ।
चिरु जिअहुँ जोरीं चारु चार्‌यो मुदित मन सबहीं कहा ॥
जोगींद्र सिद्ध मुनीस देव बिलोकि प्रभु दुंदुभि हनी ।
चले हरषि बरषि प्रसून निज निज लोक जय जय जय भनी ॥छंद॥

तेहि समय सुनिअ असीस = उस समय चारों ओर आशीर्वाद ही सुनायी दे रहा है, *जहँ तहँ* = जहाँ तहाँ भी, *नगर नभ आनँदु महा* = नगर व आकाश में महान आनंद छा गया, *चिरु जिअहुँ जोरीं चारु चार्‌यो* = सुंदर चारों जोड़ियाँ चिरंजीवी हों, *मुदित मन सबहीं कहा* = प्रसन्न मन से सबने ऐसा आशीर्वाद

दिया, *जोगींद्र सिद्ध मुनीस देव* = योगी; सिद्ध; मुनियों व देवताओं ने, *बिलोकि प्रभु* = प्रभु राम को देखकर, *दुंदुभि हनी* = दुन्दुभी बजायी, *चले हरषि बरषि प्रसून* = हर्षित होकर फूलों की वर्षा करते हुए चल दिये, *निज निज लोक* = अपने-अपने लोकों को, *जय जय जय भनी* = जय हो, जय हो, जय हो कहते हुए।

सहित बधूटिन्ह कुअँर सब तब आए पितु पास ।
सोभा मंगल मोद भरि उमगेउ जनु जनवास ॥दोहा 327॥

सहित बधूटिन्ह कुअँर सब = वधुओं सहित सभी राजकुमार, *तब आए पितु पास* = तब पिता के पास आये, *सोभा मंगल मोद भरि* = शोभा; मंगल व आनंद से भरकर, *उमगेउ जनु जनवास* = मानो जनवास भर गया हो।

उस समय जैसा प्रेम व आनंद का माहौल है उसे कोई जान नहीं सकता है। जब कोहबर का कार्यक्रम पूरा हो गया तब सखियाँ सभी वरों व वधुओं को लेकर जनवासे की ओर चल दीं। जनकपुर के सभी लोग बाहर आ गये। चारों तरफ आशीषें गूँज रही हैं कि चारों की जोड़ी चिरंजीवी हो। योगी, मुनि, सिद्ध व देवता राम को देखकर हर्षित हुए, दुंदुभी बजायी, फूलों की वर्षा करके जय हो, जय हो, जय हो कहते हुए चले गये। महाराज दशरथ ने देखा कि चारों पुत्र वधुओं सहित आ गये हैं। जनवासे में हलचल बढ़ गयी, उमंग छा गया। यहाँ से विवाह का कार्य पूरा हो गया। तुलसीदास जी ने चार-चार छंदों में विवाह का वर्णन किया है।

10. भव्य जेवनार, जनकपुर में नित्य मंगल व आनंद

(दोहा 328 से 332)

विवाह के दूसरे दिन दोपहर में मंडप के नीचे बारातियों को भोजन करवाया जाता है, इसे जेवनार कहते हैं। महाराज जनक ने बहुत आदर के साथ सबको आमंत्रित किया। चरण धोकर, उचित आसनों पर बैठाया। चतुर परोसने वाले विनम्रता व आदर से मणियों की पत्तलों में अनेक प्रकार का भोजन परोसते हैं। स्त्रियाँ मधुर ध्वनि में गालियाँ गाती हैं। अत्यंत आनंद के माहौल में भोजन करवाया जाता है। जनकपुर में बारात ठहरी है, नित्य नये मंगल हो रहे हैं। समय तेजी से व्यतीत हो रहा है। दशरथ जी ने विप्रों को गाय व भिक्षुओं को

वस्तुएँ दान दीं। दशरथ जी रोज कहते हैं कि अब हमें जाने दीजिये परंतु जनक जी रोक लेते हैं। अंत में शतानंद जी व विश्वामित्र के कहने से जनक जी विदा के लिये तैयार हो जाते हैं।

दोपहर के भोजन के आमंत्रण पर बाराती राजभवन पहुँचे

पुनि जेवनार भई बहु भाँती। पठए जनक बोलाइ बराती ॥328:1॥
परत पाँवड़े बसन अनूपा। सुतन्ह समेत गवन कियो भूपा ॥328:2॥

पुनि जेवनार भई बहु भाँती = फिर बहुत प्रकार का भोजन बनाया गया, *पठए जनक बोलाइ बराती* = जनक जी ने बारातियों को बुलावा भेजा, *परत पाँवड़े बसन अनूपा* = अनुपम वस्त्रों के पाँवड़े बिछाये गये, *सुतन्ह समेत गवन कियो भूपा* = राजा दशरथ पुत्रों सहित पाँवड़ों के ऊपर चलकर राजभवन पहुँचे।

गोधूलि बेला में बारात जनवासे से चली थी, मंडप हुआ, रात्रि में कोहबर हुआ, सुबह होते-होते चारों वर-वधू जनवासे आ गये। राजभवन में भोजन की तैयारी शुरू हो गयी। अभी तक जनवासे में ही भोजन बनता रहा, वहीं सब भोजन करते रहे। विवाह के बाद बारातियों को राजभवन में भोजन के लिये महाराज जनक ने मुख्य लोगों को भेजकर आमंत्रित किया। अनुपम वस्त्रों के पाँवड़े बिछाये गये। राजा दशरथ पुत्रों सहित पाँवड़ों के ऊपर चलकर राजभवन पहुँचे।

चरण धोकर उचित आसन पर बैठाया गया

सादर सब के पाय पखारे। जथाजोगु पीढ़न्ह बैठारे ॥328:3॥
धोए जनक अवधपति चरना। सीलु सनेहु जाइ नहिं बरना ॥328:4॥

सादर सब के पाय पखारे = आदर के साथ सबके चरण धोए गये, *जथाजोगु पीढ़न्ह बैठारे* = सबको यथा-योग्य पीढ़ों पर बैठाया गया, *धोए जनक अवधपति चरना* = जनक जी ने अवध के राजा दशरथ जी के चरण धोए, *सीलु सनेहु जाइ नहिं बरना* = उनके शील व स्नेह का वर्णन नहीं किया जा सकता है।

राजभवन पहुँचने पर सबसे पहले विप्रों के, फिर बारातियों के चरण धोकर उन्हें आदरपूर्वक बैठाया गया। राजा दशरथ के चरणों का महाराज जनक ने विनम्रता, शील व स्नेह से स्वयं धोया।

राम व सभी भाइयों के चरण जनक जी ने धोए

बहुरि राम पद पंकज धोए। जे हर हृदय कमल महुँ गोए ॥328:5॥
तीनिउ भाइ राम सम जानी। धोए चरन जनक निज पानी ॥328:6॥

बहुरि राम पद पंकज धोए = फिर कमल के समान राम के चरण धोए, *जे हर हृदय कमल महुँ गोए* = जो शिव जी के हृदय गुफा में कमल के समान छिपे रहते हैं, *तीनिउ भाइ राम सम जानी* = अन्य तीनों भाइयों को राम के ही समान जानकर, *धोए चरन जनक निज पानी* = जनक जी ने अपने हाथों से उनके चरण धोए।

प्रभु राम के चरण कमल के समान हैं, शिव जी का हृदय भी कमल के समान है। कमल कमल में छिप गया फिर कैसे दिखे? वही चरण यहाँ पर जनक जी अपने हाथों से धो रहे हैं। तीनो भाइयों को भी राम के समान समझकर जनक जी ने उनके भी चरण धोये।

उचित स्थान में बैठाकर, मणि की पत्तलें रखी गयीं

आसन उचित सबहि नृप दीन्हे। बोलि सूपकारी सब लीन्हे ॥328:7॥
सादर लगे परन पनवारे। कनक कील मनि पान सँवारे ॥328:8॥

आसन उचित सबहि नृप दीन्हे = राजा जनक ने सभी को उचित आसन दिया, *बोलि सूपकारी सब लीन्हे* = फिर परोसने वालों को बुला लिया, *सादर लगे परन पनवारे* = आदर पूर्वक पत्तलें रखी गयीं, *कनक कील मनि पान सँवारे* = ये मणियों से बनी हैं व सोने की कील लगी हैं।

विवाह के बाद दोपहर का भोजन मंडप में ही किया जाता है। बैठने की व्यवस्था पहले से ही निश्चित थी, उसी के अनुसार सबको बैठाया गया। फिर कुशल भोजन परोसने वालों को बुलवाया गया। उन्होंने आदरपूर्वक

सबके सामने पत्तलें रखीं। ये पत्तलें कैसी हैं? हरी मणियों की बनी हुई जिसमें स्वर्ण की कीलें लगी हैं।

दाल-चावल व गाय का घी विनम्रता से परोसा गया

सूपोदन सुरभी सरपि सुंदर स्वादु पुनीत ।
छन महुँ सब कें परुसि गे चतुर सुआर बिनीत ॥दोहा 328॥

सूपोदन = दाल-चावल, *सुरभी सरपि* = गाय का घी, *सुंदर स्वादु पुनीत* = जो स्वादिष्ट; सुंदर व पवित्र है, *छन महुँ सब कें परुसि गे* = शीघ्रता से सबके सामने परोसा, *चतुर सुआर बिनीत* = चतुर व विनीत रसोइयों ने।

चतुर परोसने वालों ने क्षण भर में ही सबकी पत्तलों में सबसे पहले दाल, चावल व गाय का घी बहुत ही विनम्रता से परोस दिया। इस भोजन की विशेषता क्या है? खाने में स्वादिष्ट है, देखने में सुंदर है, बनाते समय सफाई का ध्यान रखा गया है, इसलिये शुद्ध है।

भोग लगाकर, मधुर गालियों के बीच यह भोजन किया

पंच कवल करि जेवन लागे। गारि गान सुनि अति अनुरागे ॥329:1॥

पंच कवल करि = पहले पाँच कौर भगवान को अर्पित किये गये, *जेवन लागे* = फिर सब भोजन करने लगे, *गारि गान सुनि अति अनुरागे* = गालियों को गाकर सुनते हुए सब बहुत आनंदित हैं।

इतना भोजन परोसने के बाद सबसे प्रार्थना की गई कि भोजन प्रारंभ करें। भोजन कैसे शुरू किया? पहले पाँच कौर निकालकर भगवान को अर्पित किये गये। भगवान को अर्पण करके खाने के पीछे सिद्धांत यह भी है कि बनाने वाला भोग समझकर प्रसन्न मन से शुद्धता से भोजन बनायेगा। दाल-चावल में घी मिलाकर जैसे ही बारातियों ने भोजन करना प्रारंभ किया जनकपुर की स्त्रियाँ, जो छिपकर बैठी थीं, उन्होंने गालियाँ गाना प्रारंभ कर दिया। दशरथ जी सहित बारातियों को ये मधुर गालियाँ अच्छी लग रही हैं। तुलसीदास जी उत्साह से वर्णन करते हैं कि इस समय गालियाँ भी सुखदायी लग रही हैं।

चार प्रकार से खाने वाले छः स्वाद के अनेको व्यंजन परोसे गये

भाँति अनेक परे पकवाने। सुधा सरिस नहिं जाहिं बखाने ॥329:2॥
परुसन लगे सुआर सुजाना। बिंजन बिबिध नाम को जाना ॥329:3॥
चारि भाँति भोजन बिधि गाई। एक एक बिधि बरनि न जाई ॥329:4॥
छरस रुचिर बिंजन बहु जाती। एक एक रस अगनित भाँती ॥329:5॥

भाँति अनेक परे पकवाने = अनेक प्रकार के पकवान परोसे गये, *सुधा सरिस नहिं जाहिं बखाने* = स्वाद अमृत के समान है जिसका वर्णन नहीं हो सकता, *परुसन लगे सुआर सुजाना* = चतुर रसोइये परोसने लगे, *बिंजन बिबिध नाम को जाना* = विविध प्रकार के भोजन हैं जिनके नाम कौन जानता है, *चारि भाँति भोजन बिधि गाई* = चार प्रकार के भोजन की विधि कही गयी है, *एक एक बिधि बरनि न जाई* = उनमें से एक-एक विधि के इतने पदार्थ बने थे जिसका वर्णन नहीं हो सकता है, *छरस रुचिर* = छहों रसों के स्वाद के स्वादिष्ट, *बिंजन बहु जाती* = बहुत प्रकार के भोजन हैं, *एक एक रस अगनित भाँती* = एक-एक रस के स्वाद के अगनित भोजन हैं।

परोसने वाले अनेक प्रकार के स्वादिष्ट भोजन परोस रहे हैं। उनकी विनम्रता व प्रियता से भोजन में और स्वाद आ गया। सूपकार जानते हैं कि किन लोगों को क्या परोसना चाहिये, विप्रों को क्या परोसें? इसी प्रकार परोस रहे हैं। खाद्य पदार्थों के इतने नाम हैं कि कौन उनके नाम जाने? तुलसीदास जी ने परोसते हुए तो देखा, पर नाम मालूम नहीं, चार प्रकार का वर्गीकरण कर दिया–1. चबाकर खाने वाले पदार्थ, 2. चूसकर खाने वाले, 3. चाट कर खाने वाले, 4. पीकर खाने वाले जैसे दही, रायता, दूध इत्यादि। एक-एक तरह के अनेकों प्रकार हैं। दूसरा वर्गीकरण स्वाद के अनुसार कर दिया, मीठा, खट्टा, तीखा, चटपटा, नमकीन व कड़वा, ये छ: प्रकार के स्वाद हैं। एक स्वाद के कई प्रकार के भोजन हैं।

गालियों के बीच हँसकर, प्रसन्नता से भोजन कर रहे हैं

जेवँत देहिं मधुर धुनि गारी। लै लै नाम पुरुष अरु नारी ॥329:6॥
समय सुहावनि गारि बिराजा। हँसत राउ सुनि सहित समाजा ॥329:7॥

जेवँत = भोजन करने वालों को, *देहिं मधुर धुनि गारी* = मधुर वाणी में गाली दी जा रही है, *लै लै नाम पुरुष अरु नारी* = उनके यहाँ के पुरुष व स्त्रियों का नाम ले लेकर, *समय सुहावनि गारि बिराजा* = इस समय गालियाँ भी सुंदर लग रही हैं, *हँसत राउ सुनि सहित समाजा* = इसे सुनकर राजा दशरथ समाज सहित हँस रहे हैं।

भोजन करने वालों के यहाँ के स्त्री व पुरुषों के नाम ले लेकर जनकपुर की स्त्रियाँ मधुर वाणी में गाली दे रही हैं। इस समय गालियाँ भी सुंदर लग रही हैं। गालियों को सुनकर महाराज दशरथ हँस रहे हैं, बाराती भी आनंद ले रहे हैं। प्रसन्न मन से सब भोजन कर रहे हैं।

भोजन के बाद पान खिलाया, बाराती जनवासे आ गये

एहि बिधि सबहीं भोजनु कीन्हा। आदर सहित आचमनु दीन्हा ॥329:8॥

एहि बिधि सबहीं भोजनु कीन्हा = इस प्रकार सबने भोजन किया, *आदर सहित आचमनु दीन्हा* = आदर पूर्वक कुल्ला करवाया गया।

देइ पान पूजे जनक दसरथु सहित समाज ।
जनवासेहि गवने मुदित सकल भूप सिरताज ॥दोहा 329॥

देइ पान = पान देकर, *पूजे जनक* = जनक जी ने पूजा की, *दसरथु सहित समाज* = दशरथ जी सहित पूरे समाज की, *जनवासेहि गवने मुदित* = प्रसन्नता से जनवासे गये, *सकल भूप सिरताज* = सभी राजाओं के सिरमौर चक्रवर्ती दशरथ जी।

भोजन के बाद आदरपूर्वक कुल्ला करवाया गया। जनक जी ने सबको पान दिया। पूरी जेवनार में आदर व उल्लास का भाव था। तिलक लगाकर, माला पहनायी, इत्र लगाया इस प्रकार पूजन किया। चक्रवर्ती महाराज दशरथ बहुत प्रसन्न हैं, सबके साथ वे जनवासे वापस आ गये।

जनकपुर में नित्य नये मंगल, समय पता ही नहीं चल रहा

नित नूतन मंगल पुर माहीं। निमिष सरिस दिन जामिनि जाहीं ॥330:1॥

नित नूतन मंगल पुर माहीं = जनकपुर में रोज नये मंगल हो रहे हैं, *निमिष सरिस दिन जामिनि जाहीं* = पल के समान दिन-रात व्यतीत हो रहे हैं।

विवाह के बाद जेवनार हुई, बारात अभी ठहरी है, रोज नये-नये मंगल हो रहे हैं। आनंद का समय है, दिन-रात तेजी से बीतते जा रहे हैं। ऐसा माना जाता है कि अयोध्या के नवयुवकों के विवाह भी जनकपुर की विवाह योग्य कन्याओं से कर दिये गये, घर-घर मंडप तो बने ही थे। मंत्री व गणमान्य लोग भी अपने यहाँ बारात को बुलवाकर भोजन करवाते हैं। इसे ही नित्य नये मंगल कहते हैं।

महाराज दशरथ, वसिष्ठ जी से गाय दान देने का अनुरोध करते हैं

बड़े भोर भूपतिमनि जागे। जाचक गुन गन गावन लागे ॥330:2॥
देखि कुअँर बर बधुन्ह समेता। किमि कहि जात मोदु मन जेता ॥330:3॥

बड़े भोर भूपतिमनि जागे = बहुत सुबह ही राजाओं के मुकुटमणि दशरथ जी उठे, *जाचक गुन गन गावन लागे* = याचक उनके गुण समूह का गान करने लगे, *देखि कुअँर बर बधुन्ह समेता* = चारों राजकुमारों को सुंदर वधुओं सहित देखकर, *किमि कहि जात मोदु मन जेता* = मन में जो आनंद है उसका कैसे वर्णन करें।

प्रातक्रिया करि गे गुरु पाहीं। महाप्रमोदु प्रेमु मन माहीं ॥330:4॥
करि प्रनामु पूजा कर जोरी। बोले गिरा अमिअँ जनु बोरी ॥330:5॥
तुम्हरी कृपाँ सुनहु मुनिराजा। भयउँ आजु मैं पूरन काजा ॥330:6॥
अब सब बिप्र बोलाइ गोसाईं। देहु धेनु सब भाँति बनाईं ॥330:7॥

प्रातक्रिया करि गे गुरु पाहीं = प्रातः क्रिया करके राजा गुरु वसिष्ठ के पास गये, *महाप्रमोदु प्रेमु मन माहीं* = उनके मन में बहुत अधिक प्रेम व आनंद है, *करि प्रनामु पूजा कर जोरी* = गुरु को प्रणाम किया; पूजा की फिर हाथ जोड़कर, *बोले गिरा अमिअँ जनु बोरी* = अमृत में डुबोयी हुई वाणी से बोले, *तुम्हरी कृपाँ सुनहु मुनिराजा* = हे मुनिराज! सुनिये; आपकी कृपा से, *भयउँ आजु मैं पूरन काजा* = आज मैं पूर्णकाम हो गया, *अब सब बिप्र बोलाइ गोसाईं* = हे स्वामी! अब सभी विप्रों को बुलवाकर, *देहु धेनु सब भाँति बनाईं* = सब प्रकार से सजी हुई गायें दीजिये।

एक दिन दशरथ जी सुबह उठे, याचक लोग उनकी जय-जयकार कर रहे थे। पुत्र व पुत्रवधुओं को देखकर महाराज के मन में इतना आनंद है कि वर्णन नहीं किया जा सकता है। प्रात: नित्य कर्म करके, बहुत प्रेम व आनंद के साथ गुरु वसिष्ठ के पास पहुँचकर प्रणाम किया, पूजा की फिर हाथ जोड़कर मधुर वाणी में विनम्रता से बोले, हे मुनिराज! आपकी कृपा से मेरी सारी मनोकामनायें पूरी हो गयी हैं। हे स्वामी! अब विप्रों को बुलवाकर, सब प्रकार से सजाकर गायें दान करने की कृपा करें।

वसिष्ठ जी ने विप्रों को बुलवाकर चार लाख सजी गायें दान करवाईं

सुनि गुर करि महिपाल बड़ाई। पुनि पठए मुनिबृंद बोलाई ॥330:8॥

सुनि = यह सुनकर, *गुर करि महिपाल बड़ाई* = गुरु वसिष्ठ ने राजा की प्रशंसा की, *पुनि पठए मुनिबृंद बोलाई* = फिर मुनियों को बुलावा भेजा।

बामदेउ अरु देवरिषि बालमीकि जाबालि ।
आए मुनिबर निकर तब कौसिकादि तपसालि ॥दोहा 330॥

बामदेउ अरु देवरिषि बालमीकि जाबालि = तब वामदेव; देवर्षि नारद; वाल्मीकि; जाबालि, *आए मुनिबर निकर तब* = ये श्रेष्ठ मुनियों के समूह आये, *कौसिकादि तपसालि* = विश्वामित्र जी व अन्य तपस्वी मुनि आये।

दंड प्रनाम सबहि नृप कीन्हे। पूजि सप्रेम बरासन दीन्हे ॥331:1॥
चारि लच्छ बर धेनु मगाईं। काम सुरभि सम सील सुहाईं ॥331:2॥
सब बिधि सकल अलंकृत कीन्हीं। मुदित महिप महिदेवन्ह दीन्हीं ॥331:3॥
करत बिनय बहु बिधि नरनाहू। लहेउँ आजु जग जीवन लाहू ॥331:4॥

दंड प्रनाम सबहि नृप कीन्हे = राजा ने सभी को दंडवत् प्रणाम किया, *पूजि सप्रेम बरासन दीन्हे* = प्रेम सहित पूजन करके उत्तम आसन पर बैठाया, *चारि लच्छ बर धेनु मगाईं* = चार लाख उत्तम गायें मँगवायीं, *काम सुरभि सम सील सुहाईं* = कामदेव के समान बहुत दूध देनेवाली शीलवान् व सुंदर थीं, *सब बिधि सकल अलंकृत कीन्हीं* = उन गायों का सब प्रकार से सजाया गया, *मुदित महिप महिदेवन्ह दीन्हीं* = प्रसन्न मन से राजा ने गायों को पृथ्वी के देवता विप्रों; मुनियों को दिया, *करत बिनय बहु बिधि नरनाहू* = राजा

बहुत प्रकार से विनती करते हैं, *लहेउँ आजु जग जीवन लाहू* = आज मैंने जीवन का फल प्राप्त कर लिया है।

गायें दान करने का निवेदन सुनकर वसिष्ठ जी ने दशरथ जी की प्रशंसा की– यही धर्म है। तुम्हें गौदान अवश्य करना चाहिये। इसके बाद मुनियों को बुलावा भेजा गया। वाल्मीकि जी, वामदेव जी, देवर्षि नारद, मुनि विश्वामित्र व अन्य मुनि अपने समूह सहित आये। दशरथ जी ने मुनियों के चरणों में जमीन पर लेटकर दंडवत् प्रणाम किया, पूजा करके श्रेष्ठ आसनों पर बैठाया। कामधेनु के समान बहुत दूध देनेवाली 4 लाख गायें मँगवाकर, इन्हें अलंकृत किया गया, सींघों को स्वर्ण से सजाया गया। प्रसन्न मन से राजा ने पृथ्वी के देवता कहलाने वाले मुनियों, विप्रों, महर्षियों को गायें दान देकर बहुत प्रकार से विनती की कि आज मैंने जीवन का फल प्राप्त कर लिया है। पृथ्वी के देवता वे हैं जो शास्त्रों का अध्ययन करके उसकी शिक्षा समाज को देते हैं ताकि लोग सही मार्ग पर चलें। इन्हें गौ चाहिये जिससे सात्त्विक भोजन प्राप्त हो।

भिक्षुओं को वस्त्र, पशु, स्वर्ण इत्यादि दान दिया

पाइ असीस महीसु अनंदा। लिए बोलि पुनि जाचक बृंदा ॥331:5॥
कनक बसन मनि हय गय स्यंदन। दिए बूझि रुचि रबिकुलनंदन ॥331:6॥
चले पढ़त गावत गुन गाथा। जय जय जय दिनकर कुल नाथा ॥331:7॥
एहि बिधि राम बिआह उछाहू। सकइ न बरनि सहस मुख जाहू ॥331:8॥

पाइ असीस महीसु अनंदा = मुनियों का आशीर्वाद पाकर राजा आनंदित हैं, *लिए बोलि पुनि जाचक बृंदा* = फिर याचकों के समूह को बुलवाया, *कनक बसन मनि हय गय स्यंदन* = स्वर्ण; वस्त्र; मणि; घोड़ा; हाथी व रथ, *दिए बूझि रुचि रबिकुलनंदन* = उनकी रुचि पूछकर सूर्यकुल को आनंदित करने वाले राजा दशरथ ने दिया, *चले पढ़त गावत गुन गाथा* = वंशावली की गुणगाथा पढ़ते हुए गाते हुए, *जय जय जय दिनकर कुल नाथा* = सूर्यकुल के स्वामी की जय हो, जय हो, जय हो कहते हुए वे सब चले गये, *एहि बिधि राम बिआह उछाहू* = इस प्रकार राम जी के विवाह का उत्सव हुआ, *सकइ न बरनि सहस मुख जाहू* = इसका वर्णन शेषनाग जिनके एक हजार मुख हैं वे भी नहीं कर सकते हैं।

बार बार कौसिक चरन सीसु नाइ कह राउ ।
यह सबु सुखु मुनिराज तव कृपा कटाच्छ पसाउ ॥दोहा 331॥

बार बार कौसिक चरन = बार-बार विश्वामित्र जी के चरणों में, *सीसु नाइ कह राउ* = सिर झुकाकर राजा दशरथ कहते हैं, *यह सबु सुखु मुनिराज* = हे मुनिराज! यह सब सुख, *तव कृपा कटाच्छ पसाउ* = आपके ही कृपा कटाक्ष का प्रसाद है।

विप्रों से आशीर्वाद पाकर राजा आनंदित होकर याचकों, बंदी, मागध इत्यादि को बुलवाते हैं। इनकी रुचि पूछी कि किसे क्या चाहिये, उसी अनुसार स्वर्ण, वस्त्र, मणि, घोड़ा, हाथी व रथ इत्यादि दान में दिया। वंशावली की गुणगाथा पढ़ते हुए गाते हुए, सूर्यकुल के स्वामी की जय हो, जय हो, जय हो कहते हुए वे सब चले गये। इस प्रकार राम जी के विवाह का उत्सव हुआ, जिसका वर्णन शेषनाग जिनके एक हजार मुख हैं, वे भी नहीं कर सकते हैं। विश्वामित्र जी के चरणों में बार-बार सिर झुकाकर प्रणाम करके दशरथ जी कहते हैं कि यह सब कार्य आपकी दया, कृपा के कारण ही संभव हो सका।

दशरथ जी जाना चाहते हैं पर जनक जी रोक लेते हैं

जनक सनेहु सीलु करतूती। नृपु सब भाँति सराह बिभूती ॥332:1॥
दिन उठि बिदा अवधपति मागा। राखहिं जनकु सहित अनुरागा ॥332:2॥

जनक सनेहु सीलु करतूती = राजा जनक का स्नेह; शील व कार्य, *नृपु सब भाँति सराह बिभूती* = और उनके ऐश्वर्य की राजा दशरथ ने सब प्रकार से प्रशंसा की, *दिन उठि बिदा अवधपति मागा* = प्रतिदिन सुबह उठकर अयोध्या के राजा दशरथ विदा माँगते हैं, *राखहिं जनकु सहित अनुरागा* = पर जनक जी प्रेम से उन्हें रोक लेते हैं।

नित नूतन आदरु अधिकाई। दिन प्रति सहस भाँति पहुनाई ॥332:3॥
नित नव नगर अनंद उछाहू। दसरथ गवनु सोहाइ न काहू ॥332:4॥
बहुत दिवस बीते एहि भाँती। जनु सनेह रजु बँधे बराती ॥332:5॥

नित नूतन आदरु अधिकाई = प्रतिदिन आदर बढ़ता जाता है, *दिन प्रति सहस भाँति पहुनाई* = प्रतिदिन हजारों प्रकार से मेहमानी होती है, *नित नव नगर अनंद उछाहू* = नगर में नित्य नया आनंद व उत्साह रहता है, *दसरथ गवनु*

सोहाइ न काहू = दशरथ जी का जाना किसी को अच्छा नहीं लग रहा है, *बहुत दिवस बीते एहि भाँती* = इस प्रकार बहुत दिन व्यतीत हो गये, *जनु सनेह रजु बँधे बराती* = मानो स्नेह की रस्सी से बाराती बँध गये हों।

महाराज दशरथ, जनक जी के स्नेह, शील, कार्य व ऐश्वर्य की सब प्रकार से प्रशंसा करते हैं। दशरथ जी प्रतिदिन उठकर जनक जी से निवेदन करते हैं कि आज विदा कर दिया जाये, अब हम लोग चलेंगे परंतु जनक जी प्रेम से रोक लेते हैं, जाने नहीं देते हैं। आदर सत्कार में कोई कमी न हो जाये इसलिये नित्य नये प्रकार से सत्कार करते हैं। हजारों तरह से अतिथि सेवा की। रोज नये तरह का आनंद छा जाता है। जनकपुर में भी कोई नहीं चाहता कि बारात जाये। इस प्रकार बहुत दिन बीत गये, सेवा ही होती रही, सब प्रेम की रस्सी में बँधे रहे।

विश्वामित्र-शतानंद जी के कहने से जनक जी विदा को तैयार

कौसिक सतानंद तब जाई। कहा बिदेह नृपहि समुझाई ॥332:6॥
अब दसरथ कहँ आयसु देहू। जद्यपि छाड़ि न सकहु सनेहू ॥332:7॥
भलेहिं नाथ कहि सचिव बोलाए। कहि जय जीव सीस तिन्ह नाए ॥332:8॥

कौसिक सतानंद तब जाई = तब विश्वामित्र जी व शतानंद जी ने जाकर, *कहा बिदेह नृपहि समुझाई* = राजा जनक को समझाकर कहा, *अब दसरथ कहँ आयसु देहू* = अब दशरथ जी को जाने की आज्ञा दें, *जद्यपि छाड़ि न सकहु सनेहू* = यद्यपि आप स्नेह के कारण उन्हें जाने नहीं देना चाहते, *भलेहिं नाथ कहि सचिव बोलाए* = हे नाथ! ठीक है ऐसा कहकर राजा ने सचिवों को बुलवाया, *कहि जय जीव सीस तिन्ह नाए* = मंत्रियों आकर जयजीव कहकर मस्तक झुकाकर प्रणाम किया।

अवधनाथु चाहत चलन भीतर करहु जनाउ ।
भए प्रेमबस सचिव सुनि बिप्र सभासद राउ ॥दोहा 332॥

अवधनाथु चाहत चलन = अयोध्या के नाथ अब जाना चाहते हैं, *भीतर करहु जनाउ* = अंदर जाकर यह सूचना दे दो, *भए प्रेमबस सचिव सुनि बिप्र सभासद राउ* = यह सुनकर मंत्री; विप्र; सभासद व राजा जनक भी प्रेम के वशीभूत हो गये।

दशरथ जी ने एक युक्ति निकाली, शतानंद जी व विश्वामित्र जी से कहा कि आप लोग प्रयास करो तब विदाई हो पायेगी। आप दोनों की बात जनक जी मान जायेंगे। ये दोनों जनक जी के दरबार पहुँचे, उन्हें समझाया कि अयोध्या में सब इंतजार कर रहे हैं। आप स्नेह के कारण इन्हें जाने नहीं देना चाहते। ये कब तक रुके रहेंगे? अब आप विदाई की स्वीकृति प्रदान करें। जनक जी ने कहा ठीक है, विदाई की तैयारी करवाते हैं। मंत्रियों को निकट बुलवाया। मंत्रियों ने प्रणाम करके कहा जय-जीव, आपकी जय हो, आप दीर्घजीवी हों, फिर आदेश माँगा। राजा ने कहा कि अंदर रनिवास में जाकर सूचना दो कि महाराज अवधनाथ, अयोध्या जाना चाहते हैं। यह सुनकर विप्र, सभासद व मंत्री सभी के अंदर प्रेम आ गया।

11. विदाई

(दोहा 333 से 342)

विदाई की तैयारी में जनक जी ने बारात वापसी में ठहरने के स्थानों पर भोजन व्यवस्था हेतु सामान भेजा। दुबारा बहुत सारा दहेज का सामान सीधे अयोध्या भेजा। रनिवास में व पूरे नगर में लोग दु:ख से व्याकुल हो गये। रानियाँ चारों राजकुमारियों से बार-बार भेंट करके आशीर्वाद व शिक्षायें देती हैं। राम तीनो भाइयों सहित विदा करवाने राजमहल पहुँचे। रानी सुनयना राम जी से विनती करके सीता को अपना समझकर अपनाने का अनुरोध करती हैं। राजा जनक ज्ञान भूलकर पुत्री की विदाई में रो रहे हैं। पूरे नगर में करुणा छा गयी। डोली में राजकुमारियों को विदा करके बारात के साथ जनक जी नगर के बाहर बहुत दूर तक जाते हैं। दोनों समधी एक-दूसरे के प्रति आभार व्यक्त कर प्रेम अश्रुओं से भर जाते हैं। जनक जी राम की स्तुति करते हैं फिर वरदान माँगते हैं कि मन भूलकर भी आपके चरणों को न भूले। राजा जनक तीनो भाइयों से मिलकर अंत में विश्वामित्र जी के प्रति आभार व कृतज्ञता व्यक्त करते हैं।

विदाई की बात सुनकर जनकपुरवासी व्याकुल

पुरबासी सुनि चलिहि बराता। बूझत बिकल परस्पर बाता ॥333:1॥
सत्य गवनु सुनि सब बिलखाने। मनहुँ साँझ सरसिज सकुचाने ॥333:2॥

पुरबासी सुनि चलिहि बराता = जनकपुर के लोगों ने सुना बारात अब जायेगी, *बूझत बिकल परस्पर बाता* = वे व्याकुल होकर एक दूसरे से पूछने लगे कि सत्य बात क्या है, *सत्य गवनु सुनि* = यह जानकर कि जाने की खबर सच्ची है, *सब बिलखाने* = सब व्यथित होकर उदास हो गये, *मनहुँ साँझ सरसिज सकुचाने* = जैसे संध्या के समय कमल मुरझा गये हों।

पूरे जनकपुर में खबर फैल गयी कि बारात अब वापस अयोध्या जायेगी। नगरवासी एक दूसरे से पूछते हैं– क्या यह खबर सच्ची है? जब निश्चय हो गया कि हाँ बारात वापस जाने वाली है तो सब दु:खी हो गये। जैसे सायंकाल होने पर कमल कली बनकर संकुचित हो जाता है वैसे ही नगरवासी उदास हो गये।

वापसी में बारात ठहरने के स्थान पर भोजन सामग्री भेजी

जहँ जहँ आवत बसे बराती। तहँ तहँ सिद्ध चला बहु भाँती ॥333:3॥
बिबिध भाँति मेवा पकवाना। भोजन साजु न जाइ बखाना ॥333:4॥
भरि भरि बसहँ अपार कहारा। पठईं जनक अनेक सुसारा ॥333:5॥

जहँ जहँ आवत बसे बराती = आते समय जहाँ-जहाँ बाराती ठहरे थे, *तहँ तहँ सिद्ध चला बहु भाँती* = वहाँ-वहाँ बहुत प्रकार का सीधा मायने खाने का सामान भेजा गया, *बिबिध भाँति मेवा पकवाना* = अनेकों प्रकार के मेवे व पकवान, *भोजन साजु न जाइ बखाना* = और भोजन का सामान जिसका वर्णन नहीं किया जा सकता है, *भरि भरि बसहँ* = बैलों पर लादकर, *अपार कहारा* = कहारों ने कंधे पर उठाकर, *पठईं जनक अनेक सुसारा* = अनेकों भोजन सामग्री जनक जी ने भिजवाई।

जब बारात वापस जाती है तब रास्ते में भोजन की जो व्यवस्था की जाती है उसे सुसार कहते हैं। कच्ची भोजन सामग्री जैसे दाल, चावल, आटा इत्यादि को सीधा कहते हैं। सीधा लेकर चलने वालों को सिद्ध कहते हैं। सीधा के साथ अनेकों प्रकार के पकवान, मेवे इत्यादि बैलों पर लादकर व कहार कंधों पर लादकर उन स्थानों में जनक जी ने भिजवाये जहाँ-जहाँ बारात वापसी में रुकने वाली थी। इस प्रकार विदाई की तैयारी शुरू की।

जनक जी ने दुबारा बहुत सारा दहेज अयोध्या भिजवाया

तुरग लाख रथ सहस पचीसा। सकल सँवारे नख अरु सीसा ॥333:6॥
मत्त सहस दस सिंधुर साजे। जिन्हहि देखि दिसिकुंजर लाजे ॥333:7॥
कनक बसन मनि भरि भरि जाना। महिषीं धेनु बस्तु बिधि नाना ॥333:8॥

तुरग लाख = एक लाख घोड़े, *रथ सहस पचीसा* = पच्चीस हजार रथ, *सकल सँवारे नख अरु सीसा* = सभी नीचे से लेकर ऊपर तक सजाकर, *मत्त सहस दस सिंधुर साजे* = दस हजार सजे हुए सुंदर हाथी, *जिन्हहि देखि दिसिकुंजर लाजे* = जिन्हें देखकर दिशाओं के हाथी भी लज्जित हो जायें, *कनक बसन मनि* = स्वर्ण; वस्त्र व मणियाँ, *भरि भरि जाना* = गाड़ियों में भर भरकर, *महिषीं* = भैसें, *धेनु* = गायें, *बस्तु बिधि नाना* = और भी अनेकों प्रकार की वस्तुयें प्रदान कीं।

दाइज अमित न सकिअ कहि दीन्ह बिदेहँ बहोरि ।
जो अवलोकत लोकपति लोक संपदा थोरि ॥दोहा 333॥

दाइज अमित न सकिअ कहि = इतना अधिक दहेज है जिसका वर्णन नहीं हो सकता है, *दीन्ह बिदेहँ बहोरि* = जनक जी ने फिर से दिया, *जो अवलोकत* = जिसे देखकर, *लोकपति लोक संपदा थोरि* = लोकपालों के लोकों की संपदा भी कम लगती है।

सबु समाजु एहि भाँति बनाई। जनक अवधपुर दीन्ह पठाई ॥334:1॥

सबु समाजु एहि भाँति बनाई = इस प्रकार सारा समान सजाकर, *जनक अवधपुर दीन्ह पठाई* = जनक जी ने अवधपुर भेज दिया।

विवाह के बाद मंडप में जनक जी ने जो दहेज दिया, दशरथ जी ने उसे बाँट दिया था। विदाई के समय जनक जी फिर से इतना अधिक दहेज देते हैं कि उसे देखकर लोकपालों, जो सबसे धनी हैं, के लोकों की संपदा भी कम लगती है। महाराज दशरथ की स्वीकृति से सब सामान विदाई के पहले ही अयोध्या भेज दिया गया। सामान इस प्रकार है।

1. एक लाख घोड़े, सभी नीचे से लेकर ऊपर तक सजाकर।
2. पच्चीस हजार रथ, सभी अच्छे से सजाकर।

3. दस हजार सजे हुए सुंदर हाथी जिन्हें देखकर दिशाओं के हाथी भी लज्जित हो जायें।
4. स्वर्ण, वस्त्र व मणियाँ, गाड़ियों में भर भरकर।
5. भैसें, गायें, और भी अनेकों प्रकार की वस्तुयें।

दहेज माँगें नहीं, यदि मिले तो बाँटें अवश्य

भारतीय संस्कृति में दहेज माँगने की प्रथा नहीं है। वधू पक्ष अपने सामर्थ्य अनुसार वर पक्ष को प्रसन्नता से दहेज देता है। माँगना अनुचित है। हाँ, यदि बिना माँगे मिले तो उसे जरूरतमंदों को दान में देने का प्रयास अवश्य करना चाहिये।

रानियाँ कम पानी की मछलियों जैसे व्याकुल

चलिहि बरात सुनत सब रानीं। बिकल मीनगन जनु लघु पानीं ॥334:2॥

चलिहि बरात = बारात अब जायेगी, *सुनत सब रानीं बिकल* = यह सुनकर सभी रानियाँ इस प्रकार व्याकुल हो गयीं, *मीनगन जनु लघु पानीं* = जैसे कम जल में मछलियाँ छटपटा रही हों।

बारात अब जायेगी यह सुनते ही रानियाँ व्याकुल हो जाती हैं। कैसे? जैसे पानी कम हो जाने पर मछलियाँ छटपटाने लगती हैं, व्याकुल होती हैं। स्त्रियों को बहुत दु:ख होता है।

सीता को गोद में बैठाकर रानियाँ आशीषें व शिक्षा देती हैं

पुनि पुनि सीय गोद करि लेहीं। देइ असीस सिखावनु देहीं ॥334:3॥
होएहु संतत पियहि पिआरी। चिरु अहिबात असीस हमारी ॥334:4॥
सासु ससुर गुर सेवा करेहू। पति रुख लखि आयसु अनुसरेहू ॥334:5॥
अति सनेह बस सखीं सयानी। नारि धरम सिखवहिं मृदु बानी ॥334:6॥

पुनि पुनि सीय गोद करि लेहीं = वे बार-बार सीता को गोद में बैठा लेती हैं, *देइ असीस* = आशीर्वाद देती हैं, *सिखावनु देहीं* = शिक्षा देती हैं, *होएहु संतत पियहि पिआरी* = सदा अपने पति की प्रिय रहो, *चिरु अहिबात असीस हमारी* = हमारा आशीर्वाद है कि सुहाग अचल रहे, *सासु ससुर गुर*

सेवा करेहू = सास; ससुर व गुरु की सेवा करना, *पति रुख लखि आयसु अनुसरेहू* = पति की इच्छा देखकर उनकी आज्ञा का पालन करना, *अति सनेह बस सखीं सयानी* = समझदार सखियाँ अत्यंत स्नेह से, *नारि धरम सिखवहिं मृदु बानी* = कोमल वचनों से स्त्री धर्म की शिक्षा देती हैं।

विदाई की सूचना मिली, पर राम अभी पहुँचे नहीं हैं। तब तक रानियाँ सीता को बार-बार गोद में बैठाती हैं। आशीर्वाद देती हैं कि तुम सदा अपने पति को प्यारी रहो। तुम्हारे पति लंबे समय तक जियें, दीर्घजीवी हों। पति का प्यार पाने का तरीका भी समझाती हैं–

1. पति के माता-पिता व गुरु की सेवा करना।
2. पति की इच्छा के अनुसार कार्य करना।

समझदार सखियाँ भी अत्यंत मधुर वाणी में स्त्री धर्म की शिक्षा देती हैं। इन सब शिक्षाओं का मुख्य लक्ष्य है परिवार में एकता व प्रेम बना रहे। स्त्रियाँ इस दिशा में महत्त्वूपर्ण भूमिका निभा सकती हैं।

सभी पुत्रियों को समझाकर रानियाँ बार-बार गले लगाती हैं

सादर सकल कुअँरि समुझाईं। रानिन्ह बार बार उर लाईं ।।334:7।।
बहुरि बहुरि भेटहिं महतारीं। कहहिं बिरंचि रचीं कत नारीं ।।334:8।।

सादर सकल कुअँरि समुझाईं = आदर के साथ सब पुत्रियों को समझाकर, *रानिन्ह बार बार उर लाईं* = रानियों ने बार बार उन्हें हृदय से लगाया, *बहुरि बहुरि भेटहिं महतारीं* = फिर-फिर कर मातायें गले लगाकर, *कहहिं बिरंचि रचीं कत नारीं* = कहती हैं कि विधाता ने नारी जाति की रचना इस प्रकार क्यों की?

यही शिक्षायें मांडवी, उर्मिला व श्रुतकीर्ति को दी गईं। रानियाँ बार-बार सभी पुत्रियों को हृदय से लगाती हैं और कहती हैं कि विधाता ने स्त्री की रचना इस प्रकार क्यों की है। वे सेवा करें, एक घर छोड़कर दूसरे घर जायें।

तीनो भाइयों सहित राम विदा कराने राजमहल की ओर चले

तेहि अवसर भाइन्ह सहित रामु भानु कुल केतु ।
चले जनक मंदिर मुदित बिदा करावन हेतु ।।दोहा 334।।

तेहि अवसर भाइन्ह सहित = उसी समय भाइयों सहित, *रामु भानु कुल केतु* = सूर्य वंश की पताका जैसे राम, *चले जनक मंदिर मुदित* = जनक जी के राजभवन की ओर प्रसन्नता से चलते हैं, *बिदा करावन हेतु* = विदा करवाने के लिये।

उसी समय जनवासे से चारों भाइयों को विदा करवाने के लिये दशरथ जी ने भेजा। पुत्रियाँ पहले ही किसी दिन जनवासे से राजमहल आ गयीं थीं। सूर्य वंश की पताका जैसे राम, तीनो भाइयों सहित बहुत प्रसन्नता से जनवासे से राजभवन की ओर विदा करवाने चलते हैं।

नगरवासी कहते हैं राम को सदा के लिये मन में बसा लो

चारिउ भाइ सुभायँ सुहाए। नगर नारि नर देखन धाए ॥335:1॥
कोउ कह चलन चहत हहिं आजू। कीन्ह बिदेह बिदा कर साजू ॥335:2॥

चारिउ भाइ सुभायँ सुहाए = सहज ही सुंदर चारों भाइयों को, *नगर नारि नर देखन धाए* = देखने के लिये नगर के स्त्री पुरुष आ गये, *कोउ कह चलन चहत हहिं आजू* = कोई कहता है ये आज ही जाने वाले हैं, *कीन्ह बिदेह बिदा कर साजू* = राजा जनक ने विदाई की तैयारी कर ली है।

लेहु नयन भरि रूप निहारी। प्रिय पाहुने भूप सुत चारी ॥335:3॥
को जानै केहिं सुकृत सयानी। नयन अतिथि कीन्हे बिधि आनी ॥335:4॥

लेहु नयन भरि रूप निहारी = इनके मनोहर रूप को नेत्र भरकर देख लो, *प्रिय पाहुने* = प्रिय मेहमान हैं, *भूप सुत चारी* = ये चारों राज पुत्र, *को जानै केहिं सुकृत सयानी* = हे सखी! कौन जाने किस पुण्य के कारण, *नयन अतिथि कीन्हे बिधि आनी* = विधाता ने इन्हें लाकर हमारे नयनों का अतिथि बनाया है।

मरनसीलु जिमि पाव पिऊषा। सुरतरु लहै जनम कर भूखा ॥335:5॥
पाव नारकी हरिपदु जैसें। इन्ह कर दरसनु हम कहँ तैसें ॥335:6॥
निरखि राम सोभा उर धरहू। निज मन फनि मूरति मनि करहू ॥335:7॥

मरनसीलु जिमि पाव पिऊषा = मरने वाला जिस प्रकार अमृत पा जाये, *सुरतरु लहै जनम कर भूखा* = जन्म से भूखा व्यक्ति कल्प वृक्ष पा जाये, *पाव नारकी हरिपदु जैसें* = नरक में रहने योग्य व्यक्ति जैसे भगवान का परम पद प्राप्त

कर ले, *इन्ह कर दरसनु हम कहँ तैसें* = हमारे लिये इनके दर्शन वैसे ही हैं, *निरखि राम सोभा* = श्रीराम की सुंदरता को देखकर, *उर धरहू* = हृदय में बसा लो, *निज मन फनि* = अपने मन को सर्प बना लो, *मूरति मनि करहू* = इनकी मूर्ति को मणि बना लो।

सहज ही सुंदर चारों भाइयों को देखने के लिये नगर के स्त्री पुरुष आ गये। कोई कहता है ये आज ही जाने वाले हैं। राजा जनक ने विदाई की तैयारी कर ली है। इनके मनोहर रूप को नेत्र भरकर देख लो। ये चारों राजकुमार हमारे प्रिय मेहमान हैं। कोई कहता है न जाने किस पुण्य के कारण विधाता ने इन्हें लाकर हमारे नयनों का अतिथि बनाया है। राम के दर्शन होने की घटना को नगरवासी तीन उदाहरणों से एक-दूसरे को समझाते हैं। 1. जैसे मरने वाले व्यक्ति को अमृत मिल जाये, 2. जैसे जन्म से भूखा व्यक्ति कल्प वृक्ष पा जाये, 3. जैसे नरक में रहने योग्य व्यक्ति भगवान का परम पद प्राप्त कर ले, हमारे लिये इनके दर्शन वैसे ही हैं। अंत में नगरवासी कहते हैं कि इनके सुंदर स्वरूप को याद कर लो, हृदय में इनकी आकृति बसा लो, उसी का स्मरण करते रहो। पर कैसे? तो एक सुंदर उदाहरण सर्प का देते हैं। जैसे सर्प अपने फन में एक मणि धारण किये रहता है, मणि में उसका प्रेम रहता है। उसी प्रकार अपने मन को फन बनाओ, उसमें राम के रूप को मणि की तरह रखो। बार-बार उसे देखते रहो।

राजभवन पहुँचे, न्योछावर व आरती की गई

एहि बिधि सबहि नयन फलु देता। गए कुअँर सब राज निकेता ॥335:8॥

एहि बिधि सबहि नयन फलु देता = इस प्रकार सबको नेत्रों का फल देते हुए, *गए कुअँर सब राज निकेता* = सभी राजकुमार राजभवन गये।

रूप सिंधु सब बंधु लखि हरषि उठा रनिवासु ।
करहिं निछावरि आरती महा मुदित मन सासु ॥दोहा 335॥

रूप सिंधु सब बंधु लखि = सुंदरता के निधान सब भाइयों को देखकर, *हरषि उठा रनिवासु* = पूरा रनिवास हर्षित हो गया, *करहिं निछावरि आरती* = न्योछावर व आरती करती हैं, *महा मुदित मन सासु* = सासुएँ बहुत प्रसन्न मन से।

जनकपुरवासियों के नेत्रों को दर्शन का फल देते हुए चारों भाइ राजभवन पहुँचे। जब अंदर रनिवास में प्रवेश किया तब सुंदरता के निधान सब भाइयों को देखकर सब हर्षित हो गये। सासें न्योछावर करके आरती करती हैं।

राम को देख मातायें प्रेम-विवश होकर चरण छूने लगीं

देखि राम छबि अति अनुरागीं। प्रेमबिबस पुनि पुनि पद लागीं ॥336:1॥
रही न लाज प्रीति उर छाई। सहज सनेहु बरनि किमि जाई ॥336:2॥

देखि राम छबि = राम की सुंदरता देखकर, *अति अनुरागीं* = प्रेम मग्न हो गयीं, *प्रेमबिबस पुनि पुनि पद लागीं* = प्रेम के वश में होकर बार-बार चरण छूती हैं, *रही न लाज* = लज्जा नहीं रही, *प्रीति उर छाई* = क्योंकि हृदय में प्रेम छा गया, *सहज सनेहु बरनि किमि जाई* = उनके स्वाभाविक स्नेह का वर्णन किस प्रकार किया जाये।

राम की सुंदर छवि देखकर माताओं के अंदर अनुराग आया, प्रेम के विवश होकर वे बार-बार राम के चरणों में सिर रखने लगीं। जब प्रेम के साथ ऐश्वर्य भाव आ जाता है तब व्यक्ति प्रणाम करता है। तुलसीदास जी कहते हैं कि मन में इतना अधिक प्रेम छा गया कि माताओं को इस बात का भान ही नहीं रहा कि वे माँ हैं, पुत्र के समान राम के पैर न छुएँ। माँ पुत्र के पैर छुए, यह लज्जा की बात है। परंतु इस दिव्य प्रेम में रानियों के स्वाभाविक स्नेह का वर्णन नहीं किया जा सकता है।

उबटन लगाकर नहलवाया, फिर प्रेम से भोजन करवाया

भाइन्ह सहित उबटि अन्हवाए। छरस असन अति हेतु जेवाँए ॥336:3॥

भाइन्ह सहित = भाइयों सहित राम को, *उबटि अन्हवाए* = उबटन लगाकर स्नान करवाया, *छरस असन अति हेतु जेवाँए* = बहुत प्रेम से छः रसों का भोजन करवाया।

दोपहर का समय है, परंपरा के अनुसार भोजन के पहले स्नान करते हैं। चारों भाइयों को उबटन लगाकर स्नान करवाया गया। छः प्रकार के स्वाद के भोजन को बहुत प्रेम से माताओं ने सभी भाइयों को करवाया।

राम ने कहा, हमें विदा होने के लिये भेजा गया है, आज्ञा दें

बोले राम सुअवसरु जानी। सील सनेह सकुचमय बानी ॥336:4॥
राउ अवधपुर चहत सिधाए। बिदा होन हम इहाँ पठाए ॥336:5॥
मातु मुदित मन आयसु देहू। बालक जानि करब नित नेहू ॥336:6॥

बोले राम सुअवसरु जानी = उचित अवसर समझकर राम कहते हैं, *सील सनेह सकुचमय बानी* = शीलता से; स्नेह से; संकोच से, *राउ अवधपुर चहत सिधाए* = पिता जी अवधपुर जाना चाहते हैं, *बिदा होन हम इहाँ पठाए* = उन्होंने हमें विदा होने के लिये यहाँ भेजा है, *मातु मुदित मन आयसु देहू* = हे माँ प्रसन्न मन से आज्ञा दीजिये, *बालक जानि करब नित नेहू* = हमे अपना बालक समझकर सदैव स्नेह बनाए रखियेगा।

ठीक अवसर समझकर राम शील, स्नेह व संकोच के साथ कहते हैं "पिता जी अवधपुर जाना चाहते हैं, हमें विदा होने के लिये आपके पास भेजा है, हे माँ, प्रसन्नता से हमें आज्ञा दें। अपना बालक समझकर हम पर सैदव स्नेह बनाये रखियेगा।" राम से बातचीत करने का तरीका सीखना चाहिये। उन्होंने यह नहीं कहा कि हम सीता को विदा कराने आये हैं, यह भी नहीं कहा कि हम स्वयं आये हैं, कहते हैं हमें विदा होने के लिये भेजा गया है। शब्दों के चयन से बात में कितनी मधुरता, कोमलता व अपनापन आ जाता है– विदा करवाने आये हैं और विदा होने के लिये आये हैं, इनके फर्क को समझना चाहिये।

कन्याओं को हृदय से लगाया फिर पतियों को सौंप दिया

सुनत बचन बिलखेउ रनिवासू। बोलि न सकहिं प्रेमबस सासू ॥336:7॥
हृदयँ लगाइ कुअँरि सब लीन्ही। पतिन्ह सौंपि बिनती अति कीन्ही ॥336:8॥

सुनत बचन बिलखेउ रनिवासू = इन वचनों को सुनते ही रनिवास व्याकुल हो गया, *बोलि न सकहिं प्रेमबस सासू* = प्रेम के कारण सासुयें बोल नहीं पाती हैं, *हृदयँ लगाइ कुअँरि सब लीन्ही* = उन्होंने सब पुत्रियों को हृदय से लगा लिया, *पतिन्ह सौंपि* = फिर उनके पतियों को सौंपकर, *बिनती अति कीन्ही* = बहुत विनती की।

राम की बातें सुनकर पूरा रनिवास प्रेम में व्याकुल हो गया। प्रेम के कारण सासुयें बोल नहीं पातीं। उन्होंने सब पुत्रियों को हृदय से लगा लिया। फिर सीता राम को, मांडवी भरत को, उर्मिला लक्ष्मण को व श्रुतकीर्ति शत्रुघ्न को सौंप दी। इसके बाद विनती करती हैं।

सुनयना जी, राम से सीता को अपना समझने की विनती करती हैं

करि बिनय सिय रामहि समरपी जोरि कर पुनि पुनि कहै ।
बलि जाउँ तात सुजान तुम्ह कहुँ बिदित गति सब की अहै ॥
परिवार पुरजन मोहि राजहि प्रानप्रिय सिय जानिबी ।
तुलसीस सीलु सनेहु लखि निज किंकरी करि मानिबी ॥छंद॥

करि बिनय = विनती करके, *सिय रामहि समरपी* = सीता राम को सौंपकर, *जोरि कर पुनि पुनि कहै* = हाथ जोड़कर बार-बार कहती हैं, *बलि जाउँ तात* = हे तात! तुम्हारी बलिहारी जाती हूँ, *सुजान* = तुम तो सब जानने वाले हो, *तुम्ह कहुँ बिदित गति सब की अहै* = तुम्हें तो सबके मन की बातें पता हैं, *परिवार पुरजन मोहि राजहि* = परिवार को; नगरवासियों को; मुझे व राजा को, *प्रानप्रिय सिय जानिबी* = सीता जी प्राणों के समान प्रिय हैं, *तुलसीस* = हे तुलसीदास के स्वामी! *सीलु सनेहु लखि* = इसके शील व स्नेह को देखकर, *निज किंकरी करि मानिबी* = इसे अपना ही मानियेगा।

सुनयना जी सीता राम को सौंपकर हाथ जोड़कर बहुत धैर्य धारण करके गंभीरता से कहती हैं, हे राम, हम तुम्हारी बलिहारी जाती हैं, तुम सुजान हो, सब समझने वाले हो। हमारे हृदय की गति जानते हो, हमें कैसा लग रहा है तुम्हें पता है। परिवार के लोगों को, जनकपुरवासियों को, राजा जनक को व हमें, पुत्री सीता प्राणों के समान ही प्रिय है। हे तुलसीदास के इष्ट राम! सीता के शील व सद्‌गुणों को देखकर इसे सदैव अपना ही मानियेगा।

सुनयना जी, राम की वंदना करके चरणों को पकड़ लेती हैं

तुम्ह परिपूरन काम जान सिरोमनि भावप्रिय ।
जन गुन गाहक राम दोष दलन करुनायतन ॥सोरठा 336॥

तुम्ह परिपूरन काम = तुम्हें कोई कामना नहीं है, *जान सिरोमनि* = तुम ज्ञानियों के शिरोमणि हो, *भावप्रिय* = तुम्हें तो भाव ही प्रिय हैं, *जन* = भक्तों के, *गुन गाहक राम* = गुणों को देखने वाले, *दोष दलन* = दोषों को नष्ट करने वाले हो, *करुनायतन* = तुम करुणा के घर हो।

अस कहि रही चरन गहि रानी। प्रेम पंक जनु गिरा समानी ॥337:1॥

अस कहि = इस प्रकार कहकर, *रही चरन गहि रानी* = रानी चरणों को पकड़कर चुप हो गयीं, *प्रेम पंक जनु गिरा समानी* = मानो उनकी वाणी प्रेम के दलदल में समा गयी हो।

रानी सुनयना प्रभु राम की महिमा कहते हुए वंदना करती हैं कि हे राम! आप पूर्णकाम हो। आपको कोई कामना है ही नहीं। हम दे ही क्या सकते हैं। आप ज्ञानियों में शिरोमणि हैं। आप सब जानने वाले हैं। फिर भी आप भक्तों के गुणों को ही देखते हैं, दोषों को नष्ट करने वाले हैं। आप तो करुणा के घर हो। इतना कहते-कहते राम के चरणों को पकड़कर रानी चुप हो गयीं। मानो उनकी वाणी राम के प्रेम के दलदल में फँस गयी, अब बोल नहीं पातीं, करुणा छा गयी।

सासों को समझाकर, प्रणाम कर, राम भाइयों सहित चल दिये

सुनि सनेहसानी बर बानी। बहुबिधि राम सासु सनमानी ॥337:2॥
राम बिदा मागत कर जोरी। कीन्ह प्रनामु बहोरि बहोरी ॥337:3॥
पाइ असीस बहुरि सिरु नाई। भाइन्ह सहित चले रघुराई ॥337:4॥

सुनि सनेहसानी बर बानी = स्नेह से सनी हुयी श्रेष्ठ वाणी सुनकर, *बहुबिधि राम सासु सनमानी* = राम ने सास को बहुत प्रकार से समझाया, *राम बिदा मागत कर जोरी* = हाथ जोड़कर राम विदा माँगते हैं, *कीन्ह प्रनामु बहोरि बहोरी* = बार-बार प्रणाम करते हैं, *पाइ असीस* = आशीर्वाद प्राप्त करके, *बहुरि सिरु नाई* = फिर सिर झुकाकर प्रणाम करके, *भाइन्ह सहित चले रघुराई* = भाइयों सहित राम जी चल देते हैं।

माता सुनयना के स्नेह से भरे हुए वचन सुनकर राम ने उन्हें बहुत प्रकार से समझाया। फिर हाथ जोड़कर जाने की आज्ञा माँगते हुए बार-बार राम प्रणाम

करते हैं। माताओं ने आशीर्वाद दिया, उसी को विदाई समझकर पुनः सिर झुकाकर प्रणाम करके तीनो भाइयों सहित राम रनिवास से बाहर आते हैं।

रानियों ने राम के रूप को मन में धारण कर लिया

मंजु मधुर मूरति उर आनी। भईं सनेह सिथिल सब रानी ॥337:5॥

मंजु मधुर मूरति = प्रभु राम की सुंदर मधुर मूर्ति को, *उर आनी* = हृदय में बैठाकर, *भईं सनेह सिथिल सब रानी* = सब रानियाँ स्नेह से शिथिल हो गयीं।

राम विदा होकर जा रहे हैं, फिर जल्दी मिलेंगे नहीं इसलिये माताओं ने उनके सुंदर स्वरूप को अपने मन में बसा लिया, ताकि सदैव उनका स्मरण करते रहें। सब रानियाँ प्रेम में गद्‌गद् हो गयीं, शरीर में शिथिलता आ गयी।

कन्याओं को बुलवाकर भावुक होकर विदाई की

पुनि धीरजु धरि कुअँरि हँकारीं। बार बार भेटहिं महतारीं ॥337:6॥
पहुँचावहिं फिरि मिलहिं बहोरी। बढ़ी परस्पर प्रीति न थोरी ॥337:7॥
पुनि पुनि मिलत सखिन्ह बिलगाई। बाल बच्छ जिमि धेनु लवाई ॥337:8॥

पुनि धीरजु धरि = फिर धैर्य धारण करके, *कुअँरि हँकारीं* = राजकुमारियों को बुलवाकर, *बार बार भेटहिं महतारीं* = मातायें बार-बार गले लगाकर मिलती हैं, *पहुँचावहिं* = पुत्रियों को पहुँचाती हैं, *फिरि मिलहिं बहोरी* = फिर लौटकर मिलती हैं, *बढ़ी परस्पर प्रीति न थोरी* = आपस में बहुत अधिक प्रेम है, *पुनि पुनि मिलत* = बार-बार मिलती हुई माताओं को, *सखिन्ह बिलगाई* = सखियों ने अलग किया, *बाल बच्छ जिमि धेनु लवाई* = जैसे तुरंत की ब्यायी हुई बछिया को कोई उसकी माता गाय से अलग कर दे।

रानियों ने चारों भाइयों की विदाई करके धैर्य धारण किया, फिर चारों राजकुमारियों को बुलवाया। बार-बार गले लगाकर उनसे भावुक होकर मिलती हैं। पुत्रियों को थोड़ी दूर तक पहुँचाती हैं, फिर लौटकर मिलती हैं। आपस में बहुत अधिक प्रेम है। बार-बार मिलती हुई माताओं को सखियाँ जब पुत्रियों

से अलग करती हैं तो ऐसा लगा मानो तुरंत की ब्यायी हुई बछिया को उसकी गाय से अलग किया जा रहा हो।

रनिवास सहित जनकपुर करुणामय हो गया

प्रेमबिबस नर नारि सब सखिन्ह सहित रनिवासु ।
मानहुँ कीन्ह बिदेहपुर करुनाँ बिरहँ निवासु ॥दोहा 337॥

प्रेमबिबस नर नारि सब = सारे स्त्री व पुरुष प्रेम के वश में हैं, *सखिन्ह सहित रनिवासु* = सखियों सहित पूरा रनिवास भी प्रेम के वश में है, *मानहुँ कीन्ह बिदेहपुर* = मानो विदेह नगर को, *करुनाँ बिरहँ निवासु* = करुणा व वियोग ने अपना घर बना लिया हो।

तुलसीदास जी कहते हैं कि विदाई के समय रानियों व सखियों सहित पूरा रनिवास व जनकपुर के सभी स्त्री-पुरुष इस प्रकार प्रेम में विवश होकर वियोग में व्याकुल हैं मानो विदेहपुर को करुणा व वियोग ने अपना घर बना लिया हो।

पशु-पक्षी व्याकुल होकर कहते हैं 'वैदेही कहाँ हैं'

सुक सारिका जानकी ज्याए। कनक पिंजरन्हि राखि पढ़ाए ॥338:1॥
ब्याकुल कहहिं कहाँ बैदेही। सुनि धीरजु परिहरइ न केही ॥338:2॥
भए बिकल खग मृग एहि भाँती। मनुज दसा कैसें कहि जाती ॥338:3॥

सुक सारिका = तोता व मैना, *जानकी ज्याए* = जिन्हें सीता जी ने पाला, *कनक पिंजरन्हि राखि पढ़ाए* = स्वर्ण के पिंजरों में रखकर जिन्हें पढ़ाया, *ब्याकुल कहहिं कहाँ बैदेही* = व्याकुल होकर कहते हैं वैदेही कहाँ है? *सुनि* = ये वचन सुनकर, *धीरजु परिहरइ न केही* = धैर्य किसे न त्याग देगा यानि सबका धैर्य चला गया, *भए बिकल खग मृग एहि भाँती* = पशु-पक्षी भी इस प्रकार व्याकुल हो गये, *मनुज दसा कैसें कहि जाती* = मनुष्य की दशा का कैसे वर्णन किया जाये।

मातायें व सखियाँ जब सीता जी व उनकी बहनों को लेकर राजमहल के द्वार तक पहुँचीं तब अंदर सन्नाटा छा गया। जिन तोता व मैना को सोने के पिंजरे में रखकर सीता जी ने पाला था, बोलना सिखाया था वे सब अकेले रह गये।

सीता जी जब कहीं चली जाती थीं तो ये बुलाते थे, सीता जी पहुँच जाती थीं, अब बुलाते हैं तो पहुँचती नहीं हैं। वे वियोग में दु:खी होकर कहते हैं वैदेही कहाँ हैं। जब पशु-पक्षी इस प्रकार व्याकुल हैं तब मनुष्य की दशा का वर्णन कैसे किया जा सकता है।

ज्ञानी पिता जनक भी सीता को हृदय से लगाकर रो रहे हैं

बंधु समेत जनकु तब आए। प्रेम उमगि लोचन जल छाए ॥338:4॥
सीय बिलोकि धीरता भागी। रहे कहावत परम बिरागी ॥338:5॥
लीन्हि रायँ उर लाइ जानकी। मिटी महामरजाद ग्यान की ॥338:6॥
समुझावत सब सचिव सयाने। कीन्ह बिचारु न अवसर जाने ॥338:7॥

बंधु समेत जनकु तब आए = तब भाई सहित जनक जी वहाँ आते हैं, *प्रेम उमगि* = प्रेम उमड़ पड़ा, *लोचन जल छाए* = आँखों में जल आ गया, *सीय बिलोकि* = सीता जी को देखकर, *धीरता भागी* = धैर्य भाग गया, *रहे कहावत परम बिरागी* = कहाँ वे परम वैराग्यवान् कहलाते थे, *लीन्हि रायँ उर लाइ जानकी* = राजा ने जानकी को हृदय से लगा लिया, *मिटी महामरजाद ग्यान की* = प्रेम के प्रभाव से ज्ञान की महान् मर्यादा मिट गयी, *समुझावत सब सचिव सयाने* = बुद्धिमान मंत्री उन्हें समझाते हैं, *कीन्ह बिचारु न अवसर जाने* = तब राजा ने सोचा कि यह विषाद का समय नहीं है।

जनक जी अपने भाई सहित राजमहल के द्वार पर पहुँचे। पुत्री की विदाई देखकर धैर्य, ज्ञान, वैराग्य सब चला गया और दु:खी होकर रोने लगे। पुत्री सीता को पिता जनक ने अपने हृदय से लगा लिया। ज्ञानी की क्या मर्यादा है? उसे माया-मोह नहीं होगा इसलिये दु:खी नहीं होगा। परंतु पुत्री की विदाई में ज्ञानी को भी बहुत दु:ख लगता है। ज्ञान की मर्यादा नहीं रह जाती। जनक जी की ऐसी दशा देखकर बुद्धिमान मंत्रियों ने अपना कर्त्तव्य पालन करते हुए राजा को समझाया कि आप शोक न करें, विदाई का समय हो रहा है, विदा होने दें।

गणेशजी का स्मरण कर जनकजी ने पुत्रियों को पालकियों में बैठाया

बारहिं बार सुता उर लाईं। सजि सुंदर पालकीं मगाईं ॥338:8॥

बारहिं बार सुता उर लाईं = बार-बार पुत्रियों को हृदय से लगाते हैं, *सजि सुंदर पालकीं मगाईं* = सुंदर सजी हुई पालकियाँ मँगवाईं।

प्रेमबिबस परिवारु सबु जानि सुलगन नरेस ।
कुअँरि चढ़ाईं पालकिन्ह सुमिरे सिद्धि गनेस ॥दोहा 338॥

प्रेमबिबस परिवारु सबु = सारा परिवार प्रेम से विवश है, *जानि सुलगन नरेस* = राजा ने सुंदर मुहूर्त जानकर, *कुअँरि चढ़ाईं पालकिन्ह* = कन्याओं को पालकियों में बैठाया, *सुमिरे सिद्धि गनेस* = सिद्धि सहित गणेश जी का स्मरण करके।

बहुबिधि भूप सुता समुझाईं। नारिधरमु कुलरीति सिखाईं ॥339:1॥
दासीं दास दिए बहुतेरे। सुचि सेवक जे प्रिय सिय केरे ॥339:2॥

बहुबिधि भूप सुता समुझाईं = राजा ने पुत्रियों को बहुत प्रकार से समझाया, *नारिधरमु कुलरीति सिखाईं* = स्त्री का धर्म व कुल की रीति समझाई, *दासीं दास दिए बहुतेरे* = बहुत से सेवक व सेविकायें दीं, *सुचि सेवक जे प्रिय सिय केरे* = जो सीता जी के प्रिय व विश्वासपात्र थे।

जनक जी बार-बार पुत्रियों को हृदय से लगाते हुए द्वार के बाहर आ गये। सुंदर सजी हुई पालकियाँ तैयार थीं। उन्हें पास में मँगवाया। राजा जनक ने देखा कि विदाई की लग्न आ गयी है। तब गणेश जी का स्मरण करके कन्याओं को पालकियों में बैठाया। कहारों ने पालकियाँ ऊपर उठा लीं, अभी चलीं नहीं, राजकुमारियाँ जनक जी के बराबर आ गयीं। तब जनक जी ने सभी पुत्रियों को कुल की रीति व स्त्री धर्म की शिक्षा दी। सीता जी के जो प्रिय व विश्वास पात्र सेवक, सेविकायें थीं उन्हें साथ में भेजा।

पालकियों के साथ राजा, मंत्री, विप्र जनवासे की ओर चले

सीय चलत ब्याकुल पुरबासी। होहिं सगुन सुभ मंगल रासी ॥339:3॥
भूसुर सचिव समेत समाजा। संग चले पहुँचावन राजा ॥339:4॥

सीय चलत = सीता जी के विदा होने से, *ब्याकुल पुरबासी* = नगर के लोग व्याकुल हैं, *होहिं सगुन सुभ मंगल रासी* = मंगल सूचक शुभ सगुन हो रहे

हैं, *भूसुर सचिव समेत समाजा* = विप्रों के समाज व मंत्रियों सहित, *संग चले पहुँचावन राजा* = राजा बधुओं को पहुँचाने साथ में जाते हैं।

नगर वासी विदाई देखने आये थे। जब पालकियाँ चल दीं तो वे सब व्याकुल होने लगे। राम भाइयों सहित आगे हैं। उनके पीछे पालकियाँ हैं। साथ में राजा, राज परिवार के लोग, गणमान्य लोग, विप्र व मंत्री महाराज दशरथ के पास पहुँचाने के लिये चलते हैं। जाते समय मंगल सूचक शुभ सगुन हो रहे हैं।

बारात तैयार, विप्रों को दान देकर दशरथ जी ने आशीर्वाद लिया

समय बिलोकि बाजने बाजे । रथ गज बाजि बरातिन्ह साजे ॥339:5॥
दसरथ बिप्र बोलि सब लीन्हे। दान मान परिपूरन कीन्हे ॥339:6॥
चरन सरोज धूरि धरि सीसा। मुदित महीपति पाइ असीसा ॥339:7॥

समय बिलोकि बाजने बाजे = अवसर देखकर बाजे बजने लगे, *रथ गज बाजि बरातिन्ह साजे* = बरातियों ने रथ; हाथी व घोड़े तैयार कर लिये, *दसरथ बिप्र बोलि सब लीन्हे* = दशरथ जी ने सब विप्रों को बुलवाया, *दान मान परिपूरन कीन्हे* = उन्हें दान व सम्मान से परिपूर्ण कर दिया, *चरन सरोज धूरि धरि सीसा* = विप्रों के चरण कमल की धूलि राजा ने सिर पर लगायी, *मुदित महीपति पाइ असीसा* = आशीर्वाद पाकर राजा मुदित हैं।

विदाई का समय हो गया है, यह देखकर जनवासे में बाजे बजने लगे। बारातियों ने रथ, हाथी व घोड़े तैयार कर लिये। चारों राजकुमार जब वधुओं सहित जनवासे पहुँचे, दशरथ जी ने विप्रों को बुलवाया। विप्रों को दान दिया, सम्मान किया, उनके चरणों की धूलि सिर पर रखी। जब विप्रों ने आशीर्वाद दिया तब दशरथ जी बहुत प्रसन्न हो गये।

गणेश जी की प्रार्थना करके बारात चल दी

सुमिरि गजाननु कीन्ह पयाना। मंगलमूल सगुन भए नाना ॥339:8॥

सुमिरि गजाननु = गणेश जी का स्मरण करके, *कीन्ह पयाना* = प्रस्थान किया, *मंगलमूल सगुन भए नाना* = मंगलों के मूल अनेक सगुन हुए।

सुर प्रसून बरषहिं हरषि करहिं अपछरा गान ।
चले अवधपति अवधपुर मुदित बजाइ निसान ॥दोहा 339॥

सुर प्रसून बरषहिं हरषि = देवता प्रसन्न होकर फूलों की वर्षा करते हैं, *करहिं अपछरा गान* = अप्सरायें गाना गाती हैं, *चले अवधपति अवधपुर* = अयोध्या के राजा अयोध्या चल दिये, *मुदित बजाइ निसान* = प्रसन्नता से बाजे बज रहे हैं।

गणेश जी का स्मरण करके बारात अयोध्या के लिय प्रस्थान कर दी। मंगल की सूचना देने वाले अनेक सगुन हो रहे हैं। देवता प्रसन्न होकर फूलों की वर्षा करते हैं। अप्सरायें गाना गाती हैं। बारात के साथ में आये हुए बाजे वालों ने बाजे बजाने शुरू कर दिये।

बंदी, मागध व भाट को दशरथ जी ने दान देकर विदा किया

नृप करि बिनय महाजन फेरे। सादर सकल मागने टेरे ॥340:1॥
भूषन बसन बाजि गज दीन्हे। प्रेम पोषि ठाढ़े सब कीन्हे ॥340:2॥
बार बार बिरिदावलि भाषी। फिरे सकल रामहि उर राखी ॥340:3॥

नृप करि बिनय = राजा दशरथ ने विनती करके, *महाजन फेरे* = नगर के महाजन लोगों को वापस भेज दिया, *सादर सकल मागने टेरे* = फिर भिक्षु व बंदी जन को बुलवाया, *भूषन बसन बाजि गज दीन्हे* = उनको गहने; कपड़े; घोड़े; हाथी दिया, *प्रेम पोषि ठाढ़े सब कीन्हे* = उन सबको रोककर प्रेम प्रदर्शित किया, *बार बार बिरिदावलि भाषी* = वे सब बार-बार कुल की कीर्ति का बखान करके, *फिरे सकल रामहि उर राखी* = प्रभु राम को हृदय में धारण करके लौट चले।

जब बारात चलने लगी तो राजा जनक व महाजन लोग भी साथ में चलने लगे। महाराज दशरथ ने सम्मानीय लोगों को विनती करके वापस भेज दिया। भिक्षु व बंदी जनों को बुलाकर उनको गहने, कपड़े, घोड़े, हाथी दान में दिया। उन सबको रोककर अपना आभार व प्रेम भी प्रगट किया। वे सब बार-बार कुल की कीर्ति का बखान करके, प्रभु राम को हृदय में धारण करके लौट चले।

समधियों का प्रेम में भावुक हो अश्रुपूरित मिलन व विदाई

बहुरि बहुरि कोसलपति कहहीं। जनकु प्रेमबस फिरै न चहहीं ॥340:4॥
पुनि कह भूपति बचन सुहाए। फिरिअ महीस दूरि बड़ि आए ॥340:5॥
राउ बहोरि उतरि भए ठाढ़े। प्रेम प्रबाह बिलोचन बाढ़े ॥340:6॥

बहुरि बहुरि कोसलपति कहहीं = अब दशरथ जी बार-बार जनक जी से कहते हैं, *जनकु प्रेमबस फिरै न चहहीं* = पर जनक जी प्रेमवश लौटना नहीं चाहते हैं, *पुनि कह भूपति बचन सुहाए* = दशरथ जी ने फिर सुंदर वचन कहे, *फिरिअ महीस दूरि बड़ि आए* = हे राजन्! अब वापस लौटिये नगर से बहुत दूर आ गये हैं, *राउ बहोरि उतरि भए ठाढ़े* = फिर दशरथ जी रथ से उतरकर खड़े हो गये, *प्रेम प्रबाह बिलोचन बाढ़े* = प्रेम की अधिकता से नेत्रों में अश्रु आ गये।

तब बिदेह बोले कर जोरी। बचन सनेह सुधाँ जनु बोरी ॥340:7॥
करौं कवन बिधि बिनय बनाई। महाराज मोहि दीन्हि बड़ाई ॥340:8॥

तब बिदेह बोले कर जोरी = तब राजा जनक हाथ जोड़कर कहते हैं, *बचन सनेह सुधाँ जनु बोरी* = स्नेह के मधुर वचन अमृत में डुबोकर बोले, *करौं कवन बिधि बिनय बनाई* = हम आपकी विनती किस प्रकार करें, *महाराज मोहि दीन्हि बड़ाई* = हे महाराज! आपने मुझे बहुत बड़ाई प्रदान की है।

कोसलपति समधी सजन सनमाने सब भाँति ।
मिलनि परसपर बिनय अति प्रीति न हृदयँ समाति ॥दोहा 340॥

कोसलपति = दशरथ जी ने, *समधी सजन* = अपने स्वजन समधी का, *सनमाने सब भाँति* = सब प्रकार से सम्मान किया, *मिलनि परसपर बिनय अति* = उनके आपस के मिलने में बहुत विनम्रता थी, *प्रीति न हृदयँ समाति* = प्रेम इतना था कि हृदय में समा नहीं रहा था।

जनक जी से दशरथ जी बार-बार कहते हैं कि अब आप भी वापस जायें। परंतु प्रेम के कारण वे जाना नहीं चाहते हैं। साथ में ही चलते रहते हैं। दशरथ जी फिर सुंदर वचन कहते हैं–हे राजन्! अब वापस लौटिये नगर से बहुत दूर आ गये हैं। जब वे वापस नहीं जाते तब दशरथ जी ने अपना रथ रोक दिया। रथ से नीचे उतरकर खड़े हो गये। प्रेम की अधिकता से नेत्रों में अश्रु आ गये।

राजा जनक बहुत प्रेम से हाथ जोड़कर, विनम्रता, प्रियता व कोमलता से कहते हैं– हम आपकी विनती किस प्रकार से करें? आपकी प्रशंसा कैसे करें? आप महान् हैं। आपके साथ संबंध हो जाने से हम बड़े हो गये हैं। यदि हम कुछ कहेंगे तो बनावटी बात लगेगी। महाराज दशरथ ने तब जनक जी व उनके साथ के लोगों का बहुत प्रकार से सम्मान किया। आपस में दोनों समधियों का मिलना, एक-दूसरे के प्रति विनम्रता का होना व आपसी प्रेम इतना अधिक है कि हृदय में समा नहीं रहा था।

मुनियों को प्रणाम करके जनक जी दामादों से मिले

मुनि मंडलिहि जनक सिरु नावा। आसिरबादु सबहि सन पावा ॥341:1॥
सादर पुनि भेंटे जामाता। रूप सील गुन निधि सब भ्राता ॥341:2॥

मुनि मंडलिहि जनक सिरु नावा = जनक जी ने मुनियों के समूह को प्रणाम किया, *आसिरबादु सबहि सन पावा* = सबसे आशीर्वाद प्राप्त किया, *सादर पुनि भेंटे जामाता* = फिर आदर पूर्वक सब दामादों से मिले, *रूप सील गुन निधि सब भ्राता* = सभी भाई सुंदरता; शीलता व गुणों की खान हैं।

बारात में चल रहे सभी विप्रों, गुरु व मुनियों को जनक जी ने सिर झुकाकर प्रणाम किया व उनसे आशीर्वाद प्राप्त किया। इसके बाद जनक जी ने आदर पूर्वक सभी दामादों से भेंट की, मायने उन्हें हृदय से लगाया। तुलसीदास जी कहते हैं कि जनक जी के चारों दामाद सुंदरता, शीलता व गुणों की खान हैं।

जनक जी राम की स्तुति करते हैं

राम जहाँ भी जाते हैं लोग उनकी स्तुति गाते हैं। भगवान के गुणों का मन में स्मरण करते हुए उसे मुख से बोलने को स्तुति कहते हैं। जनक जी, सुंदर कमल के समान हाथों को जोड़कर, प्रेम से उत्पन्न वचनों से राम जी की स्तुति गाते हैं।

हे राम, आप शिव जी के मानस के हंस हो

जोरि पंकरुह पानि सुहाए। बोले बचन प्रेम जनु जाए ॥341:3॥
राम करौं केहि भाँति प्रसंसा। मुनि महेस मन मानस हंसा ॥341:4॥
करहिं जोग जोगी जेहि लागी। कोहु मोहु ममता मदु त्यागी ॥341:5॥

जोरि पंकरुह पानि सुहाए = सुंदर कमल के समान हाथों को जोड़कर, *बोले बचन प्रेम जनु जाए* = प्रेम से उत्पन्न वचन बोले, *राम करौं केहि भाँति प्रसंसा* = हे राम मैं किस प्रकार से आपकी प्रशंसा करूँ, *मुनि महेस मन मानस हंसा* = आप तो मुनियों व शिव जी के मन रूपी मानसरोवर के हंस हो, *करहिं जोग जोगी जेहि लागी* = योगी लोग जिनको पाने के लिये योग साधना करते हैं, *कोहु मोहु ममता मदु त्यागी* = क्रोध; मोह; ममता व मद का त्याग करके।

हे राम! मैं किस प्रकार से आपकी स्तुति कहूँ, आप बहुत महान् हैं। आप तो शिव जी के मन में वैसे ही वास करते हो जैसे मानसरोवर में हंस रहते हैं। भगवान तो सर्वत्र हैं तो वे शिव जी के हृदय में ही क्यों रहते हैं! हमारे हृदय में नहीं रहते हैं क्या? रहते हैं। हमारे अंदर परमात्मा भी हैं और विकार भी हैं। जैसे अज्ञान, ज्ञान को ढक देता है वैसे हमारे अंदर के क्रोध, मोह, ममता व मद भगवान को ढक देते हैं, उनका प्रभाव दिखाई नहीं देता है। शिव जी का हृदय विकार रहित है। इसलिये वे वहाँ दिखते हैं। योगी लोग आपका दर्शन पाने के लिये क्रोध, मोह, ममता व मद का त्याग करके योग साधना करते हैं।

हे राम, आप सर्वव्यापी, अविनाशी, निर्गुण व सदैव एक समान हो

ब्यापकु ब्रह्मु अलखु अबिनासी। चिदानंदु निरगुन गुनरासी ॥341:6॥
मन समेत जेहि जान न बानी। तरकि न सकहिं सकल अनुमानी ॥341:7॥
महिमा निगमु नेति कहि कहई। जो तिहुँ काल एकरस रहई ॥341:8॥

ब्यापकु ब्रह्मु अलखु अबिनासी = सर्वव्यापक; ब्रह्म; अव्यक्त व अविनाशी है, *चिदानंदु निरगुन गुनरासी* = चिदानंद; निर्गुण व गुणों की राशि हैं, *मन समेत जेहि जान न बानी* = जिसको मन व वाणी नहीं जान सकते, *तरकि न सकहिं सकल अनुमानी* = सभी तर्क करके भी जिनका अनुमान नहीं लगाया जा सकता है, *महिमा निगमु नेति कहि कहई* = जिनकी महिमा को वेद 'नेति' कहकर वर्णन करते हैं, *जो तिहुँ काल एकरस रहई* = जो तीनों कालों में एक समान रहता है।

राम की ब्रह्म रूप में स्तुति करते हुए जनक जी ब्रह्म के लक्षण बताते हैं। आप सर्वव्यापक हो। आँखों से दिखाई नहीं देते हो। आपका कभी नाश नहीं होता।

आप चेतन हो। आपके अंदर सत्त्व, तम व रज ये तीनो गुण नहीं हैं परंतु सारे सद्गुण आपके अंदर वास करते हैं। मन व वाणी आपको जान नहीं सकती है। तर्क के द्वारा भी नहीं जाना जा सकता है। वेदों ने आपकी महिमा गाने के बाद कह दिया इतनी ही महिमा नहीं है। भूत-वर्तमान-भविष्य इन तीनों कालों में आप एक समान हो।

मुझ पर अनुकूल होकर, आपने मुझे दर्शन दिया है

नयन बिषय मो कहुँ भयउ सो समस्त सुख मूल ।
सबइ लाभु जग जीव कहँ भएँ ईसु अनुकूल ॥दोहा 341॥

नयन बिषय मो कहुँ भयउ = उनका दर्शन मैंने इन नेत्रों से किया, *सो समस्त सुख मूल* = जो सभी सुखों के मूल स्रोत हैं, *सबइ लाभु जग जीव कहँ* = जीव को जगत् में सब लाभ ही लाभ हैं, *भएँ ईसु अनुकूल* = ईश्वर अनुकूल होने पर।

आप तो समस्त सुखों के मूल स्रोत हैं। आप सगुण साकार रूप धारण करके मेरे नेत्रों के सामने खड़े हैं। संसार में जीव को सब प्रकार के लाभ प्राप्त हैं, कैसे? यदि ईश्वर अनुकूल है। इस पंक्ति को याद कर लेना चाहिये। पूजा-पाठ, नाम जप, साधनायें इसलिये करें कि भगवान अनुकूल हो जायें। हमारे पास सब तरह की संपत्ति हो परंतु ईश्वर अनुकूल नहीं है तो जीवन का सुख व आनंद नहीं मिलेगा।

मुझे सब प्रकार से बड़ाई दी व भक्त समझकर अपना लिया

सबहि भाँति मोहि दीन्हि बड़ाई। निज जन जानि लीन्ह अपनाई ॥342:1॥

सबहि भाँति मोहि दीन्हि बड़ाई = आपने मुझे सब प्रकार से बड़ाई दी, *निज जन जानि लीन्ह अपनाई* = अपना भक्त समझकर अपना लिया।

हम जितना ही भगवान को भूले रहेंगे उतने ही छोटे बने रहेंगे। जैसे ही भगवान की भक्ति करते हैं, उनका स्मरण करते हैं, उनकी कृपा प्राप्त होती है और बड़ाई मिलती जाती है। जनक जी कहते हैं आपने मुझे अपना भक्त समझकर अपना लिया तो हम सब प्रकार से बड़े हो गये। कैसे? इस प्रकार समझें–

1. राम के आने से ज्ञानियों को लगा कि जनक से बड़ा ज्ञानी कौन होगा!
2. राम के धनुष तोड़ने से जनक जी के सामने सारे राजा निस्तेज हो गये।
3. राम के आने से सम्राट् दशरथ जनक जी जैसे छोटे राजा के यहाँ पहुँचे।
4. राम के दर्शन से जनक जी ब्रह्मज्ञानी के साथ भक्त भी बन गये।

मेरे भाग्य व आपकी गुणगाथा का वर्णन नहीं हो सकता

होहिं सहस दस सारद सेषा। करहिं कलप कोटिक भरि लेखा ॥342:2॥
मोर भाग्य राउर गुन गाथा। कहि न सिराहिं सुनहु रघुनाथा ॥342:3॥
मैं कछु कहउँ एक बल मोरें। तुम्ह रीझहु सनेह सुठि थोरें ॥342:4॥

होहिं सहस दस सारद सेषा = यदि दस हजार सरस्वती और शेषनाग हों, *करहिं कलप कोटिक भरि लेखा* = और करोड़ों कल्पों तक लिखते रहें, *मोर भाग्य* = तो भी मेरे भाग्य की, *राउर गुन गाथा* = और आपके गुणों की गाथा, *कहि न सिराहिं* = कहते-कहते समाप्त नहीं होगी, *सुनहु रघुनाथा* = हे राम जी सुनिये, *मैं कछु कहउँ* = मैं जो बोल रहा हूँ, *एक बल मोरें* = मैं अपने इस एक ही बल पर कि, *तुम्ह रीझहु सनेह सुठि थोरें* = आप तो थोड़े से प्रेम से ही प्रसन्न हो जाते हैं।

हे रघुनाथ जी! मेरा कितना बड़ा भाग्य है कि आपने मुझे अपना लिया है। आपके गुणों की गाथा भी अपार है। हमारे पास एक ही बल है, वह यह कि आप निश्चय ही थोड़े से प्रेम से प्रसन्न हो जाते हैं। इसी बल के कारण मैं इतना बोल रहा हूँ। यदि दस हजार सरस्वती जी व दस हजार शेष नाग जिनके हजार मुख हैं, वे मिलकर करोड़ों कल्पों तक मेरे भाग्य को व आपके गुणों को लिखते रहें तो भी पूरा वर्णन नहीं कर सकते हैं।

अंत में वरदान माँगते हैं कि आपके चरणों को मन कभी न भूले

बार बार मागउँ कर जोरें। मनु परिहरै चरन जनि भोरें ॥342:5॥

बार बार मागउँ कर जोरें = मैं बार-बार हाथ जोड़कर यह वर माँगता हूँ, *मनु परिहरै चरन जनि भोरें* = मेरा मन भूलकर भी आपके चरणों को कभी न छोड़े।

स्तुति के बाद राम ने जनक जी की तरफ कृपा करके देखा होगा, जनक जी राम का भाव समझकर बार-बार हाथ जोड़कर वर माँगते हैं। वरदान क्या है? 'मेरा मन भूलकर भी आपके चरणों को कभी न छोड़े'। मन को राम चरणों में लगाये रखना भक्ति है। ज्ञान दुर्लभ नहीं है, पर भक्ति दुर्लभ है। जनक जी ज्ञानी तो हैं ही, अब भक्ति का वर माँग लेते हैं।

राम ने श्वसुर को पिता समान मानकर विनती व सम्मान किया

सुनि बर बचन प्रेम जनु पोषे। पूरनकाम रामु परितोषे ॥342:6॥
करि बर बिनय ससुर सनमाने। पितु कौसिक बसिष्ठ सम जाने ॥342:7॥

सुनि बर बचन प्रेम जनु पोषे = प्रेम से भरे हुए सुंदर वचनों को सुनकर, *पूरनकाम रामु परितोषे* = पूर्ण काम राम जी संतुष्ट हो गये, *करि बर बिनय ससुर सनमाने* = राम जी ने सुंदर विनय करके ससुर का सम्मान किया, *पितु कौसिक बसिष्ठ सम जाने* = उन्हें अपने पिता; मुनि विश्वामित्र व वसिष्ठ जी जैसा मानकर।

राम इस समय दामाद की लीला कर रहे हैं। इसलिये प्रगट रूप से कोई वर नहीं देते हैं। राम तो पूर्णकाम हैं परंतु जनक जी के प्रेम से भरे हुए वचनों को सुनकर संतुष्ट हो गये। राम ने श्वसुर जनक जी से विनती की व उसी प्रकार आदर किया जिस प्रकार वे पिता दशरथ व गुरु वसिष्ठ व ऋषि विश्वामित्र का करते हैं।

जनकी जी तीनों भाइयों से मिलकर उन्हें आशीषें देते हैं

बिनती बहुरि भरत सन कीन्ही। मिलि सप्रेमु पुनि आसिष दीन्ही ॥342:8॥

बिनती बहुरि भरत सन कीन्ही = फिर भरत जी से विनती की, *मिलि सप्रेमु पुनि आसिष दीन्ही* = प्रेम के साथ मिलकर फिर उन्हें आशीर्वाद दिया।

मिले लखन रिपूसूदनहि दीन्हि असीस महीस ।
भए परसपर प्रेमबस फिरि फिरि नावहिं सीस ॥दोहा 342॥

मिले लखन रिपूसूदनहि = फिर लखन व शत्रुघ्न जी से मिलकर, *दीन्हि असीस महीस* = उन्हें भी राजा जनक ने आशीर्वाद दिया, *भए परसपर*

प्रेमबस = वे सब परस्पर प्रेम के वश होकर, *फिरि फिरि नावहिं सीस* = बार-बार आपस में सिर झुकाते हैं।

बार बार करि बिनय बड़ाई। रघुपति चले संग सब भाई ॥343:1॥

बार बार करि बिनय बड़ाई = जनक जी की बार-बार विनती व प्रशंसा करके, *रघुपति चले संग सब भाई* = राम जी सब भाइयों के साथ चल दिये।

जनक जी ने भरत जी की ओर देखा, बहुत विनती करके प्रेम से मिले। भरत जी को आशीर्वाद दिया मायने भरत जी ने उन्हें प्रणाम किया होगा। इसके बाद लक्ष्मण जी व शत्रुघ्न जी से मिलकर इन्हें भी आशीर्वाद दिया। चारों भाइयों व जनक जी के मन में एक-दूसरे के प्रति बहुत प्रेम उत्पन्न हुआ। इस प्रकार जनक जी की बार-बार विनती व प्रशंसा करके राम, भाइयों सहित चल दिये।

विश्वामित्र जी की वंदना व कृतज्ञता करके जनक जी वापस

जनक गहे कौसिक पद जाई। चरन रेनु सिर नयनन्ह लाई ॥343:2॥

जनक गहे कौसिक पद जाई = जनक जी विश्वामित्र जी के चरणों को प्रणाम करते हैं, *चरन रेनु सिर नयनन्ह लाई* = उनके चरण की धूलि को सिर व आँखों में लगाया।

सुनु मुनीस बर दरसन तोरें। अगमु न कछु प्रतीति मन मोरें ॥343:3॥
जो सुखु सुजसु लोकपति चहहीं। करत मनोरथ सकुचत अहहीं ॥343:4॥
सो सुखु सुजसु सुलभ मोहि स्वामी। सब सिधि तव दरसन अनुगामी ॥343:5॥

सुनु मुनीस बर दरसन तोरें = हे मुनि आपके श्रेष्ठ दर्शन से, *अगमु न कछु* = कुछ भी पाना दुर्लभ नहीं है, *प्रतीति मन मोरें* = मेरे मन में ऐसा विश्वास है, *जो सुखु सुजसु लोकपति चहहीं* = जो सुख व यश लोकपाल चाहते हैं, *करत मनोरथ सकुचत अहहीं* = परंतु असंभव समझकर उसकी कामना में संकोच करते हैं, *सो सुखु सुजसु* = वही सुख व यश, *सुलभ मोहि स्वामी* = हे स्वामी मुझे आसानी से मिल गया है, *सब सिधि तव दरसन अनुगामी* = सारी सिद्धियाँ आपके दर्शन के पीछे-पीछे चलने वाली हैं।

कीन्हि बिनय पुनि पुनि सिरु नाई। फिरे महीसु आसिषा पाई ॥343:6॥

कीन्हि बिनय पुनि पुनि सिरु नाई = बार-बार सिर नवाकर विनती की, *फिरे महीसु आसिषा पाई* = मुनि का आशीर्वाद पाकर राजा वापस आ गये।

राजा जनक अंत में विश्वामित्र जी के पास गये, उनके चरणों की धूलि को मस्तक पर लगाकर आदर भाव प्रगट किया। प्रार्थना करते हुए इस प्रकार कृतज्ञता का भाव व्यक्त करते हैं:

1. मेरे मन में ऐसा विश्वास है कि आपके दर्शन से, आपकी कृपा से कुछ भी प्राप्त करना असंभव नहीं है।
2. जो सुख, जो सुयश आपके दर्शन से मुझे आसानी से प्राप्त हो गया, उसका मनोरथ करने में लोकपाल भी संकोच करते हैं क्योंकि वह असंभव है।
3. सारी सिद्धियाँ आपके दर्शन के पीछे-पीछे चलने वाली हैं।

मुनि के चरणों मे बार-बार सिर झुकाकर प्रणाम किया, आशीर्वाद प्राप्त किया, फिर वापस जनकपुर आ गये।

तुलसीदास जी कथा जहाँ से शुरू करते हैं वहीं समाप्त करते हैं। विश्वामित्र जी के नगर आगमन से जनकपुर की कथा प्रारंभ हुई थी। राजा जनक सबसे पहले विश्वामित्र जी से मिले थे। सारे कार्यक्रम होने के बाद अंत में उन्हीं से मिलकर आशीर्वाद लेते हैं।

12. अयोध्या में बारात के स्वागत की तैयारी, भव्य स्वागत

(दोहा 343 से 348)

प्रभु राम की बारात जनकपुर से चलकर रास्ते में रुकती हुई अयोध्या के करीब पहुँचती है। अयोध्यावासी आनंदित व रोमांचित होकर बारात के स्वागत के लिये अपने घर से लेकर पूरे नगर को सजा देते हैं। राजमहल में मातायें तो प्रेम में सुध-बुध भूल जाती हैं। वहाँ परछन की तैयारी होने लगती है। जैसे ही बारात नगर के अंदर प्रवेश करती है लोग राम के रूप को देख न्योछावर करते हैं। दशरथ जी को प्रणाम करते हैं। स्त्रियाँ आरती करती हैं। पालकी के अंदर झाँककर वधुओं के मुख को देख लेती हैं।

बारात रास्ते में रुकती हुई अयोध्या के नजदीक पहुँची

चली बरात निसान बजाई। मुदित छोट बड़ सब समुदाई ॥343:7॥
रामहि निरखि ग्राम नर नारी। पाइ नयन फलु होहिं सुखारी ॥343:8॥

चली बरात निसान बजाई = बाजे बजाकर बारात चल दी, *मुदित छोट बड़ सब समुदाई* = छोटे-बड़े सभी समुदाय के लोग प्रसन्न हैं, *रामहि निरखि ग्राम नर नारी* = गाँव के स्त्री-पुरुष राम जी को देखकर, *पाइ नयन फलु होहिं सुखारी* = नेत्रों का फल प्राप्त करके सुखी हो गये।

बीच बीच बर बास करि मग लोगन्ह सुख देत ।
अवध समीप पुनीत दिन पहुँची आइ जनेत ।।दोहा 343।।

बीच बीच बर बास = बीच-बीच में सुंदर स्थानों में रुकती हुई, *करि मग लोगन्ह सुख देत* = रास्ते के लोगों को सुख देते हुए, *अवध समीप पुनीत दिन* = अयोध्या के पास पवित्र दिन में, *पहुँची आइ जनेत* = बारात पहुँच गयी।

बाजे बजाते हुए बारात चल दी। इतने विशाल समुदाय में सभी आयु वर्ग व पद के लोग बहुत प्रसन्न हैं। जब बारात रास्ते के गाँवो से निकलती है तो लोग देखने आते हैं। दूल्हे राम का सौंदर्य देख सब आनंदित होते हैं। नेत्रों का फल क्या है? प्रभु-दर्शन। ग्रामीणों ने राम के दर्शन कर नेत्रों का फल प्राप्त कर लिया। बारात जगह-जगह ठहरती हुई धीरे-धीरे चलती है ताकि रास्ते के लोगों को प्रभु राम के दर्शन प्राप्त होते रहें। वर-वधू के गृह प्रवेश का शुभ मुहूर्त होता है। मुनियों द्वारा निकाली गयी उसी शुभ तिथि को बारात अयोध्या नगर के समीप पहुँची।

बाजों की आवाज से नगर के लोग आनंदित व रोमांचित

हने निसान पनव बर बाजे। भेरि संख धुनि हय गय गाजे ।।344:1।।
झाँझि बिरव डिंडिमीं सुहाई। सरस राग बाजहिं सहनाई ।।344:2।।
पुर जन आवत अकनि बराता। मुदित सकल पुलकावलि गाता ।।344:3।।

हने निसान = जोर से बाजे बजने लगे, *पनव बर बाजे* = सुंदर ढोल बज रहे हैं, *भेरि संख धुनि* = भेरि व शंख की ध्वनि हो रही है, *हय गय गाजे* = हाथी-घोड़े हिनहिनाये, *झाँझि बिरव डिंडिमीं सुहाई* = झांझि; बिरव व डिंडिमी सुंदर बज रही है, *सरस राग बाजहिं सहनाई* = मधुर राग में शहनाई बज रही है, *पुर जन* = नगर के लोग, *आवत अकनि बराता* = बारात का आना सुनकर, *मुदित सकल पुलकावलि गाता* = सभी प्रसन्न व शरीर रोमांचित हो गये।

जब बारात नगर के पास पहुँचीं जोर-जोर से नगाड़े बजने लगे। मृदंग, छोटे नगाड़े, बड़े नगाड़े, शंख, सींग का बाजा, शहनाई इत्यादि सब राग के साथ, सुर-ताल मिलाकर बज रहे हैं। हाथी-घोड़े भी हिनहिनाये। नगर के लोग यह सुनकर कि बारात वापस आ गयी है, पुलकित हो गये, शरीर रोमांचित हो गया।

अपने घर से लेकर पूरे नगर को सजा दिया

निज निज सुंदर सदन सँवारे। हाट बाट चौहत पुर द्वारे ॥344:4॥
गलीं सकल अरगजाँ सिंचाईं। जहँ तहँ चौकें चारु पुराईं ॥344:5॥
बना बजारु न जाइ बखाना। तोरन केतु पताक बिताना ॥344:6॥

निज निज सुंदर सदन सँवारे = अपने-अपने घरों को सुंदर तरीके से सजाया, *हाट बाट चौहत पुर द्वारे* = बाजारों; गलियों; चौराहों व नगर के द्वार को सजाया गया, *गलीं सकल अरगजाँ सिंचाईं* = सारी गलियों में सुगंधित द्रव्य सींचा गया, *जहँ तहँ चौकें चारु पुराईं* = जगह-जगह चौकें बनायी गयीं, *बना बजारु न जाइ बखाना* = बाजार की सजावट का वर्णन नहीं किया जा सकता, *तोरन केतु पताक बिताना* = बंदनवार; झंडी; पताका व मंडप बनाये गये।

नगरवासिओं ने अपने-अपने घरों को सुंदर तरीके से सजाया। बाजारों, गलियों, चौराहों व नगर के द्वार को बंदनवार, झंडी, पताका व मंडप बनाकर सजाया गया। जगह-जगह दरवाजों पर चौकें बनायी गयीं। गुलाब जल, चंदन व कस्तूरी को मिलाकर बनाये गये सुगंधित पदार्थ को अरगजाँ कहते हैं, इससे गलियों को सींचा गया। बाजार की सजावट का वर्णन नहीं किया जा सकता।

फल से लदे वृक्षों को मणियों से सजाकर लगाया गया

सफल पूगफल कदलि रसाला। रोपे बकुल कदंब तमाला ॥344:7॥
लगे सुभग तरु परसत धरनी। मनिमय आलबाल कल करनी ॥344:8॥

सफल = फलों के सहित, *पूगफल* = सुपारी, *कदलि* = केला, *रसाला* = आम, *रोपे* = के पेड़ लगाये गये, *बकुल कदंब तमाला* = मौलसिरी; कदंब व

तमाल के पेड़ भी लगाये गये, *लगे सुभग तरु* = फलों से लदे वृक्ष, *परसत धरनी* = पृथ्वी को छू रहे हैं, *मनिमय आलबाल कल करनी* = उनके थलहों की मणियों से बहुत सुंदर रचना की गई है।

बिबिध भाँति मंगल कलस गृह गृह रचे सँवारि ॥
सुर ब्रह्मादि सिहाहिं सब रघुबर पुरी निहारि ॥दोहा 344॥

बिबिध भाँति मंगल कलस = तरह-तरह के मंगल कलश, *गृह गृह रचे सँवारि* = घर-घर में सजाकर रखे गये हैं, *सुर ब्रह्मादि सिहाहिं* = इन्द्र व ब्रह्मा इत्यादि देवताओं को ईर्ष्या हो रही है, *सब रघुबर पुरी निहारि* = राम की पुरी को देखकर।

सड़क के दोनों ओर सुपारी, आम, केले, मौलसिरी, कदंब व तमाल के वृक्ष लगाये गये। ये सब फलों से लदे हुए थे व जमीन तक इनकी शाखायें लटक रही थीं। इनके थलहों में मणियाँ लगा दी गई थीं। रचना बहुत ही सुंदर थी। घर-घर के द्वारों को अनेकों तरह से सजाकर मंगल कलश रखे गये थे। प्रभु राम के इस सुंदर नगर को देखकर ब्रह्मा जी को अपनी रचना फीकी लगने लगी, इन्द्र को इन्द्रपुरी हल्की लग रही है। इस प्रकार नगरवासियों ने बारात के स्वागत की तैयारी की।

राजभवन में तो ऋद्धि-सिद्धि, सुख-संपत्ति स्वयं आ गयीं

भूप भवनु तेहि अवसर सोहा। रचना देखि मदन मनु मोहा ॥345:1॥
मंगल सगुन मनोहरताई। रिधि सिधि सुख संपदा सुहाई ॥345:2॥
जनु उछाह सब सहज सुहाए। तनु धरि धरि दसरथ गृहँ छाए ॥345:3॥
देखन हेतु राम बैदेही। कहहु लालसा होहि न केही ॥345:4॥

भूप भवनु तेहि अवसर सोहा = उस समय राज महल भी अत्यंत शोभायमान था, *रचना देखि मदन मनु मोहा* = रचना देखकर कामदेव का मन भी मोहित हो गया, *मंगल सगुन* = मंगल शकुन, *मनोहरताई* = मनोहरता, *रिधि सिधि* = ऋद्धि-सिद्धि, *सुख संपदा सुहाई* = सुंदर संपदा व सुख, *जनु उछाह सब सहज सुहाए* = मानो स्वयं उत्साहित होकर, *तनु धरि धरि दसरथ गृहँ छाए* = शरीर धारण करके महाराज दशरथ के महल में आ गये,

देखन हेतु राम बैदेही = राम व सीता के दर्शन की, *कहहु लालसा होहि न केही* = कहो किसे इच्छा न होगी।

राजा दशरथ के राजभवन की सुंदरता देखकर तो कामदेव का मन भी मोहित हो गया। मंगल सगुन स्वयं उत्साहित होकर शरीर धारण करके आ गये। ऋद्धि-सिद्धि, सुख-संपत्ति ये सब भी मानो इतने उत्साहित हो गये कि शरीर धारण करके राजमहल पहुँच गये। आने का कारण क्या है? वधू बनी सीता व वर बने राम के सुंदर रूप को देखने के लिये।

झुंड बनाकर स्त्रियाँ आरती के लिये राजमहल पहुँची

जूथ जूथ मिलि चलीं सुआसिनि। निज छबि निदरहिं मदन बिलासिनि ॥345:5॥
सकल सुमंगल सजें आरती। गावहिं जनु बहु बेष भारती ॥345:6॥
भूपति भवन कोलाहलु होई। जाइ न बरनि समउ सुखु सोई ॥345:7॥

जूथ जूथ मिलि चलीं सुआसिनि = नगर की स्त्रियाँ झुंड का झुंड बनाकर राजमहल की ओर चलीं, *निज छबि* = जो अपनी सुंदरता से, *निदरहिं मदन बिलासिनि* = कामदेव की पत्नी रति की सुंदरता का निरादर कर रही हैं, *सकल सुमंगल* = सभी मंगल द्रव्य, *सजें आरती* = व आरती सजाये हैं, *गावहिं जनु बहु बेष भारती* = वे इस प्रकार गा रही हैं मानो सरस्वती जी अनेक वेष धारण किये हों, *भूपति भवन कोलाहलु होई* = राजभवन के अंदर कोलाहल हो रहा है, *जाइ न बरनि समउ सुखु सोई* = उस समय के सुख का वर्णन नहीं किया जा सकता है।

नगर की स्त्रियाँ झुंड का झुंड बनाकर राजमहल की ओर चलीं। वे इतनी सुंदर हैं कि कामदेव की पत्नी रति का सौंदर्य भी उनके सामने फीका है। सभी स्त्रियाँ थालों में मंगल सामग्री के साथ आरती भी सजाये हैं। वे लोग इस प्रकार गा रही हैं मानो सरस्वती जी अनेकों वेष बनाकर गा रही हों। वे सुंदरता में रति के समान व गाने में सरस्वती के समान हैं। राजभवन के अंदर कोलाहल हो रहा है। उस समय के सुख का वर्णन नहीं किया जा सकता है।

मातायें सुध-बुध भूल गयीं, विप्रों को दान, देवताओं की पूजा

कौसल्यादि राम महतारीं। प्रेमबिबस तन दसा बिसारीं ॥345:8॥

कौसल्यादि राम महतारीं = राम की माँ कौसल्या जी व अन्य मातायें, *प्रेमबिबस तन दसा बिसारीं* = प्रेम के वश होकर शरीर की सुधि भूल गयीं।

दिए दान बिप्रन्ह बिपुल पूजि गनेस पुरारि ।
प्रमुदित परम दरिद्र जनु पाइ पदारथ चारि ॥दोहा 345॥

दिए दान बिप्रन्ह बिपुल = विप्रों को बहुत-सा दान दिया, *पूजि गनेस पुरारि* = गणेश जी व शिव जी की पूजा की, *प्रमुदित परम दरिद्र जनु* = मानो बहुत अधिक दरिद्र व्यक्ति आनंदित हो जाये, *पाइ पदारथ चारि* = चारों तरह के पदार्थ प्राप्त करके।

मोद प्रमोद बिबस सब माता। चलहिं न चरन सिथिल भए गाता ॥346:1॥

मोद प्रमोद बिबस सब माता = सब मातायें मोद व प्रमोद के वश में हैं, *चलहिं न चरन* = पैर चल नहीं रहे हैं, *सिथिल भए गाता* = क्योंकि शरीर शिथिल हो गया है।

राजभवन के अंदर राम की माँ कौसल्या व अन्य माताओं के हृदय में बहुत प्रेम व स्नेह छा गया। मातायें शरीर की सुध-बुध भूल गयीं। मानो प्रेम व स्नेह का संवेग पूरे शरीर को अपने वश मे किये हो। शरीर में शिथिलता आ गयी, अंग चलते नहीं। जैसे चारों पदार्थ पाकर दरिद्र प्रसन्न हो जाता है, इसी प्रकार मातायें प्रसन्न हैं। जब प्रेम उमड़ता है तो कुछ देने का मन होता है। माताओं ने विप्रों को खूब दान दिया। शिव जी व गणेश जी की पूजा करके मंगल की कामना की।

माताओं ने परछन की तैयारी की

राम दरस हित अति अनुरागीं। परिछनि साजु सजन सब लागीं ॥346:2॥
बिबिध बिधान बाजने बाजे। मंगल मुदित सुमित्राँ साजे ॥346:3॥

राम दरस हित अति अनुरागीं = राम-दर्शन के प्रेम के अनुराग में, *परिछनि साजु सजन सब लागीं* = परछन का सब सामान सजाने लगीं, *बिबिध बिधान बाजने बाजे* = अनेकों प्रकार के बाजे बजने लगे, *मंगल मुदित सुमित्राँ साजे* = सुमित्रा माँ ने प्रसन्नता से मंगल सामग्री तैयार की।

हरद दूब दधि पल्लव फूला। पान पूगफल मंगल मूला ॥346:4॥
अच्छत अंकुर लोचन लाजा। मंजुल मंजरि तुलसि बिराजा ॥346:5॥
छुहे पुरट घट सहज सुहाए। मदन सकुन जनु नीड़ बनाए ॥346:6॥

हरद दूब दधि पल्लव फूला = हल्दी; दूब; दही; आम के पत्ते व फूल, *पान पूगफल मंगल मूला* = पान व सुपारी इत्यादि मंगल की वस्तुयें, *अच्छत अंकुर लोचन लाजा* = चावल; अंकुरित अनाज; गोरोचन व लावा, *मंजुल मंजरि तुलसि बिराजा* = तुलसी की सुंदर मंजरियाँ सुशोभित हैं, *छुहे* = तरह-तरह के रंगों से चित्रित किये हुए, *पुरट घट* = स्वर्ण के कलश, *सहज सुहाए* = सहज ही सुंदर लगते हैं, *मदन सकुन जनु नीड़ बनाए* = मानो कामदेव के पक्षियों ने घोंसलें बनाये हों।

सगुन सुगंध न जाहिं बखानी। मंगल सकल सजहिं सब रानी ॥346:7॥
रचीं आरतीं बहुत बिधाना। मुदित करहिं कल मंगल गाना ॥346:8॥

सगुन सुगंध न जाहिं बखानी = शकुन की इतनी सुंगधित वस्तुयें हैं जिनका वर्णन नहीं हो सकता है, *मंगल सकल सजहिं सब रानी* = सब रानियाँ मंगल सामग्री सजाने में सहायता कर रही हैं, *रचीं आरतीं बहुत बिधाना* = बहुत प्रकार से आरती सजायी गयी, *मुदित करहिं कल मंगल गाना* = सब प्रसन्नता से मंगलगीत गा रही हैं।

कनक थार भरि मंगलन्हि कमल करन्हि लिएँ मात ।
चलीं मुदित परिछनि करन पुलक पल्लवित गात ॥दोहा 346॥

कनक थार भरि मंगलन्हि = स्वर्ण की थाल में मंगल सामग्री को, *कमल करन्हि लिएँ मात* = कमल के समान कोमल हाथों में मातायें लेकर, *चलीं मुदित परिछनि करन* = प्रसन्नता से परछन करने चलती हैं, *पुलक पल्लवित गात* = आनंद से शरीर रोमांचित हो रहा है।

वर-वधू की घर के प्रेवश द्वार पर आरती को परछन कहते हैं। माँ कौसल्या ने आरती तैयार की व माँ सुमित्रा ने मांगलिक सामग्री तैयार की। तुलसीदास जी मंगल सामग्री की पूरी सूची बता देते हैं– हल्दी, दूब, दही, आम के पत्ते, पान, सुपारी, चावल, अंकुरित अनाज, गोरोचन, लावा, तुलसी की मंजरियाँ, जल से भरा हुआ स्वर्ण कलश, सुगंधित वस्तुयें जैसे चंदन इत्यादि। स्वर्ण कलश

को इस प्रकार सजाया गया है मानो कामदेव के पक्षी का घोंसला हो। मातायें कमल के समान सुंदर व कोमल हाथों में स्वर्ण की थाली में मंगल की सामग्री व आरती सजाकर परछन के लिये चलती हैं। मन प्रसन्न है व शरीर रोमांचित है। सब प्रसन्नता से मंगलगीत गा रही हैं।

काव्यात्मक रूपक अलंकार से स्वागत की तैयारी का वर्णन

धूप धूम नभु मेचक भयऊ। सावन घन घमंडु जनु ठयऊ ॥347:1॥
सुरतरु सुमन माल सुर बरषहिं। मनहुँ बलाक अवलि मनु करषहिं ॥347:2॥
मंजुल मनिमय बंदनिवारे। मनहुँ पाकरिपु चाप सँवारे ॥347:3॥

धूप धूम = धूप के धुएँ से, *नभु मेचक भयऊ* = आकाश काला हो गया, *सावन घन घमंडु जनु ठयऊ* = ऐसा लगा मानो सावन के बादल घुमड़-घुमड़ कर छा गये हों, *सुरतरु सुमन माल सुर बरषहिं* = आकाश से देवता कल्पवृक्ष के सफेद फूल बरसा रहे हैं, *मनहुँ बलाक अवलि मनु करषहिं* = वे फूल बरसात में उड़ते हुए बगुले की तरह सुंदर लग रहे हैं, *मंजुल मनिमय बंदनिवारे* = मणियों से बने सुंदर वंदनवार, *मनहुँ पाकरिपु चाप सँवारे* = ऐसे लग रहे हैं मानो इन्द्रधनुष हों।

प्रगटहिं दुरहिं अटन्ह पर भामिनि। चारु चपल जनु दमकहिं दामिनि ॥347:4॥
दुंदुभि धुनि घन गरजनि घोरा । जाचक चातक दादुर मोरा ॥347:5॥
सुर सुगंध सुचि बरषहिं बारी। सुखी सकल ससि पुर नर नारी ॥347:6॥

प्रगटहिं दुरहिं = प्रगट होना व छिपना, *अटन्ह पर* = अटारियों में, *भामिनि चारु चपल* = सुंदर व चंचल स्त्रियों का, *जनु दमकहिं दामिनि* = ऐसा लगता है मानो बिजली चमक रही हो, *दुंदुभि धुनि* = नगाड़ों की आवाज, *घन गरजनि घोरा* = मानो बादलों की घोर गर्जना हो, *जाचक चातक दादुर मोरा* = याचक लोग पपीहे; मेढक व मोर के समान हैं, *सुर सुगंध सुचि बरषहिं बारी* = देवता पवित्र सुंगधित जल बरसा रहे हैं, *सुखी सकल ससि पुर नर नारी* = नगर के सभी स्त्री-पुरुष धान की फसल के समान सुखी हो रहे हैं।

स्वागत की तैयारी में धूपबत्ती व अगरबत्ती भी जलायी गयी, उससे धुँआ निकला। कितना धुँआ है? इतना की आकाश में सावन के मौसम जैसे बादल छा गये। देवता आकाश से कल्पवृक्ष के सफेद फूल बरसा रहे हैं जो उड़ते हुए

बगुले की तरह सुंदर लग रहे हैं। राजभवन में मणियों को काटकर आम के पत्ते बनाये गये, जिन्हें चमकीली डोरियों में बाँधकर बंदनवार बनाये गये हैं जो आकाश में इन्द्रधनुष जैसे लग रहे हैं। मकानों के ऊपर स्त्रियाँ बार-बार आकर देखती हैं कि नगर कैसा सजा है, बारात अभी आयी कि नहीं, उनका इस प्रकार आना-जाना ऐसा लगता है जैसे चंचल बिजली चमक रही हो। नगाड़ों की आवाज, मानो बादलों की घोर गर्जना हो। याचक लोग पपीहे, मेढक व मोर के समान हैं। देवता पवित्र सुंगधित जल बरसा रहे हैं। बारिश से जैसे धान की फसल लहलहाती है वैसे ही नगर के सभी स्त्री-पुरुष प्रसन्न हो रहे हैं।

शुभ मुहूर्त में बारात का अयोध्या नगर में प्रवेश

समउ जानि गुर आयसु दीन्हा। पुर प्रबेसु रघुकुलमनि कीन्हा ॥347:7॥
सुमिरि संभु गिरिजा गनराजा। मुदित महीपति सहित समाजा ॥347:8॥

समउ जानि गुर आयसु दीन्हा = नगर के भीतर प्रवेश का समय आ गया है यह जानकर गुरु वसिष्ठ जी ने आज्ञा दी, *पुर प्रबेसु रघुकुलमनि कीन्हा* = तब रघुकुलमणि दशरथ जी ने नगर में प्रवेश किया, *सुमिरि संभु गिरिजा गनराजा* = शिव-पार्वती व गणेश जी का स्मरण करके, *मुदित महीपति सहित समाजा* = समाज सहित राजा प्रसन्न हैं।

होहिं सगुन बरषहिं सुमन सुर दुंदुभीं बजाइ ।
बिबुध बधू नाचहिं मुदित मंजुल मंगल गाइ ॥दोहा 347॥

होहिं सगुन = शकुन हो रहे हैं, *बरषहिं सुमन सुर दुंदुभीं बजाइ* = देवता दुन्दुभी बजा-बजाकर फूल बरसा रहे हैं, *बिबुध बधू नाचहिं मुदित* = देवताओं की स्त्रियाँ प्रसन्नता से नाच रही हैं, *मंजुल मंगल गाइ* = सुंदर मंगलगीत गा-गाकर।

नगर के भीतर प्रवेश का समय आ गया है, यह जानकर गुरु वसिष्ठ जी ने बारात के नगर में प्रवेश की आज्ञा दी। रघुकुलमणि दशरथ जी ने शिव-पार्वती व गणेश जी का स्मरण करके समाज सहित प्रसन्नता से नगर में प्रवेश किया। अनेकों प्रकार के शकुन हो रहे हैं। देवता दुन्दुभी बजा-बजाकर फूल बरसा रहे हैं। देवताओं की स्त्रियाँ मंगलगीत गा-गाकर प्रसन्नता से नाच रही हैं।

दसों दिशायें राम के यश व जय-जयकार से गूँज उठी

मागध सूत बंदि नट नागर। गावहिं जसु तिहु लोक उजागर ॥348:1॥
जय धुनि बिमल बेद बर बानी। दस दिसि सुनिअ सुमंगल सानी ॥348:2॥
बिपुल बाजने बाजन लागे। नभ सुर नगर लोग अनुरागे ॥348:3॥
बने बराती बरनि न जाहीं। महा मुदित मन सुख न समाहीं ॥348:4॥

मागध सूत बंदि नट नागर = मागध; सूत; भाट व चतुर नट, *गावहिं जसु* = यश गा रहे हैं, *तिहु लोक उजागर* = तीनों लोकों को प्रकाशित करने वाले श्रीराम का, *जय धुनि* = जयध्वनि, *बिमल बेद बर बानी* = निर्मल वेदों की सुंदर वाणी, *दस दिसि सुनिअ सुमंगल सानी* = मंगल से भरपूर दसों दिशाओं में सुनायी दे रही है, *बिपुल बाजने बाजन लागे* = बहुत से बाजे बजने लगे, *नभ सुर नगर लोग अनुरागे* = आकाश में देवता व नगर के लोग प्रेम में मग्न हैं, *बने बराती बरनि न जाहीं* = बराती ऐसे बने-ठने हैं कि वर्णन नहीं हो सकता, *महा मुदित मन सुख न समाहीं* = परम आनंदित हैं सुख मन में समा नहीं रहा है।

मागध, सूत, भाट व चतुर नट तीनों लोकों को प्रकाशित करने वाले श्रीराम का यश गा रहे हैं। जयध्वनि, निर्मल वेदों की सुंदर वाणी, मंगल से भरपूर दसों दिशाओं में सुनायी दे रही है। बहुत से बाजे बजने लगे। आकाश में देवता व नगर के लोग प्रेम में मग्न हैं। बाराती ऐसे बने-ठने हैं कि वर्णन नहीं हो सकता। सब परम आनंदित हैं। सुख मन में समा नहीं रहा है।

नगरवासी न्योछावर करते हैं, राम को देखकर पुलकित

पुरबासिन्ह तब राय जोहारे। देखत रामहि भए सुखारे ॥348:5॥
करहिं निछावरि मनिगन चीरा। बारि बिलोचन पुलक सरीरा ॥348:6॥

पुरबासिन्ह तब राय जोहारे = अयोध्या के लोगों ने झुककर राजा को प्रणाम किया, *देखत रामहि भए सुखारे* = राम जी को देखकर अयोध्यावासी सुखी हो गये, *करहिं निछावरि मनिगन चीरा* = लोग मणियों व वस्त्रों का न्योछावर कर रहे हैं, *बारि बिलोचन* = नेत्रों से प्रेम के आँशु बह रहे हैं, *पुलक सरीरा* = शरीर रोमांचित हो रहा है।

महाराज दशरथ को देखकर नगरवासिओं ने झुककर प्रणाम किया। उनके पीछे-पीछे चारों भाई हैं, राम को देखकर सब आनंदित हो गये। नगर के लोग मणियों, वस्त्रों व मूल्यवान् वस्तुओं से न्योछावर करते हैं। नगरवासियों के नेत्रों में प्रेम के अश्रु हैं। राम को देखकर शरीर रोमांचित हो रहा है।

स्त्रियाँ आरती करती हैं, पालकी में वधुओं का मुख देखती हैं

आरति करहिं मुदित पुर नारी। हरषहिं निरखि कुअँर बर चारी ॥348:7॥
सिबिका सुभग ओहार उघारी। देखि दुलहिनिन्ह होहिं सुखारी ॥348:8॥

आरति करहिं मुदित पुर नारी = नगर की स्त्रियाँ प्रसन्नता से आरती कर रही हैं, *हरषहिं निरखि कुअँर बर चारी* = सुंदर चारों राजकुमारों को देखकर हर्षित हो रही हैं, *सिबिका सुभग ओहार उघारी* = पालकियों के सुंदर परदे हटा-हटाकर, *देखि दुलहिनिन्ह होहिं सुखारी* = दुल्हनों को देखकर सुखी होती हैं।

नगर की स्त्रियाँ सड़क के दोनों ओर एकत्रित हुई थीं, चारों राजकुमारों की प्रसन्नता से आरती करती हैं। वर रूप में राजकुमारों को देखकर बहुत हर्षित होती हैं। स्त्रियाँ पालकियों के पास पहुँच जाती हैं, उनमें लगे सुंदर पर्दों को उठाकर अंदर देखती हैं। किसी पालकी में सीता जी को देखती हैं तो किसी में मांडवी को, किसी में उर्मिला हैं तो कहीं श्रुतकीर्ति हैं। चारों दुल्हनों को देखकर बहुत सुखी होती हैं। राजभवन में मातायें अपनी बहुओं के मुख बाद में देखेंगीं, नगर की नारियाँ पहले ही देख लेती हैं। राम-सीता का कार्य सब लोगों को सुख देना है।

13. परछन व देव-पितर पूजन

(दोहा 348 से 350)

राजद्वार में माताओं ने चारों वधुओं का परछन किया, देहरी पूजकर गृह में प्रवेश करवाया। चार सुंदर सिंहासनों पर वर-वधुओं को बैठाकर चरण धोये, पूजन किया व आरती की। लौकिक रीतियाँ की। कोहबर में ले जाकर वधुओं से भी कुल देवता व पितरों का पूजन करवाया ताकि वे अपने आपको इसी घर का समझने लगें। माताओं ने सबके कल्याण के लिये देवताओं से प्रार्थना की व उनके आशीर्वाद को आँचल फैलाकर स्वीकार किया।

मातायें परछन करके वर-वधू को देख आनंदित

एहि बिधि सबही देत सुखु आए राजदुआर ।
मुदित मातु परिछनि करहिं बधुन्ह समेत कुमार ॥दोहा 348॥

एहि बिधि सबही देत सुखु = इस प्रकार सबको सुख देते हुए, *आए राजदुआर* = राजमहल के द्वार पर बारात पहुँची, *मुदित मातु परिछनि करहिं* = मातायें प्रसन्नता से परछन करती हैं, *बधुन्ह समेत कुमार* = राजकुमारों की वधुओं सहित।

करहिं आरती बारहिं बारा। प्रेमु प्रमोदु कहै को पारा ॥349:1॥
भूषन मनि पट नाना जाती। करहिं निछावरि अगनित भाँती ॥349:2॥
बधुन्ह समेत देखि सुत चारी। परमानंद मगन महतारी ॥349:3॥
पुनि पुनि सीय राम छबि देखी। मुदित सफल जग जीवन लेखी ॥349:4॥

करहिं आरती बारहिं बारा = मातायें बार-बार आरती कर रही हैं, *प्रेमु प्रमोदु कहै को पारा* = उस प्रेम व महान् आनंद का वर्णन कौन कर सकता है! *भूषन मनि पट नाना जाती* = अनेकों प्रकार के आभूषण; रत्न व वस्त्र, *करहिं निछावरि अगनित भाँती* = व अगणित प्रकार की वस्तुयें न्योछावर की जा रही हैं, *बधुन्ह समेत देखि सुत चारी* = बहुओं सहित चारों पुत्रों को देखकर, *परमानंद मगन महतारी* = परम आनंद में मातायें मग्न हैं, *पुनि पुनि सीय राम छबि देखी* = सीता व राम की छवि को बार-बार देखकर, *मुदित सफल जग जीवन लेखी* = संसार में अपने जीवन को सफल मानकर आनंदित हो रही हैं।

बारात नगर से होती हुई राजमहल के पास पहुँची। मातायें राज-द्वार पर आरती लिये खड़ी थीं। राम, भाइयों सहित घोड़े से ऊतरे, पालकियों से बहुओं को उतारा गया, अब चारों राजकुमार चारों बहुओं सहित द्वार पर खड़े हैं। मातायें बार-बार आरती करती हैं, उस समय के परम आनंद का वर्णन नहीं हो सकता है। आरती के बाद अनेकों प्रकार के आभूषण, रत्न, वस्त्र व अगणित प्रकार की वस्तुयें न्योछावर करती हैं। मातायें, चारों भाइयों व चारों वधुओं को देखकर अपनी दृष्टि राम-सीता पर लगाती हैं। बार-बार उनकी तरफ देखती हैं। इस दिव्य छवि को देखकर संसार में अपने जीवन

को सफल मानकर आनंदित हो रही हैं। तुलसीदास जी हम सबको परछन दिखाना चाहते हैं, ध्यान से देखकर अपने को धन्य करें।

सखियाँ गाती हैं, देवता फूल बरसाते हैं

सखीं सीय मुख पुनि पुनि चाही। गान करहिं निज सुकृत सराही ॥349:5॥
बरषहिं सुमन छनहिं छन देवा। नाचहिं गावहिं लावहिं सेवा ॥349:6॥

सखीं सीय मुख पुनि पुनि चाही = सखियाँ सीता जी के मुख को बार-बार देखकर, *गान करहिं* = गाना गा रही हैं, *निज सुकृत सराही* = व अपने पुण्यों की सराहना कर रही हैं, *बरषहिं सुमन छनहिं छन देवा* = देवता क्षण-क्षण में फूल बरसाते हैं, *नाचहिं गावहिं* = नाचते व गाते हैं, *लावहिं सेवा* = अपनी-अपनी सेवायें समर्पित करते हैं।

द्वार पर गीत भी गाया जा रहा है। सखियाँ राम और सीता के मुख की ओर विशेष रूप से बार-बार देख रही हैं, अपने पुण्यों की सराहना करती हैं। आकाश से देवता क्षण-क्षण में फूलों की वर्षा करते हैं। देवता नाच रहे हैं, गा रहे हैं, अपनी सेवायें दे रहे हैं। मन में यदि प्रसन्नता आये तो समझना चाहिये देवता ही आ गये हैं। अपने अंदर सद्‌गुणों का आना भी देवताओं का आना माना जाता है।

सरस्वती जी उपमा न ढूँढ पायीं, तब अपलक देखती रह गयीं

देखि मनोहर चारिउ जोरीं। सारद उपमा सकल ढँढोरीं ॥349:7॥
देत न बरहिं निपट लघु लागीं। एकटक रहीं रूप अनुरागीं ॥349:8॥

देखि मनोहर चारिउ जोरीं = चारों सुंदर जोड़ियों को देखकर, *सारद उपमा सकल ढँढोरीं* = सरस्वती जी ने सारी उपमाओं को खोज डाला, *देत न बरहिं* = पर कोई उपमा देते नहीं बना, *निपट लघु लागीं* = सब बहुत ही छोटी लग रही थीं, *एकटक रहीं रूप अनुरागीं* = सुंदरता में अनुरक्त होकर एकटक देखती ही रह गयीं।

सरस्वती जी ने भी चारों राजकुमारों को बहुओं सहित देखा। सरस्वती जी तो काव्य की देवी हैं। वे काव्यात्मक उपमा देकर बोलती हैं। उन्होंने सारी

उपमाओं को खोज डाला, पर कोई उपमा देते नहीं बना क्योंकि सब बहुत ही छोटी लग रही थीं। उन्हें लगा कि ये तो अलौकिक हैं, अनुपमेय हैं, इनकी उपमा नहीं दी जा सकती है। फिर सरस्वती जी ने क्या किया? तुलसीदास जी कहते हैं कि सरस्वती, उपमायें ढूँढना बंद करके एकटक उन दिव्य सुंदर जोड़ियों को देखती ही रह गयीं।

चारों वर-वधूओं ने देहरी पूजकर राज-भवन में प्रवेश किया

निगम नीति कुल रीति करि अरघ पाँवड़े देत ।
बधुन्ह सहित सुत परिछि सब चलीं लवाइ निकेत ॥दोहा 349॥

निगम नीति = वेद की विधि, *कुल रीति करि* = व कुल की रीति करके, *अरघ पाँवड़े देत* = पाँवड़ें बिछाते हुए, *बधुन्ह सहित सुत* = पुत्रों को बहुओं सहित, *परिछि सब* = परछन करके, *चलीं लवाइ निकेत* = महल के अंदर ले जा रही हैं।

द्वार पर वैदिक रीति व कुलरीति का पालन किया गया। जैसे देहरी पूजन, देवता पूजन इत्यादि किया गया। उसके बाद चारों पुत्रों को बहुओं सहित, पाँवड़ें बिछाते हुए राज-महल के अंदर ले जाया गया।

चार सिंहासनों पर वर-वधू को बैठाकर पूजन व आरती की

चार सिंघासन सहज सुहाए। जनु मनोज निज हाथ बनाए ॥350:1॥
तिन्ह पर कुआँरि कुअँर बैठारे। सादर पाय पुनीत पखारे ॥350:2॥
धूप दीप नैबेद बेद बिधि। पूजे बर दुलहिनि मंगल निधि ॥350:3॥
बारहिं बार आरती करहीं। ब्यजन चारु चामर सिर ढरहीं ॥350:4॥

चार सिंघासन सहज सुहाए = राजभवन में चार सिंहासन हैं जो स्वयं ही सुंदर हैं, *जनु मनोज निज हाथ बनाए* = मानो कामदेव ने अपने हाथों से बनाया हो, *तिन्ह पर कुआँरि कुअँर बैठारे* = एक-एक सिंहासन पर वर-वधू बैठाये गये, *सादर पाय पुनीत पखारे* = आदर पूर्वक उनके पवित्र चरण धोए, *धूप दीप नैबेद* = धूप; दीपक व नैवेद्य से, *बेद बिधि पूजे* = वैदिक रीति से पूजन किया, *बर दुलहिनि मंगल निधि* = वर व दुल्हन का जो मंगल के निधान हैं, *बारहिं*

बार आरती करहीं = बार-बार आरती करती हैं, *ब्यजन* = पंखा, *चारु चामर* = व सुंदर चँवर, *सिर ढरहीं* = सिर के ऊपर डुलाया जा रहा है।

राजभवन के अंदर चार सिंहासन इतने सुंदर बनाये गये हैं मानो कामदेव ने स्वयं उनकी रचना की हो। एक-एक सिंहासन पर वर-वधू की जोड़ी बैठायी गयी। सबसे पहले आदरपूर्वक चरण धोये गये। चरण कैसे हैं? पवित्र। भक्ति के वश होकर, उन पवित्र चरणों को धोकर भक्ति प्रगट की जा रही है। माला पहनायी, चंदन लगाया, धूप, दीपक व नैवद्य से वैदिक रीति से पूजन किया गया। मंगल के निधान वर व दुल्हन की बार-बार आरती की गयी। सिर के ऊपर पंखा व चँवर डुलाया जा रहा है।

पूजन करके मातायें आनंद में मग्न हैं

बस्तु अनेक निछावरि होहीं। भरीं प्रमोद मातु सब सोहीं ॥350:5॥
पावा परम तत्व जनु जोगीं। अमृतु लहेउ जनु संतत रोगीं ॥350:6॥
जनम रंक जनु पारस पावा। अंधहि लोचन लाभु सुहावा ॥350:7॥
मूक बदन जनु सारद छाई। मानहुँ समर सूर जय पाई ॥350:8॥

बस्तु अनेक निछावरि होहीं = अनेक वस्तुयें का न्योछावर हो रहा है, *भरीं प्रमोद मातु सब सोहीं* = सभी मातायें आनंद व प्रमोद से इस प्रकार शोभायमान हैं, *पावा परम तत्व जनु जोगीं* = मानो योगी को परम तत्त्व मिल गया हो, *अमृतु लहेउ जनु संतत रोगीं* = सदैव रोगी रहने वाले ने मानो अमृत पा लिया हो, *जनम रंक जनु पारस पावा* = जन्म से दरिद्र ने पारस मणि पा ली हो, *अंधहि लोचन लाभु सुहावा* = अँधे को सुंदर आँख मिल गयी हो, *मूक बदन जनु सारद छाई* = गूँगे के मुख में मानो सरस्वती आकर बैठ गयीं हों, *मानहुँ समर सूर जय पाई* = मानो युद्ध भूमि में शूरवीर ने विजय प्राप्त कर ली हो।

एहि सुख ते सत कोटि गुन पावहिं मातु अनंदु ।
भाइन्ह सहित बिआहि घर आए रघुकुलचंदु ॥दोहा 350 क॥

एहि सुख ते सत कोटि गुन = इन सुखों से भी सौ करोड़ गुना, *पावहिं मातु अनंदु* = आनंद माताओं को प्राप्त हुआ, *भाइन्ह सहित बिआहि घर* = भाइयों सहित विवाह करके, *आए रघुकुलचंदु* = रघुकुल के चंन्द्रमा घर आये हैं।

अनेक वस्तुओं का न्योछावर हो रहा है। भाइयों सहित विवाह करके रघुकुल के चन्द्रमा श्रीराम के घर आने पर पूजन करके सभी मातायें किस प्रकार आनंदित होकर शोभायमान हैं उसका वर्णन तुलसीदास जी कुछ उपमाओं से इस प्रकार करते हैं:

1. परमतत्त्व प्राप्त करके जैसे योगी प्रसन्न हो।
2. सदैव रोगग्रस्त रहने वाला अमृत पाकर जिस प्रकार आनंदित हो।
3. जन्म से दरिद्र व्यक्ति पारसमणि प्राप्त करके खुश हो।
4. अंधा व्यक्ति सुंदर आँखें प्राप्त करके प्रसन्न हो।
5. गूँगा व्यक्ति इस प्रकार बोलने लगे जैसे सरस्वती गले में बैठ गईं हों।
6. युद्ध भूमि में कायर या दुर्बल व्यक्ति विजय प्राप्त करके प्रसन्न हो।

इससे कई गुना ज्यादा सुख माताओं को मिला।

लौकिक रीति करते हुए वर-दुल्हन संकोच करते हैं

लोक रीति जननीं करहिं बर दुलहिनि सकुचाहिं ।
मोदु बिनोदु बिलोकि बड़ रामु मनहिं मुसुकाहिं ॥350 ख॥

लोक रीति जननीं करहिं = माताएँ लोकरीति करती हैं, *बर दुलहिनि सकुचाहिं* = दूल्हे व दुल्हन सकुचाते हैं, *मोदु बिनोदु बिलोकि बड़* = महान् आनंद व विनोद को देखकर, *रामु मनहिं मुसुकाहिं* = राम जी मन ही मन मुस्कुराते हैं।

मातायें लौकिक रीति के नेग इत्यादि करवाती हैं तो वर-दुल्हन को संकोच लगता है। उस समय नेगों को व उसमें होने वाले महान् आनंद को देखकर राम जी मन ही मन मुस्कुराते हैं।

कुल-देवता व पितरों का पूजन किया गया

देव पितर पूजे बिधि नीकी। पूजीं सकल बासना जी की ॥351:1॥
सबहि बंदि मागहिं बरदाना। भाइन्ह सहित राम कल्याना ॥351:2॥
अंतरहित सुर आसिष देहीं। मुदित मातु अंचल भरि लेहीं ॥351:3॥

देव पितर पूजे बिधि नीकी = देवता व पितरों का ठीक से पूजन किया गया, *पूजीं सकल बासना जी की* = मन के अनुसार सब कार्य संपन्न हुआ है इसलिए

कृतज्ञता व्यक्त करती हैं, *सबहि बंदि मागहिं बरदाना* = सबकी वंदना करके वरदान माँगती हैं, *भाइन्ह सहित राम कल्याना* = भाइयों सहित राम का कल्याण हो, *अंतरहित सुर आसिष देहीं* = देवता अप्रगट रहते हुए आशीर्वाद देते हैं, *मुदित मातु अंचल भरि लेहीं* = मातायें प्रसन्नता से आँचल फैलाकर आशीर्वाद स्वीकार करती हैं।

राजमहल के अंदर जिस कमरे में पितरों व कुलदेवता का आहावन किया गया था वहाँ सभी वर-वधुओं को ले जाया गया। पुत्रवधुओं से भी कुलदेवता व पितरों की पूजा करवायी गयी ताकि वे अपने आपको इस घर का समझने लगें। भारतीय विवाह परंपरा में ऐसी मानसिक व्यवस्था की गई है, जिससे बहुएँ अपने को इस घर का समझें। कार्य प्रारंभ करने के पहले माताओं ने पूजा की जिससे समस्त वैवाहिक कार्य बिना बाधा के संपन्न हों। विवाह होने के बाद कार्य पूरा होने की कृतज्ञता प्रगट करने के लिये पूजा की। मातायें देवताओं से वरदान माँगती हैं कि भाइयों सहित राम का कल्याण हो। देवता अप्रगट रहते हुए आशीर्वाद देते हैं, मातायें आँचल फैलाकर उस आशीर्वाद को स्वीकार करती हैं।

14. बारातियों की विदाई

(दोहा 351 से 353)

बारात वापस आने के बाद बारातियों की विदाई की जाती है। राजभवन के बाहर से ही सामान्य बारातियों, नगरवासियों, याचकों, सेवकों को उपहार व सम्मान देकर राजा ने विदा किया। राजभवन के अंदर से विप्रों व उनकी स्त्रियों को भोजन करवाकर दान-सम्मान देकर विदा किया। राजा ने सपरिवार गुरु वसिष्ठ जी की पूजा की, कृतज्ञता व्यक्त की व नेग देकर विदा किया। प्रिय व पूज्य रिश्तेदारों को ससम्मान उपहार देकर विदा किया। विश्वामित्र जी की पूजा करके, विशेष सम्मान देते हुए राज-भवन के अंदर ही ठहराया जाता है। राज-परिवार स्वयं उनकी सेवा में लगा रहता है।

सामान्य बारातियों व नगरवासियों की विदाई

भूपति बोलि बराती लीन्हे। जान बसन मनि भूषन दीन्हे ॥351:4॥
आयसु पाइ राखि उर रामहि। मुदित गए सब निज निज धामहि ॥351:5॥
पुर नर नारि सकल पहिराए। घर घर बाजन लगे बधाए ॥351:6॥

भूपति बोलि बराती लीन्हे = इसके बाद राजा ने बारातियों को बुलवाया, *जान बसन मनि भूषन दीन्हे* = उन्हें विदाई में सवारियाँ; रत्न; आभूषण व वस्त्र दिये, *आयसु पाइ* = आज्ञा पाकर, *राखि उर रामहि* = राम को मन में बसाकर, *मुदित गए सब निज निज धामहि* = आनंदपूर्वक सब अपने-अपने घर चले गये, *पुर नर नारि सकल पहिराए* = नगर के सभी लोगों को राजा ने कपड़े व गहने पहनाये, *घर घर बाजन लगे बधाए* = घर-घर बधावे बजने लगे।

राजमहल के अंदर के रीति-रिवाजों को रानियाँ पूरा कर रही थीं। राजमहल के बाहर महाराज दशरथ बारात में आये लोगों की प्रेम एवं आदरपूर्वक विदाई कर रहे हैं। राजा ने बारातियों को बुलवाया, उन्हें आदर पूर्वक धन, वस्त्र व आभूषण दिये। सब लोग राजा की आज्ञा पाकर प्रभु राम को मन में बसाकर आनंदपूर्वक अपने-अपने घर चले गये। नगरवासियों को राजा ने वस्त्र व आभूषण स्वयं पहनाकर विदा किया। अयोध्या के घर-घर में गाना-बजाना होने लगा।

याचक व सेवक दान पाकर जय-जयकार करते चले गये

जाचक जन जाचहिं जोइ जोई। प्रमुदित राउ देहिं सोइ सोई ॥351:7॥
सेवक सकल बजनिआ नाना। पूरन किए दान सनमाना ॥351:8॥

जाचक जन जाचहिं जोइ जोई = याचक लोग जो भी माँगते हैं, *प्रमुदित राउ देहिं सोइ सोई* = राजा प्रसन्न होकर वही वही देते जाते हैं, *सेवक सकल* = सभी सेवकों को, *बजनिआ नाना* = बाजे बजाने वालों को, *पूरन किए दान सनमाना* = दान व सम्मान देकर संतुष्ट किया।

देहिं असीस जोहारि सब गावहिं गुन गन गाथ ।
तब गुर भूसुर सहित गृहँ गवनु कीन्ह नरनाथ ॥दोहा 351॥

देहिं असीस जोहारि सब = वे सब लोग झुककर प्रणाम करके आशीषें देते हैं, *गावहिं गुन गन गाथ* = गुणों की गाथा गाते हुए चले जाते हैं, *तब गुर भूसुर सहित* = तब गुरु व विप्रों सहित, *गृहँ गवनु कीन्ह नरनाथ* = राजा दशरथ ने महल के अंदर प्रवेश किया।

राजा ने भिक्षुओं को बुलावाकर उनसे पूछकर जिसे जो चाहिये था आनंदपूर्वक दिया। सेवक जो वेतन में नियमित कार्य करते हैं व बाजा बजाने वाले जो बारात के समय आये हैं, उनको बुलवाकर सम्मानित किया व उपहार दिया। वे सब लोग आशीर्वाद देते हुए, गुणगाथा व जय-जयकार बोलते हुए जाते हैं। जो लोग भवन के अंदर नहीं जा सकते थे उन्हें बाहर से ही विदा कर दिया। इसके बाद गुरु व विप्रों सहित राजा ने महल के अंदर प्रवेश किया।

रानियों ने विप्रों की पूजा की, भोजन करवाकर विदाई की

जो बसिष्ट अनुसासन दीन्ही। लोक बेद बिधि सादर कीन्ही ॥352:1॥
भूसुर भीर देखि सब रानी। सादर उठीं भाग्य बड़ जानी ॥352:2॥
पाय पखारि सकल अन्हवाए। पूजि भली बिधि भूप जेवाँए ॥352:3॥
आदर दान प्रेम परिपोषे। देत असीस चले मन तोषे ॥352:4॥

जो बसिष्ट अनुसासन दीन्ही = वसिष्ठ जी ने जो आज्ञा दी, *लोक बेद बिधि सादर कीन्ही* = उसे लोक व वेद की विधि के अनुसार राजा ने आदरपूर्वक किया, *भूसुर भीर देखि* = बहुत अधिक संख्या में विप्रों को देखकर, *सब रानी सादर उठीं* = आदरपूर्वक सभी रानियाँ उठकर, *भाग्य बड़ जानी* = अपना बहुत अच्छा भाग्य समझकर, *पाय पखारि* = चरणों को धोया, *सकल अन्हवाए* = सबके स्नान की व्यवस्था करवायी, *पूजि भली बिधि भूप जेवाँए* = राजा ने उनकी पूजा की फिर भोजन करवाया, *आदर दान प्रेम परिपोषे* = आदर; दान व प्रेम से संतुष्ट होकर, *देत असीस चले मन तोषे* = मन से आशीर्वाद देते हुए वे सब गये।

वसिष्ठ की आज्ञानुसार राजा दशरथ ने लौकिक व पारिवारिक रीति करके कार्य पूरा किया। राजा ने विप्रों के साथ महल के अंदर प्रवेश किया, रानियों ने इतनी अधिक संख्या में विप्रों के दर्शन करके अपने भाग्य की सराहना की। रानियों ने उनके चरण धोये, स्नान आदि की व्यवस्था करवाई। राजा ने विप्रों को आदरपूर्वक बैठाया, उनकी पूजा की, दक्षिणा दी व भोजन करवाया। आदर, दान, सम्मान व प्रेम से संतुष्ट होकर मन से आशीर्वाद देते हुए विप्र चले गये।

विश्वामित्र जी की पूजा की व राज-भवन के अंदर ठहराया

बहु बिधि कीन्हि गाधिसुत पूजा। नाथ मोहि सम धन्य न दूजा ॥352:5॥
कीन्हि प्रसंसा भूपति भूरी। रानिन्ह सहित लीन्हि पग धूरी ॥352:6॥
भीतर भवन दीन्ह बर बासू। मन जोगवत रह नृपु रनिवासू ॥352:7॥

बहु बिधि कीन्हि गाधिसुत पूजा = विश्वामित्र जी की बहुत प्रकार से पूजा की, *नाथ मोहि सम धन्य न दूजा* = हे नाथ! मेरे समान धन्य दूसरा कोई नहीं है, *कीन्हि प्रसंसा भूपति भूरी* = राजा ने उनकी बहुत प्रशंसा की, *रानिन्ह सहित लीन्हि पग धूरी* = रानियों सहित उनकी चरण धूलि को मस्तक पर लगाया, *भीतर भवन दीन्ह बर बासू* = महल के अंदर ही ठहरने की सुंदर व्यवस्था की, *मन जोगवत रह नृपु रनिवासू* = जिससे राजा व रानियाँ स्वयं विश्वामित्र जी की जरूरत के अनुसार सेवा में लगे रहें।

विश्वामित्र जी की विशेष पूजा करके विनती की– हे नाथ! और कोई हमारे समान धन्य नहीं होगा, आपकी कृपा से ही पूरा वैवाहिक कार्य संपन्न हो पाया है। फिर रानियों सहित महाराज दशरथ ने उनके चरणों की धूलि मस्तक पर लगायी। विश्वामित्र जी को विशेष सम्मान देने के लिये राज-भवन के भीतर ही सब प्रकार से श्रेष्ठ व सुंदर कमरे में उनके ठहरने की व्यवस्था करवाई। राजा दशरथ व रानियाँ स्वयं ही उनकी सेवा में लगे रहे, सेवकों की व्यवस्था नहीं की।

गुरु वसिष्ठ की पूजा की, नेग देकर आदरपूर्वक विदाई की

पूजे गुर पद कमल बहोरी। कीन्हि बिनय उर प्रीति न थोरी ॥352:8॥

पूजे गुर पद कमल बहोरी = उसके बाद गुरु वसिष्ठ के चरण कमलों की पूजा की, *कीन्हि बिनय* = विनती की, *उर प्रीति न थोरी* = हृदय में प्रेम कम नहीं है।

बधुन्ह समेत कुमार सब रानिन्ह सहित महीसु ।
पुनि पुनि बंदत गुर चरन देत असीस मुनीसु ॥दोहा 352॥

बधुन्ह समेत कुमार सब = बहुओं सहित सभी राजकुमार, *रानिन्ह सहित महीसु* = रानियों सहित राजा ने, *पुनि पुनि बंदत गुर चरन* = बार-बार गुरु के चरणों की वंदना करते हैं, *देत असीस मुनीसु* = मुनि आशीर्वाद देते हैं।

बिनय कीन्हि उर अति अनुरागें। सुत संपदा राखि सब आगें ॥353:1॥
नेगु मागि मुनिनायक लीन्हा। आसिरबादु बहुत बिधि दीन्हा ॥353:2॥
उर धरि रामहि सीय समेता। हरषि कीन्ह गुर गवनु निकेता ॥353:3॥

बिनय कीन्हि उर अति अनुरागें = मन में बहुत अधिक प्रेम के साथ विनती की, *सुत* = कहा ये पुत्र आपकी कृपा से हुए हैं, *संपदा राखि सब आगें* = सारी संपत्ति आपकी ही है, *नेगु मागि मुनिनायक लीन्हा* = गुरु वसिष्ठ ने विवाह कार्य संपन्न कराने का अपना नेग माँगकर ले लिया, *आसिरबादु बहुत बिधि दीन्हा* = नेग लेकर बहुत प्रकार से आशीर्वाद दिया, *उर धरि रामहि सीय समेता* = राम को सीता सहित मन में धारण करके, *हरषि कीन्ह गुर गवनु निकेता* = प्रसन्नता से गुरु अपने घर को चले गये।

उसके बाद वसिष्ठ जी के चरणों की पूजा करते हैं। वसिष्ठ जी ने ही हिम्मत बँधवाकर, विश्वामित्र जी के साथ राम-लक्ष्मण को भेजा था। इसलिये राजा के मन में इनके लिये भी बहुत अधिक प्रेम है। चारों पुत्रों, पुत्रवधुओं व रानियों सहित राजा स्वयं वसिष्ठ जी के चरणों में बार-बार प्रणाम करके उनसे आशीर्वाद प्राप्त करते हैं। मन में बहुत अधिक प्रेम के साथ राजा विनती करते हुए कहते हैं कि सारी संपत्ति, सारा राज्य, यह वैभव आपका ही है। आपकी कृपा से ही हमें पुत्र प्राप्त हुए हैं। वसिष्ठ जी ने यह नहीं कहा कि हाँ सब हमारा है, उन्होंने विवाह में पुरोहित का कार्य संपन्न करवाया था, उसका जो नेग का अधिकार बनता था वह माँग लिया। नेग लेकर आशीर्वाद दिया व हृदय में राम-सीता को धारण करके, प्रसन्नता से अपने घर को चले गये।

विप्रों की स्त्रियों को रेशमी वस्त्र पहनाकर विदा किया

बिप्रबधू सब भूप बोलाईं। चैल चारु भूषन पहिराईं ॥353:4॥
बहुरि बोलाइ सुआसिनि लीन्हीं। रुचि बिचारि पहिरावनि दीन्हीं ॥353:5॥

बिप्रबधू सब भूप बोलाईं = विप्रों की स्त्रियों को राजा ने बुलवाया, *चैल* = रेशमी वस्त्र, *चारु* = सुंदर, *भूषन* = आभूषण, *पहिराईं* = पहनाये, *बहुरि बोलाइ सुआसिनि लीन्हीं* = नगर की स्त्रियों को बुलवाया, *रुचि बिचारि पहिरावनि दीन्हीं* = उनकी पसंद के अनुसार पहनने के वस्त्र दिये।

राजा ने विप्रों की स्त्रियों को बुलवाकर उन्हें सुंदर रेशमी वस्त्र व आभूषण पहनाकर विदा किया। फिर नगर की स्त्रियों को बुलवाया, उन्हें उनकी पसंद के अनुसार पहनने के वस्त्र प्रदान किये।

नाई, बारी को रूचि अनुप नेग दिया

नेगी नेग जोग सब लेहीं। रुचि अनुरूप भूपमनि देहीं ॥353:6॥

नेगी नेग जोग सब लेहीं = नेग पाने के जो अधिकारी थे नेग लिया, *रुचि अनुरूप भूपमनि देहीं* = उनकी रुचि के अनुसार राजा ने सबको दिया।

विवाह में जो लोग नेग पाने के अधिकारी थे जैसे नाई, बारी इत्यादि, महाराज दशरथ ने उनकी जिस प्रकार की माँग थी, वैसा ही नेग दिया। कार्य करने के बदले दिये जाने वाले उपहार को नेग कहते हैं।

पूज्य व प्रिय रिश्तेदारों की विदाई

प्रिय पाहुने पूज्य जे जाने। भूपति भली भाँति सनमाने ॥353:7॥

प्रिय पाहुने = प्रिय अतिथि, *पूज्य जे जाने* = पूज्य अतिथि, *भूपति भली भाँति सनमाने* = राजा ने सबको ठीक प्रकार से सम्मान दिया।

प्रिय अतिथि वे रिश्तेदार हैं जहाँ राज-घराने के पुरुषों व कन्याओं के विवाह हुए थे। इन्हें मान या मान्य भी कहते हैं। पूज्य को वस्त्र, आभूषण इत्यादि देकर विशेष सम्मान किया गया। राम का स्मरण करते हुए ये लोग भी चले गये।

देवता भी अपने-अपने धाम चले गये

देव देखि रघुबीर बिबाहू। बरषि प्रसून प्रसंसि उछाहू ॥353:8॥

देव देखि रघुबीर बिबाहू = देवता श्रीराम का विवाह देखकर, *बरषि प्रसून प्रसंसि उछाहू* = उत्सव की प्रशंसा करके फूल बरसाते हैं।

चले निसान बजाइ सुर निज निज पुर सुख पाइ ।
कहत परसपर राम जसु प्रेम न हृदयँ समाइ ॥दोहा 353॥

चले निसान बजाइ सुर = देवता बाजे बजाते हुए चल दिये, *निज निज पुर सुख पाइ* = सुख पाकर अपने-अपने घरों की ओर, *कहत परसपर राम जसु* = आपस में राम जी के यश का वर्णन करते हैं, *प्रेम न हृदयँ समाइ* = मन में प्रेम समा नहीं रहा है।

बारात चलने से लेकर बारात वापस आने तक, देवता साथ में रहकर अपना कार्य करते रहे। आकाश से फूलों की वर्षा करते हैं, बाजे बजाते हैं। देवांगनायें गाती हैं, नाचती हैं। सबकी विदाई के बाद देवता भी आपस में राम जी के यश का वर्णन करते हुए, सुख प्राप्त करके, बाजे बजाते हुए अपने-अपने घरों की ओर चल दिये। वे इतने आनंदित हैं कि प्रेम मन में समा नहीं रहा है।

15. रनिवास में पारिवारिक मिलन, रात्रि विश्राम

(दोहा 354 से 357)

राजा दशरथ ने सायँकाल रनिवास पहुँचकर चारों वधुओं सहित पुत्रों को देखा, उनका दुलार किया व बातचीत की। पूरा राजपरिवार एक साथ एकत्रित हुआ। जनकपुर में बारात व जनक जी के स्वागत-सत्कार, प्रेम-आदर को दशरथ जी ने विस्तार से सबको सुनाया। परिवार सहित भोजन करके बहुओं को अपनी कन्या के समान देखभाल करने का आदेश देकर राजा शयन कक्ष में चले गये। रानियाँ चारों पुत्रों को दिव्य शयन कक्ष में सुलाती हैं। सोते हुए राम के दर्शन इस प्रसंग में करें। बहुओं को अपने पास गोद में लिटाकर सुलाती हैं। पूरा रनिवास रात में भी बहुत शोभायमान है। नगर की स्त्रियाँ रात्रि जागरण करके गाना-बजाना व खेल इत्यादि करती हैं।

दशरथ जी रनिवास पहुँचे, पुत्रों-पुत्रवधुओं से मिलकर प्रसन्न

सब बिधि सबहि समदि नरनाहू। रहा हृदयँ भरि पूरि उछाहू ॥354:1॥
जहँ रनिवासु तहाँ पगु धारे। सहित बहूटिन्ह कुअँर निहारे ॥354:2॥

सब बिधि सबहि समदि = सबका सभी प्रकार से आदर सत्कार करने से, *नरनाहू रहा हृदयँ भरि पूरि उछाहू* = राजा का मन बहुत आनंद से भर गया, *जहँ रनिवासु तहाँ पगु धारे* = राजा रनिवास में गये, *सहित बहूटिन्ह कुअँर निहारे* = बहुओं सहित राजकुमारों को देखा।

लिए गोद करि मोद समेता। को कहि सकइ भयउ सुखु जेता ॥354:3॥
बधू सप्रेम गोद बैठारीं। बार बार हियँ हरषि दुलारीं ॥354:4॥

लिए गोद करि मोद समेता = आनंद के साथ पुत्रों को गोद में बैठाया, *को कहि सकइ भयउ सुखु जेता* = राजा को जितना सुख हुआ उसका वर्णन नहीं किया जा सकता है, *बधू सप्रेम गोद बैठारीं* = पुत्रवधुओं को प्रेमसहित गोद में बैठाया, *बार बार हियँ हरषि दुलारीं* = बार-बार मन में प्रसन्न होकर उनका दुलार किया।

देखि समाजु मुदित रनिवासू। सब कें उर अनंद कियो बासू ॥354:5॥

देखि समाजु मुदित रनिवासू = यह समाज देखक रनिवास प्रसन्न हो गया, *सब कें उर अनंद कियो बासू* = सबके हृदय में आनंद का निवास हो गया।

सबकी विदाई करते-करते सायँकाल हो गया, तब राजा दशरथ रनिवास पहुँचे। वहाँ पर पुत्रवधुओं सहित चारों पुत्रों को देखते हैं। महाराज दशरथ ने राजकुमारों को गोद में बैठाया, पुत्रवधुओं को भी पास में गोद में बैठाया। इन सबको पास में बैठाकर अपने हृदय से लगाकर राजा को जो प्रसन्नता हुई उसका वर्णन नहीं किया जा सकता है। मातायें सहित सारे परिवार के लोग बहुत आनंदित होकर वहाँ पर बैठे हैं।

राजा ने भाट के समान जनक जी की प्रशंसा की

कहेउ भूप जिमि भयउ बिबाहू। सुनि सुनि हरषु होत सब काहू ॥354:6॥
जनक राज गुन सीलु बड़ाई। प्रीति रीति संपदा सुहाई ॥354:7॥
बहुबिधि भूप भाट जिमि बरनी। रानीं सब प्रमुदित सुनि करनी ॥354:8॥

कहेउ भूप जिमि भयउ बिबाहू = जिस तरह विवाह हुआ उसका वर्णन राजा ने किया, *सुनि सुनि हरषु होत सब काहू* = वह सुन-सुन कर सब लोग हर्षित हुए, *जनक राज गुन सीलु बड़ाई* = राजा जनक के गुण; शील; महत्त्व, *प्रीति रीति संपदा सुहाई* = प्रेम की रीति व संपत्ति की प्रशंसा की, *बहुबिधि भूप भाट जिमि बरनी* = राजा होकर भाट की तरह जनक जी की महिमा का वर्णन किया, *रानीं सब प्रमुदित सुनि करनी* = रानियाँ व सभी लोग यह सुनकर बहुत प्रसन्न हुए।

महाराज दशरथ ने राजा जनक के गुणों की, शील की, उनकी महिमा की, प्रेम की रीति व संपदा की इस प्रकार बहुत प्रशंसा की जैसे भाट लोग अपने राजा का यशगान करते हैं। प्रशंसा सुनकर रानियाँ और सब पुत्रवधुएँ भी बहुत प्रसन्न हुईं। संबंध बनने के बाद इसी प्रकार से प्रसन्नता व संतोष का भाव रखना चाहिये। पुत्रवधुएँ भी मायके की अच्छाई सुनकर प्रसन्न होती हैं। उन्हें ससुराल में अपनापन लगता है।

परिवार के साथ भोजन किया, सब अपने घर गये

सुतन्ह समेत नहाइ नृप बोलि बिप्र गुर ग्याति ।
भोजन कीन्ह अनेक बिधि घरी पंच गइ राति ॥354॥

सुतन्ह समेत नहाइ नृप = पुत्रों सहित राजा ने स्नान किया, *बोलि बिप्र गुर ग्याति* = फिर विप्रों; गुरु व रिश्तेदारों को बुलवाया, *भोजन कीन्ह अनेक बिधि* = अनेक प्रकार के भोजन किये, *घरी पंच गइ राति* = रात की पाँच घड़ी बीत गयी।

मंगलगान करहिं बर भामिनि। भै सुखमूल मनोहर जामिनि ॥355:1॥
अँचइ पान सब काहूँ पाए। स्रग सुगंध भूषित छबि छाए ॥355:2॥
रामहि देखि रजायसु पाई। निज निज भवन चले सिर नाई ॥355:3॥

मंगलगान करहिं बर भामिनि = सुंदर स्त्रियाँ मंगलगीत गा रही हैं, *भै सुखमूल मनोहर जामिनि* = रात्रि भी सुख प्रदान करने वाली व मनोहर हो गयी, *अँचइ पान सब काहूँ पाए* = सबने कुल्ला करके पान खाया, *स्रग सुगंध भूषित छबि छाए* = सबको इत्र लगाया गया; फूलों की मालायें पहनायी गयीं, *रामहि देखि रजायसु पाई* = राम को देखकर व आज्ञा पाकर के, *निज निज भवन चले सिर नाई* = सब लोग प्रणाम करके अपने-अपने घर चले गये।

महाराज दशरथ ने चारों पुत्रों सहित स्नान किया। वहाँ पर ठहरे हुए विप्रों, गुरुओं और रिश्तेदारों को बुलवाया। सबके साथ भोजन किया। रात्रि भोजन के समय मंगलगीत भी गाये जा रहे थे, इसलिये रात्रि बहुत आनंद देने वाली व मनोहारी लग रही थी। भोजन के बाद सबने हाथ धोए और कुल्ला किया।

सबको पान खिलवाकर इत्र लगाया गया, फूलों की मालायें पहनायी गयीं। राम के सुंदर स्वरूप को मन में धारण करके, प्रणाम करके, आज्ञा लेकर सब अपने-अपने घरों को चले गये। भोजन समाप्त होते-होते रात्रि की पाँच घड़ी यानि लगभग दो घंटे व्यतीत हो गये, शयन का समय हो गया।

रनिवास में छाये आनंद का वर्णन संभव नहीं

प्रेम प्रमोदु बिनोदु बड़ाई। समउ समाजु मनोहरताई ॥355:4॥
कहि न सकहिं सत सारद सेसू। बेद बिरंचि महेस गनेसू ॥355:5॥
सो मैं कहौं कवन बिधि बरनी। भूमिनागु सिर धरइ कि धरनी ॥355:6॥

प्रेम प्रमोदु बिनोदु बड़ाई = प्रेम; आनन्द; विनोद; महत्त्व, *समउ समाजु मनोहरताई* = उस समय के समाज की सुंदरता को, *कहि न सकहिं सत सारद सेसू* = सैकड़ों सरस्वती; शेषनाग, *बेद बिरंचि महेस गनेसू* = वेद; ब्रह्मा जी; शिव जी व गणेश भी वर्णन नहीं कर सकते हैं, *सो मैं कहौं कवन बिधि बरनी* = तो मैं उसका किस प्रकार से वर्णन कर सकता हूँ, *भूमिनागु* = केचुआँ, *सिर धरइ कि धरनी* = क्या अपने सिर पर पृथ्वी को धारण कर सकता है।

उस समय भोजन व विदाई में आपस में जो प्रेम है, सब लोग जिस प्रकार आनंदित हैं, सुख का अनुभव कर रहे हैं, उस समाज की सुंदरता का वर्णन तो सैकड़ों सरस्वती, शेषनाग, वेद, ब्रह्मा जी, शिव जी, व गणेश भी नहीं कर सकते हैं। तुलसीदास जी कहते हैं भला मैं उसका किस प्रकार से वर्णन कर सकता हूँ। मेरा वर्णन करना तो वैसे ही है जैसे केचुआँ शेषनाग की तरह पृथ्वी को अपने सिर पर धारण करने की सोचे।

बहुओं की देखभाल व पुत्रों को सुलाने का निर्देश दे राजा चले गये

नृप सब भाँति सबहि सनमानी। कहि मृदु बचन बोलाईं रानी ॥355:7॥
बधू लरिकनीं पर घर आईं। राखेहु नयन पलक की नाईं ॥355:8॥

नृप सब भाँति सबहि सनमानी = राजा ने सबका सभी प्रकार से सम्मान किया, *कहि मृदु बचन बोलाईं रानी* = रानियों को बुलवाकर मधुर वचनों से

समझाया कि, *बधू लरिकनीं* = बहुएँ अभी कम उम्र की हैं, *पर घर आईं* = पराये घर आयीं हैं, *राखेहु नयन पलक की नाईं* = उनको वैसे ही रखना जैसे पलकें नेत्रों को रखती हैं।

लरिका श्रमित उनीद बस सयन करावहु जाइ ।
अस कहि गे बिश्रामगृहँ राम चरन चितु लाइ ॥दोहा 355॥

लरिका श्रमित = लड़के भी थक गये हैं, *उनीद बस* = नींद लग रही है, *सयन करावहु जाइ* = इन्हें ले जाकर सुलवाओ, *अस कहि गे बिश्रामगृहँ* = इतना कहकर राजा विश्राम भवन में चले गये, *राम चरन चितु लाइ* = राम के चरणों का स्मरण करके।

राजा दशरथ ने सबका सम्मान करके विदा करने के बाद रानियों को बुलवाकर उन्हें मधुर वाणी में समझाया कि ये चारों बहुएँ दूसरे घर से आयी हैं, अभी इनकी उम्र भी कम है। इसलिये जैसे पलकें झपक कर नेत्रों को सरस बनाती हैं, उनकी रक्षा करती हैं, उसी प्रकार पुत्रवधुओं की देखभाल बहुत संभालकर करना। चारों पुत्र भी यात्रा करते-करते थक गये हैं, इन्हें नींद भी आ रही है। इन्हें ले जाकर शयन करने की व्यवस्था करवाओ। महाराज दशरथ इस प्रकार निर्देश देकर अपने चित्त को राम चरणों में लगाये हुए शयनगृह में चले गये।

स्वर्ण-पलंग, कोमल गद्दों, सफेद चादर पर शैया सजायी

भूप बचन सुनि सहज सुहाए। जरित कनक मनि पलँग डसाए ॥356:1॥
सुभग सुरभि पय फेन समाना। कोमल कलित सुपेतीं नाना ॥356:2॥
उपबरहन बर बरनि न जाहीं। स्त्रग सुगंध मनिमंदिर माहीं ॥356:3॥
रतनदीप सुठि चारु चँदोवा। कहत न बनइ जान जेहिं जोवा ॥356:4॥

भूप बचन सुनि सहज सुहाए = राजा के स्वाभाविक सुंदर वचन रानियों ने सुने, *जरित कनक मनि पलँग* = स्वर्ण के पलंग हैं जिनमें मणियाँ जड़ी हुई हैं, *डसाए* = गद्दे कैसे हैं, *सुभग सुरभि पय फेन समाना कोमल* = गाय के दूध के फेन के समान कोमल, *कलित सुपेतीं नाना* = उस पर सुंदर सफेद चादरें बिछी हैं, *उपबरहन* = तकिये, *बर बरनि न जाहीं* = इतने

सुंदर हैं कि वर्णन नहीं हो सकता, *स्रग* = मालायें सजी हैं, *सुगंध* = सुगंध व्याप्त है, *मनिमंदिर माहीं* = मणियाँ जड़ी हैं उस शयनकक्ष में, *रतनदीप* = मणियों के बने दीपक हैं, *सुठि चारु चँदोवा* = सुंदर चँदोवें बने हैं, *कहत न बनइ* = उसका वर्णन नहीं हो सकता, *जान जेहिं जोवा* = जिसने देखा वही जान सकता है।

महाराज दशरथ की सहज भाव से कही गयी बातों को सुनकर माताओं ने चारों पुत्रों के शयन की बहुत सुंदर व्यवस्था की। स्वर्ण के पलंग हैं जिनमें मणियाँ जड़ी हुई हैं। उन पर गद्दे इतने कोमल व सुंदर हैं जैसे गाय के दूध का फेन हो। इन पर स्वच्छ चादरें बिछी हैं व ओढ़ने की भी चादरे हैं। तकिये तो इतने सुंदर हैं कि उनका वर्णन ही नहीं किया जा सकता है। शयनकक्ष में मणियों की सजावट है, मालायें लटकी हैं व सुगंध भी है। दीवारों की मणियाँ इस प्रकार की हैं कि वे स्वयं नहीं चमकतीं, जब दूसरा प्रकाश पड़े तब चमचमाती हैं, परंतु दीपक ऐसी मणियों से बनाये गये हैं जो स्वयं जगमगाती हैं। पलंगों के ऊपर चंदोवे बने हुए हैं जो इतने सुंदर हैं कि उनका वर्णन करना मुश्किल है। जिसने देखा वही जान सकता है।

राम को सेज पर लेटाया, आज्ञा पाकर तीनों भाई भी लेटे

सेज रुचिर रचि रामु उठाए। प्रेम समेत पलँग पौढ़ाए ॥356:5॥
अग्या पुनि पुनि भाइन्ह दीन्ही। निज निज सेज सयन तिन्ह कीन्ही ॥356:6॥

सेज रुचिर रचि = इस प्रकार सुंदर शय्या सजाकर, *रामु उठाए* = राम को उठाकर, *प्रेम समेत पलँग पौढ़ाए* = प्रेम के साथ पलंग पर लेटा दिया, *अग्या पुनि पुनि भाइन्ह दीन्ही* = राम जी ने बार-बार भाइयों को आज्ञा दी, *निज निज सेज सयन तिन्ह कीन्ही* = तब वें अपने-अपने पलंग पर सो गये।

सेज तैयार करके माताओं ने राम को जहाँ वे बैठे थे वहाँ से उठाया। राम के पीछे तीनों भाई भी चले। माताओं ने राम को बहुत प्रेम से पलंग पर लिटा दिया। तीनों भाई राम के चरण दबाना चाहते हैं, राम ने अपने तीनों भाइयों को विश्राम करने को बार-बार कहा, तब वे जाकर अपनी-अपनी सुंदर सेजों पर लेट गये।

कोमल अंगों को देखकर कहती हैं, कैसे राक्षसों को मारा होगा!

देखि स्याम मृदु मंजुल गाता। कहहिं सप्रेम बचन सब माता ॥356:7॥
मारग जात भयावनि भारी। केहि बिधि तात ताड़का मारी ॥356:8॥

देखि स्याम मृदु मंजुल गाता = राम जी के श्यामल सुंदर कोमल अंगों को देखकर, *कहहिं सप्रेम बचन सब माता* = सब मातायें प्रेम से कहती हैं, *मारग जात* = रास्ते में जाती हुई, *भयावनि भारी* = अत्यंत भयानक व भारी, *केहि बिधि तात ताड़का मारी* = ताड़का को तुमने कैसे मारा होगा?

घोर निसाचर बिकट भट समर गनहिं नहिं काहु ।
मारे सहित सहाय किमि खल मारीच सुबाहु ॥दोहा 356॥

घोर निसाचर = भयानक राक्षस, *बिकट भट* = जो भारी योद्धा थे, *समर गनहिं नहिं काहु* = युद्ध में किसी को कुछ समझते नहीं थे, *मारे सहित सहाय किमि* = सहायकों सहित कैसे मार दिया? *खल मारीच सुबाहु* = दुष्ट मारीच व सुबाहु को।

राम लेटे हैं, मातायें पास में खड़ी हैं, उनके श्यामल व कोमल अंगों को देखकर कहती हैं, मार्ग में जाती हुई भारी डरावनी ताड़का को तुमने कैसे मारा होगा? विश्वामित्र जी की यज्ञशाला को जब घोर निशाचरों ने घेर लिया तो तुमने कैसे उनसे युद्ध किया होगा? वे तो बहुत शक्तिशाली योद्धा व कभी न हारने वाले थे। कैसे तुमने दुष्ट मारीच व सुबाहु जैसे राक्षसों को उनके साथियों सहित मार दिया?

गुरु कृपा से शिव जी ने तुम्हारे संकटों को टाल दिया

मुनि प्रसाद बलि तात तुम्हारी। ईस अनेक करवरें टारी ॥357:1॥

मुनि प्रसाद = विश्वामित्र जी की कृपा से, *बलि तात तुम्हारी* = हे तात! हम तुम्हारी बलैया लेते हैं, *ईस अनेक करवरें टारी* = शिव जी ने अनेक बाधाओं को टाल दिया है।

मातायें कहती हैं, हे तात! हम तुम्हारी बलिहारी जाते हैं। विश्वामित्र मुनि तुम्हारे साथ में थे, उनकी ही कृपा से शिव जी ने तुम्हारे ऊपर आये अनेक

संकटों को टाल दिया। ईश से आशय शिव जी से है। यहाँ पर देखें कि प्रभु राम से भी ज्यादा महिमा गुरु की बतायी गयी है। भगवान तो सब कुछ हैं ही, लेकिन उनकी कृपा पाने के रास्ते में आने वाली बाधाओं को गुरु ही दूर करते हैं।

विश्वामित्र जी से प्राप्त विद्या के बल पर असाधारण कार्य किये

मख रखवारी करि दुहुँ भाईं। गुरु प्रसाद सब बिद्या पाईं ॥357:2॥
मुनि तिय तरी लगत पग धूरी। कीरति रही भुवन भरि पूरी ॥357:3॥
कमठ पीठि पबि कूट कठोरा। नृप समाज महुँ सिव धनु तोरा ॥357:4॥
बिस्व बिजय जसु जानकि पाई। आए भवन ब्याहि सब भाई ॥357:5॥
सकल अमानुष करम तुम्हारे। केवल कौसिक कृपाँ सुधारे ॥357:6॥

मख रखवारी करि दुहुँ भाईं = दोनों भाइयों ने यज्ञ की रक्षा करके, *गुरु प्रसाद सब बिद्या पाईं* = गुरु की कृपा से सब विद्यायें प्राप्त की हैं, *मुनि तिय तरी* = गौतम मुनि की पत्नी अहिल्या का उद्धार हो गया, *लगत पग धूरी* = तुम्हारे चरणों की धूलि लगते ही, *कीरति रही भुवन भरि पूरी* = विश्व भर में यह कीर्ति फैल गयी है, *कमठ पीठि* = कछुए की पीठ, *पबि* = वज्र, *कूट* = पर्वत, *कठोरा* = से भी ज्यादा कठोर, *नृप समाज महुँ सिव धनु तोरा* = शिव-धनुष को राजाओं के समाज के बीच तुमने तोड़ दिया, *बिस्व बिजय जसु* = विश्व-विजय का यश प्राप्त हुआ, *जानकि पाई* = जानकी जी मिलीं, *आए भवन ब्याहि सब भाई* = सभी भाई विवाह करके घर आ गये, *सकल अमानुष करम तुम्हारे* = तुम्हारे सभी कर्म ऐसे हैं जिन्हें मनुष्य नहीं कर सकता है, *केवल कौसिक कृपाँ सुधारे* = मुनि विश्वामित्र की कृपा से ही तुम ये सब कर पाये हो।

तुम दोनों भाइयों ने निशाचरों को मारकर विश्वामित्र जी के यज्ञ की रक्षा की। गुरु विश्वामित्र जी ने कृपा करके तुम्हें सारी विद्यायें सौंप दीं। उनके बल पर तुमने ऐसे कार्य किये जो साधारण मनुष्य नहीं कर सकता है।

1. गौतम ऋषि की पत्नी अहिल्या जो पत्थर की शिला बन गयी थी, उस शिला पर तुम्हारे चरणों की धूलि लगते ही वह जीवंत हो गयी और उसका उद्धार हो गया। सारा संसार यह बात जान गया।

2. जनकपुरी में शंकर जी का धनुष जो कछुए की पीठ, वज्र व पर्वत से भी ज्यादा कठोर था, किसी से उठाये नहीं उठता था, उसे तुमने सब राजाओं के सामने तोड़ दिया। तुम्हें विश्वविजयी होने का यश प्राप्त हुआ।
3. सीता जी के साथ तुम्हारा विवाह हो गया।
4. सारे भाइयों का भी विवाह हो गया, सब सकुशल घर आ गये।

तुम्हें देखकर हमारा जीवन सफल हो गया

आजु सुफल जग जनमु हमारा। देखि तात बिधुबदन तुम्हारा ॥357:7॥
जे दिन गए तुम्हहि बिनु देखें। ते बिरंचि जनि पारहिं लेखें ॥357:8॥

आजु सुफल जग जनमु हमारा = आज हमारा जन्म लेना सफल हो गया, *देखि तात बिधुबदन तुम्हारा* = हे तात! तुम्हारा चन्द्रमा के समान सुंदर मुख देखकर, *जे दिन गए तुम्हहि बिनु देखें* = तुम्हें बिना देखे जो दिन व्यतीत हुए हैं, *ते बिरंचि जनि पारहिं लेखें* = उन्हें ब्रह्मा जी हमारी आयु में न शामिल करें।

प्रभु राम के ऐश्वर्य का वर्णन करके मातायें कहती हैं कि चन्द्रमा के समान तुम्हारा मुख देखकर हमारा जीवन सफल हो गया है। अब मातायें ब्रह्मा जी से प्रार्थना करती हैं कि राम को देखे बिना जो दिन व्यतीत हुए हैं उन्हें हमारे जीवन में न गिनें।

माताओं को संतुष्ट कर, शिव-विप्र-गुरु स्मरण कर राम नींद में

राम प्रतोषीं मातु सब कहि बिनीत बर बैन ।
सुमिरि संभु गुर बिप्र पद किए नीदबस नैन ॥दोहा 357॥

राम प्रतोषीं मातु सब = राम ने सभी माताओं को संतुष्ट किया, *कहि बिनीत बर बैन* = विनयपूर्ण उत्तम वचनों को कहकर, *सुमिरि संभु गुर बिप्र पद* = शिव, गुरु व विप्रों के चरणों का स्मरण कर, *किए नीदबस नैन* = नेत्रों को नींद के वश किया।

राम ने बहुत विनम्रता के साथ अत्यन्त सुन्दर वचन बोलकर सब माताओं को संतुष्ट किया। राम ने कहा होगा कि सब कार्य आप लोगों के आशीर्वाद व गुरु

कृपा से हुआ है इसमें हमारी क्या महिमा? प्रभु राम ने अपने इष्ट शिव जी, अपने गुरु व विप्रों के चरणों का स्मरण करके आँखें बंद कर लीं और सो गये। यहाँ पर यह शिक्षा है कि हमें सोना कैसे चाहिये? दिन भर के तनावों से, कार्यों से मुक्त होकर। मुक्त होने का सरल उपाय क्या है? प्रभु स्मरण।

सोते में भी राम अत्यंत सुंदर, दर्शन करें

नीदउँ बदन सोह सुठि लोना। मनहुँ साँझ सरसीरुह सोना ॥358:1॥

नीदउँ = सोते समय भी, *बदन* = मुख, *सोह सुठि लोना* = बहुत सुंदर लग रहा है, *मनहुँ साँझ* = मानो सायँकाल होने पर, *सरसीरुह सोना* = लाल कमल सिकुड़ कर कली बन जाये तो भी सुंदर लगता है।

रामचरितमानस में प्रभु राम के अनेकों रूपों का वर्णन तुलसीदास जी ने किया है। इस प्रसंग में सोते हुए राम का दर्शन करवा रहे हैं। हम लोग जब जागते हैं तो शरीर में विशेष चेतना रहती है, जिसके कारण मुख पर तेज रहता है। जैसे ही सो जाते हैं चेतना का प्रभाव कम हो जाता है। मुख में फीकापन व सुंदरता में कमी हो जाती है। लेकिन राम की सुंदरता में जाग्रत अवस्था में अथवा सोते में कोई अंतर नहीं आता। एक उदाहरण देते हैं, जैसे लाल रंग का कमल दिन में खिला हुआ है तो सुंदर है और सायँकाल में सिकुड़ कर कली बन जाये तो भी सुंदर लगता है। उसी प्रकार प्रभु राम जाग रहे हैं तो नेत्र लाल कमल के समान सुंदर हैं, सो रहे हैं तो लाल कमल की कली के समान सुंदर हैं।

अयोध्या में स्त्रियाँ रात्रि जागरण करती हैं

घर घर करहिं जागरन नारीं। देहिं परसपर मंगल गारीं ॥358:2॥
पुरी बिराजित राजति रजनी। रानीं कहहिं बिलोकहु सजनी ॥358:3॥

घर घर करहिं जागरन नारीं = घर-घर में स्त्रियाँ रात्रि जागरण करती हैं, *देहिं परसपर मंगल गारीं* = आपस में मंगल गालियाँ देती हैं, *पुरी बिराजित राजति रजनी* = रात्रि की शोभा ऐसी है कि अयोध्या भी रात्रि में सुंदर लगती है, *रानीं कहहिं बिलोकहु सजनी* = रानियाँ कहती हैं हे सखियाँ अयोध्या को देखो।

अयोध्या नगर की स्त्रियाँ रात्रि जागरण करके गाना-बजाना कर रही हैं और आपस में मंगल गालियाँ भी दे रही हैं। रानियाँ कहती हैं कि हे सजनी! देखो, रात्रि कैसी सुंदर लग रही है और इस रात्रि में अयोध्या पुरी भी कैसी सुन्दर लग रही है।

मातायें, चारों बहुओं को अपने साथ लेकर सो गयीं

सुंदर बधुन्ह सासु लै सोईं। फनिकन्ह जनु सिरमनि उर गोईं ॥358:4॥

सुंदर बधुन्ह = सुंदर बहुओं को, *सासु लै सोईं* = सासुएँ अपने साथ लेकर सोईं, *फनिकन्ह जनु* = जैस अपने फन में, *सिरमनि उर गोईं* = अपने सिर की मणि को छिपा लिया हो।

मातायें चारों बहुओं को अपने साथ लेकर सोने चलीं। सासुएँ बहुओं को अपनी गोद में लेकर कैसे सोईं? जैसे सर्प सिर की मणि को अपने फन में छिपाकर सोता है।

16. सत्संग, कंकण छुड़ाई, विश्वामित्र जी की विदाई

(दोहा 358 से 360)

अयोध्या के राज-महल में नित्य प्रात: सत्संग होता है, पूरा राजपरिवार इसमें शामिल होता है। इस प्रसंग में वसिष्ठ जी धर्म व इतिहास के बारे में चर्चा करके मुनि विश्वामित्र जी के महान् कार्यों व तप के बारे में सबको अवगत कराते हैं। विवाह का अंतिम कार्य कंकण छुड़ाई बहुत आनंद से पूरा होता है। पूरे अयोध्या में आनंद ही आनंद छाया हुआ है। मुनि विश्वामित्र जी की भावभीनी विदाई के साथ तुलसीदास जी श्रीराम-सीता विवाह की पावन कथा को पूरी करते हैं।

सुबह उठे, माता-पिता गुरु को प्रणाम किया, प्रात:क्रिया की

प्रात पुनीत काल प्रभु आगे। अरुनचूड़ बर बोलन लागे ॥358:5॥
बंदि मागधन्हि गुनगन गाए। पुरजन द्वार जोहारन आए ॥358:6॥
बंदि बिप्र सुर गुर पितु माता। पाइ असीस मुदित सब भ्राता ॥358:7॥
जननिन्ह सादर बदन निहारे। भूपति संग द्वार पगु धारे ॥358:8॥

प्रात पुनीत काल = सुबह की पवित्र बेला में, *प्रभु आगे* = प्रभु राम उठे, *अरुनचूड़* = मुर्गे, *बर बोलन लागे* = सुंदर बोली बोल रहे हैं, *बंदि मागधन्हि गुनगन गाए* = बंदी व मागध यशगान कर रहे हैं, *पुरजन द्वार जोहारन आए* = नगर के लोग राजा को प्रणाम करने आये, *बंदि बिप्र सुर गुर पितु माता* = विप्रों; गुरु; माता-पिता की वंदना करके, *पाइ असीस मुदित सब भ्राता* = उन सबका आशीर्वाद पाकर सभी भाई प्रसन्न हैं, *जननिन्ह सादर बदन निहारे* = माताओं ने पुत्रों के मुख को आदर सहित देखा, *भूपति संग द्वार पगु धारे* = दशरथ जी के साथ चारों पुत्र द्वार पर आये।

कीन्हि सौच सब सहज सुचि सरित पुनीत नहाइ ।
प्रातक्रिया करि तात पहिं आए चारिउ भाइ ॥दोहा 358॥

कीन्हि सौच सब = सबने शौच इत्यादि किया, *सहज सुचि* = ये स्वभाव से ही पवित्र हैं, *सरित पुनीत नहाइ* = पवित्र सरयू नदी में स्नान किया, *प्रातक्रिया करि* = प्रात: क्रिया करके, *तात पहिं* = पिता जी के पास, *आए चारिउ भाइ* = चारों भाई आ गये।

प्रात:काल के पवित्र समय में प्रभु राम उठे। मुर्गे सुंदर बोली बोल रहे थे। बंदी-मागध लोग द्वार पर आकर गाने लगे। नगर के लोग राजा के दर्शन करके प्रणाम करने के लिये राज द्वार पर आने लगे। प्रभु राम व सब भाइयों ने विप्रों, देवताओं, गुरु और माता-पिता की वंदना की। उन सबसे आशीर्वाद पाकर सभी बहुत प्रसन्न हुए। माताओं ने सब भाइयों के मुख को बहुत प्रेम व आदर के साथ देखा, तब महाराज दशरथ के साथ चारों पुत्र बाहर द्वार पर निकले। इसके बाद सब लोगों ने शौच इत्यादि करके पवित्र सरयू नदी में स्नान किया। इस प्रकार प्रात: क्रिया करके चारों भाई पिता जी के पास आये।

सुबह के सत्संग में वसिष्ठ जी ने धर्म-इतिहास के बारे में बताया

भूप बिलोकि लिए उर लाई। बैठे हरषि रजायसु पाई ॥359:1॥
देखि रामु सब सभा जुड़ानी। लोचन लाभ अवधि अनुमानी ॥359:2॥

भूप बिलोकि लिए उर लाई = राजा ने देखते ही उन्हें हृदय से लगा लिया, *बैठे हरषि रजायसु पाई* = आज्ञा पाकर प्रसन्नता से बैठ गये, *देखि रामु सब*

सभा जुड़ानी = राम को देखकर सब प्रसन्न हो गये, *लोचन लाभ अवधि अनुमानी* = नेत्रों के दर्शन लाभ की अधिकतम सीमा है।

पुनि बसिष्टु मुनि कौसिकु आए। सुभग आसनन्हि मुनि बैठाए ॥359:3॥
सुतन्ह समेत पूजि पद लागे। निरखि रामु दोउ गुर अनुरागे ॥359:4॥
कहहिं बसिष्टु धरम इतिहासा। सुनहिं मनीसु सहित रनिवासा ॥359:5॥

पुनि बसिष्टु मुनि कौसिकु आए = इसके बाद वसिष्ठ जी व विश्वामित्र जी आये, *सुभग आसनन्हि मुनि बैठाए* = सुंदर आसनों पर दोनों मुनियों को बैठाया गया, *सुतन्ह समेत पूजि पद लागे* = पुत्रों सहित राजा ने उनकी पूजा करके प्रणाम किया, *निरखि रामु दोउ गुर अनुरागे* = राम को देखकर दोनों मुनि प्रेम मग्न हो गये, *कहहिं बसिष्टु धरम इतिहासा* = वसिष्ठ जी धर्म व इतिहास का वर्णन करते हैं, *सुनहिं मुनीसु सहित रनिवासा* = मुनि की बातों को राजा सहित रनिवास सुनता है।

चारों पुत्र महाराज दशरथ के पास आये। तब वे प्रसन्न होकर पुत्रों को हृदय से लगाते हैं। आज्ञा पाकर सब बैठ जाते हैं। सभा में आये सब लोग राम जी को देखकर बहुत प्रसन्न होते हैं। उन्हें लगा कि राम का दर्शन ही नेत्रों के सुख की अंतिम सीमा है, इससे बड़ा नेत्रों का लाभ नहीं हो सकता है। जब सब लोग आकर बैठ गये तब विश्वामित्र जी व वसिष्ठ जी आये। महाराज ने दोनों ऋषिओं को सुंदर आसन पर बैठाकर पुत्रों सहित पूजन किया। राम को देखकर दोनों मुनि प्रेम में मग्न हो गये। वसिष्ठ जी ने धर्म व इतिहास का वर्णन किया। धर्म पालन करने वालों को क्या फायदा हुआ व अधर्म के मार्ग पर चलने वालों की क्या गति हुई, इसका वर्णन इतिहास के उदाहरण देकर वसिष्ठ जी ने किया। रानियों सहित पूरा राजपरिवार इस सत्संग को सुनता है।

विश्वामित्र जी की महिमा बतायी, सब लोग सुनकर प्रसन्न

मुनि मन अगम गाधिसुत करनी। मुदित बसिष्ट बिपुल बिधि बरनी ॥359:6॥
बोले बामदेउ सब साँची। कीरति कलित लोक तिहुँ माची ॥359:7॥
सुनि आनंदु भयउ सब काहू। राम लखन उर अधिक उछाहू ॥359:8॥

मुनि मन अगम = जो मुनियों के मन को भी अगम्य है, *गाधिसुत करनी* = विश्वामित्र जी के ऐसे कार्य हैं, *मुदित बसिष्ट बिपुल बिधि बरनी* = प्रसन्नता

से वसिष्ठ जी ने अनेको बार वर्णन किया, *बोले बामदेउ सब साँची* = वामदेव जी ने कहा यह सब सच है, *कीरति कलित लोक तिहुँ माची* = विश्वामित्र जी की सुन्दर कीर्ति तीनों लोकों में छायी है, *सुनि आनंदु भयउ सब काहू* = यह सुनकर सबको बहुत आनंद हुआ, *राम लखन उर अधिक उछाहू* = राम व लक्ष्मण के मन में अधिक उत्साह हुआ।

वसिष्ठ जी ने बताया कि धर्म का आचरण करते हुए व्यक्ति कितना महान् हो सकता है उसके साक्षात् उदाहरण हमारे पास बैठे हुए मुनि विश्वामित्र जी हैं। इन्होंने आध्यात्मिक साधना करके आत्मज्ञान व ब्रह्मज्ञान प्राप्त किया है। विश्वामित्र जी के जीवन की व उनके द्वारा किये गये महान् कार्यों की कथा वसिष्ठ जी ने सबको सुनायी। वहाँ पर उपस्थित ऋषि वामदेव ने कहा कि ये सब बातें सच हैं। इसी कारण विश्वामित्र जी की कीर्ति तीनों लोकों में फैली हुई है। यह सुनकर सबको बहुत आनंद हुआ। राम व लक्ष्मण ने तो गुरु मानकर विश्वामित्र जी की सेवा की थी, उनके साथ आश्रम में रहे व जनकपुर भी गये, इसलिये गुरु की प्रशंसा सुनकर दोनों भाइयों को ज्यादा आनंद हुआ।

शुभ दिन विवाह का अंतिम कार्यक्रम–कंकण खोले गये

मंगल मोद उछाह नित जाहिं दिवस एहि भाँति ।
उमगी अवध अनंद भरि अधिक अधिक अधिकाति ॥दोहा 359॥

मंगल मोद उछाह नित = नित्य ही मंगल आनंद व उत्सव होते हैं, *जाहिं दिवस एहि भाँति* = इसी प्रकार दिन व्यतीत हो जाते हैं, *उमगी अवध अनंद भरि* = अयोध्या में आनंद की नदी उमड़ पड़ी, *अधिक अधिक अधिकाति* = आनन्द और भी अधिक से अधिक बढ़ता ही जाता है।

सुदिन सोधि कल कंकन छोरे। मंगल मोद बिनोद न थोरे ॥360:1॥
नित नव सुखु सुर देखि सिहाहीं। अवध जन्म जाचहिं बिधि पाहीं ॥360:2॥

सुदिन सोधि = मुहुर्त निकलवाकर, *कल कंकन छोरे* = सुंदर कंगन छोड़ने का कार्यक्रम हुआ, *मंगल मोद बिनोद न थोरे* = उस समय जो आनंद व विनोद हुआ वह कम नहीं था, *नित नव सुखु* = रोज नये सुख, *सुर देखि सिहाहीं* =

को देखकर देवता लोग ईर्ष्या करते हैं, *अवध जन्म* = अयोध्या में जन्म हो, *जाचहिं बिधि पाहीं* = ऐसी याचना ब्रह्मा जी से करते हैं।

अयोध्या में प्रतिदिन आनंद मंगल होता रहता है। ऐसा लगता है मानो अयोध्या में आनंद की नदी उमड़ पड़ी हो। दिन-प्रतिदिन आनन्द अधिक से अधिक बढ़ता ही जाता है। सुन्दर कंकण खोलने के लिये शुभ दिन निकाला गया। वैवाहिक रीति का यह अंतिम कार्यक्रम होता है। जनकपुरी में बहुत सुंदर, मणिजड़ित कंकण बाँधे गये थे, इन्हें अयोध्या में समारोह पूर्वक आनंद के साथ खोला गया। देवता लोग सोचते हैं कि अयोध्या में तो स्वर्ग से भी ज्यादा सुख है। वे ब्रह्मा जी से प्रार्थना करते हैं कि स्वर्ग की बजाये हमें अयोध्या में जन्म दे दो।

विश्वामित्र जी जाना चाहते हैं पर राम रोक लेते हैं

बिस्वामित्रु चलन नित चहहीं। राम सप्रेम बिनय बस रहहीं ॥360:3॥
दिन दिन सयगुन भूपति भाऊ। देखि सराह महामुनिराऊ ॥360:4॥

बिस्वामित्रु चलन नित चहहीं = विश्वामित्र जी नित्य ही वापस जाना चाहते हैं, *राम सप्रेम बिनय बस रहहीं* = परंतु राम के स्नेह व विनती के कारण रुक जाते हैं, *दिन दिन* = जैसे-जैसे दिन बीतते हैं, *सयगुन भूपति भाऊ* = राजा के मन में विश्वामित्र जी के प्रति सौ गुना प्रेम बढ़ जाता है, *देखि सराह महामुनिराऊ* = यह देखकर विश्वामित्र जी इसकी प्रशंसा करते हैं।

विश्वामित्र जी अपनी ओर से तो रोज ही वापिस जाने के लिये कहते हैं कि सबकी विदाई हो गई, अब हमें भी जाने दिया जाये। लेकिन राम प्रेमपूर्वक उन्हें रोक लेते हैं। प्रेम के कारण वे रुक जाते हैं। विश्वामित्र जी के रुक जाने पर महाराज दशरथ उनकी सेवा में जरा भी असावधानी नहीं बरतते। दिन-प्रतिदिन और अधिक प्रेम से सेवा करते हैं। राजा के प्रेम की प्रशंसा विश्वामित्र जी भी करते हैं।

विश्वामित्र जी जाने को तैयार, राजा ने भावुक होकर विदा किया

मागत बिदा राउ अनुरागे। सुतन्ह समेत ठाढ़ भे आगे ॥360:5॥
नाथ सकल संपदा तुम्हारी। मैं सेवकु समेत सुत नारी ॥360:6॥
करब सदा लरिकन्ह पर छोहू। दरसनु देत रहब मुनि मोहू ॥360:7॥

मागत बिदा = विश्वामित्र जी के विदा माँगते ही, *राउ अनुरागे* = राजा अत्यंत प्रेम से, *सुतन्ह समेत ठाढ़ भे आगे* = पुत्रों सहित उनके आगे खड़े हो गये, *नाथ सकल संपदा तुम्हारी* = कहते हैं हे नाथ! यह सारी संपत्ति आपकी है, *मैं सेवकु समेत सुत नारी* = मैं तो पुत्रों व रानियों सहित आपका सेवक हूँ, *करब सदा लरिकन्ह पर छोहू* = बच्चों पर सदा प्रेम बनाये रखियेगा, *दरसनु देत रहब मुनि मोहू* = हे मुनि! मुझे भी दर्शन देते रहियेगा।

अस कहि राउ सहित सुत नारी। परेउ चरन मुख आव न बानी ॥360:8॥
दीन्हि असीस बिप्र बहु भाँती। चले न प्रीति रीति कहि जाती ॥360:9॥
रामु सप्रेम संग सब भाई। आयसु पाइ फिरे पहुँचाई ॥360:10॥

अस कहि = इस प्रकार कहकर, *राउ सहित सुत नारी* = राजा ने पुत्रों व रानियों सहित, *परेउ चरन* = मुनि के चरणों में प्रणाम किया, *मुख आव न बानी* = मुहँ से बोल नहीं निकल रहे हैं, *दीन्हि असीस बिप्र बहु भाँती* = विप्र विश्वामित्र जी ने बहुत प्रकार से आशीर्वाद दिया, *चले न प्रीति रीति कहि जाती* = विश्वामित्र जी चल दिये उस समय की प्रीति की रीति का वर्णन नहीं हो सकता, *रामु सप्रेम संग सब भाई* = राम सभी भाइयों सहित, *आयसु पाइ फिरे पहुँचाई* = विश्वामित्र जी को पहुँचाकर उनकी आज्ञा पाकर वापस लौटे।

विश्वामित्र जी ने जब राजा दशरथ जी से सीधे कहा कि हम अब जायेंगे तब राजा दशरथ पुत्रों सहित उनके आगे खड़े होकर कहने लगे कि हे नाथ! यह सारी संपात्ति आपकी है, मैं तो पुत्रों व रानियों सहित आपका सेवक हूँ। बच्चों पर सदा प्रेम बनाये रखियेगा। हे मुनि श्रेष्ठ! मुझे भी दर्शन देते रहियेगा। इस प्रकार प्रार्थना करते हुए राजा ने रानियों व पुत्रों सहित मुनि के चरणों में प्रणाम किया। भावपूर्वक बोलते-बोलते प्रेम के कारण राजा का कण्ठ अवरुद्ध हो गया, मुख से वाणी नहीं निकल रही है। विश्वामित्र जी अनेकों प्रकार से उपस्थित सभी को आशीर्वाद देकर वहाँ से चल दिये। दोनों के मन में एक दूसरे के प्रति जो प्रेम था उसका वर्णन नहीं किया जा सकता है। राम भाइयों सहित बहुत दूर तक विश्वामित्र जी को पहुँचाने जाते हैं। जब मुनि ने कहा कि अब तुम लोग वापस जाओ तब वे पहुँचा कर वापस राज-भवन आये।

मन ही मन आनंद में मग्न विश्वामित्र जी चले जा रहे हैं

राम रूपु भूपति भगति ब्याहु उछाहु अनंदु ।
जात सराहत मनहिं मन मुदित गाधिकुलचंदु ॥दोहा 360॥

राम रूपु = राम जी का रूप, *भूपति भगति* = राजा की भक्ति, *ब्याहु उछाहु अनंदु* = विवाह के उत्साह व आनंद को, *जात सराहत मनहिं मन* = जाते हुए मन ही मन प्रशंसा करते हैं, *मुदित गाधिकुलचंदु* = विश्वामित्र जी बहुत प्रसन्न हैं।

अयोध्या के राजभवन से आश्रम जाते हुए विश्वामित्र जी के मन में क्या चल रहा है, उसका सुंदर चित्रण तुलसीदास जी ने इस दोहे में किया है।
1. राम का सुंदर रूप मन में बैठा है, उसका स्मरण मन ही मन करते हैं।
2. राजा दशरथ जी द्वारा किये गये आदर-सत्कार व प्रेम के बारे में सोचते हैं।
3. विवाह में जो आनंद व उत्साह हुआ उसके बारे में विचार कर रहे हैं।
4. मन ही मन विश्वामित्र जी बहुत प्रसन्न हैं।

विश्वामित्र जी के जाने के बाद भी उनकी महिमा कहते हैं

बामदेव रघुकुल गुर ग्यानी। बहुरि गाधिसुत कथा बखानी ॥361:1॥
सुनि मुनि सुजसु मनहिं मन राऊ। बरनत आपन पुन्य प्रभाऊ॥361:2॥

बामदेव = वामदेव जी और, *रघुकुल गुर ग्यानी* = रघुकुल के ज्ञानी गुरु वसिष्ठ जी, *बहुरि गाधिसुत कथा बखानी* = फिर से विश्वामित्र जी की कथा का वर्णन करते हैं, *सुनि मुनि सुजसु* = मुनि का यश सुनकर, *मनहिं मन राऊ* = मन ही मन में राजा, *बरनत आपन पुन्य प्रभाऊ* = अपने पुण्यों के प्रभाव के बारे में सोचते हैं।

विश्वामित्र जी के जाने के बाद पीठ पीछे भी वामदेव जी उनकी महिमा का फिर से वर्णन करते हैं। रघुकुल के ज्ञानी गुरु वसिष्ठ जी उनकी बात का समर्थन करते हैं। मुनि का यश सुनकर राजा दशरथ मन ही मन सोचते हैं कि हमारे कितने भारी पुण्य होंगे जिसके कारण विश्वामित्र जी जैसे महा मुनि की कृपा प्राप्त करने का सौभाग्य मिला है।

राजा की आज्ञा से सत्संग समाप्त, सब लोग घर गये

बहुरे लोग रजायसु भयऊ। सुतन्ह समेत नृपति गृँह गयऊ ॥361:3॥

बहुरे लोग = लोग अपने घरों को चले गये, *रजायसु भयऊ* = जब राजा ने आज्ञा दी, *सुतन्ह समेत* = पुत्रों सहित, *नृपति गृँह गयऊ* = राजा महल में चले गये।

महाराज दशरथ ने कहा कि अब सभा समाप्त होती है, तब आज्ञा पाकर सब लोग अपने-अपने घरों को चले गये। वसिष्ठ जी व वामदेव इत्यादि ऋषि भी चले गये और तब तक श्रीराम भाइयों सहित वापस आ गये। महाराज दशरथ पुत्रों सहित राज-भवन के अंदर चले गये।

17. राम-सीता विवाह के पाठ की महिमा

(दोहा 361)

बालकाण्ड की विशेषता यह है कि इसमें शुरू से अंत तक मंगल ही मंगल है। राम नाम में मंगल, कथा में मंगल, चरित्र में मंगल, अवतार में मंगल, बाल-लीलाओं में मंगल, जनेऊ में मंगल व विवाह होता है तो उसमें तो सर्वत्र मंगल ही मंगल है।

श्रीराम-सीता विवाह की कथा गाने से सर्वत्र आनंद

जहँ तहँ राम ब्याहु सब गावा। सुजसु पुनीत लोक तिहुँ छावा ॥361:4॥
आए ब्याहि रामु घर जब तें। बसइ अनंद अवध सब तब तें ॥361:5॥
प्रभु बिबाहँ जस भयउ उछाहू। सकहिं न बरनि गिरा अहिनाहू ॥361:6॥

जहँ तहँ राम ब्याहु सब गावा = जहाँ-तहाँ लोग राम के विवाह की बातें कर रहे हैं, *सुजसु पुनीत लोक तिहुँ छावा* = राम का पवित्र यश तीनों लोकों में छा गया, *आए ब्याहि रामु घर जब तें* = जब से राम विवाह करके घर आये हैं, *बसइ अनंद अवध सब तब तें* = तब से अयोध्या में सब प्रकार का आनंद आकर बस गया, *प्रभु बिबाहँ जस भयउ उछाहू* = प्रभु राम के विवाह में जैसा आनंद व उत्साह हुआ, *सकहिं न बरनि* = उसका वर्णन नहीं कर सकते हैं, *गिरा* = सरस्वती जी व, *अहिनाहू* = सर्पों के राजा शेषनाग भी।

जहाँ-तहाँ अयोध्या नगर में भीतर बाहर सब लोग राम व सीता जी के विवाह की गाथाएँ गा रहे हैं। इस प्रकार से श्रीराम का यश तीनों लोकों में छा गया। जब से श्रीराम विवाह करके अयोध्या में आये हैं तब से वहाँ आनन्द ही आनन्द छाया हुआ है। श्रीराम के विवाह में जैसा उत्साह हुआ, जैसी प्रसन्नता छायी उसका वर्णन तो सरस्वती जी व सर्पराज शेषनाग भी नहीं कर सकते हैं।

राम-सीता विवाह कथा गाने से वाणी पवित्र होती है

कबिकुल जीवनु पावन जानी। राम सीय जसु मंगल खानी ॥361:7॥
तेहि ते मैं कछु कहा बखानी। करन पुनीत हेतु निज बानी ॥361:8॥

कबिकुल जीवनु = यह कथा तो कवियों का जीवन ही है, *पावन* = यह बहुत पवित्र भी है, *जानी* = ऐसा समझकर, *राम सीय जसु मंगल खानी* = राम व सीता का यश मंगल करने वाला है, *तेहि ते मैं* = इसी कारण मैंने, *कछु कहा बखानी* = इस कथा का कुछ वर्णन किया है, *करन पुनीत हेतु निज बानी* = अपनी वाणी को पवित्र करने के लिये।

तुलसीदास जी कहते हैं मैंने इस कथा का कुछ वर्णन इसलिये किया है क्योंकि यह कथा कविकुल का जीवन है। इसे गा-गा कर कवियों का जीवन धन्य बनता है। यह कथा बहुत पवित्र है, इसका गान करने से हमारी वाणी पवित्र होगी। वाणी तभी पवित्र होगी जब मन-बुद्धि पवित्र हो। इस कथा का प्रभाव मन के अंदर तक होता है। हमारे विचार करने, संसार में व्यवहार करने, बातचीत करने के तरीके में अपने आप परिवर्तन आने लगता है। वाणी पवित्र होना अच्छे व्यक्तित्व का लक्षण है। जीवन में ज्यादातर परेशानियाँ हमारे ज्यादा बोलने या कटु वचन बोलने से होती है। इस कथा का पाठ हमें मधुर वचन बोलने की ओर प्रेरित करेगा।

कथा कहना व सुनना एक साधना है

निज गिरा पावनि करन कारन राम जसु तुलसीं कह्यो ।
रघुबीर चरित अपार बारिधि पारु कबि कौनें लह्यो ॥छंद॥

निज गिरा पावनि करन कारन = अपनी वाणी को पवित्र करने के लिये, *राम जसु तुलसीं कह्यो* = राम के यश का तुलसीदास ने वर्णन किया है, *रघुबीर चरित अपार बारिधि* = राम का चरित्र अपार समुद्र के समान है, *पारु कबि कौनें लह्यो* = कौन कवि उसे पार कर सकता है?

श्रीराम का चरित्र तो अपार समुद्र के समान है, उसका पार कौन प्राप्त कर सकता है? परंतु साधक लोग अपनी-अपनी साधना के अनुसार इस कथा को कहते रहें, सुनते रहें। इस कथा को सुनाना अपनी विद्वत्ता दिखाना नहीं है वरन् साधना है। श्रोता लोग भी इस भाव से न सुनें कि हम कथा को जान लिये, बल्कि इसलिये सुनें की वाणी पवित्र हो। जीवन में आत्मसात् करें, जीवन को आनंदमय बनायें। तुलसीदास जी यह भी कहना चाहते हैं कि पूरी कथा का वर्णन कोई नहीं कर सकता है, जहाँ तक हमारी बुद्धि गई, कह दी।

वैदेही व राम की कृपा से सदैव सुखी रहेंगे

उपबीत ब्याह उछाह मंगल सुनि जे सादर गावहीं ।
बैदेहि राम प्रसाद ते जन सर्बदा सुखु पावहीं ॥छंद॥

उपबीत ब्याह = जनेऊ व विवाह, *उछाह मंगल* = के मंगलमय उत्साह को, *सुनि जे सादर गावहीं* = जो लोग आदर के साथ सुनते व गाते हैं, *बैदेहि राम प्रसाद ते जन* = वे लोग राम व सीता जी की कृपा से, *सर्बदा सुखु पावहीं* = सदैव सुख पायेंगे।

तुलसीदास जी कहते हैं कि प्रभु राम के जनेऊ संस्कार की कथा व विवाह की कथा में जो आनंद व उत्साह हुआ उसको जो लोग आदरपूर्वक सुनेंगे या कहेंगे वे वैदेही व राम की कृपा से सदैव सुखी रहेंगे। सुख पाने के लिये लोग अनेकों प्रकार के यत्न करते हैं। कभी इस कथा को प्रेम पूर्वक सुनकर स्वयं अनुभव करें कि सुख की अनुभूति कितनी सरलता से होने लगती है।

सिय-रघुबीर विवाह की कथा मंगल प्रदाता है

सिय रघुबीर बिबाहु जे सप्रेम गावहिं सुनहिं ।
तिन्ह कहुँ सदा उछाहु मंगलायतन राम जसु ॥सोरठा 361॥

सिय रघुबीर बिबाहु = सीता जी व राम जी के विवाह को, *जे सप्रेम गावहिं सुनहिं* = जो लोग प्रेम पूर्वक गाते व सुनते हैं, *तिन्ह कहुँ सदा उछाहु* = उनके लिये सदा उत्साह व आनंद ही रहता है, *मंगलायतन राम जसु* = क्योंकि राम जी का यश मंगल का धाम है।

सीता जी व श्रीराम के विवाह की कथा जो लोग प्रेमपूर्वक गायेंगे या सुनेंगे उनके मन में सदा उत्साह रहेगा। श्रीरामचरितमानस में हर कांड के पाठ की अपनी विशेषता है। बालकाण्ड की विशेषता यह है कि यह 'मंगलायतन' है, इसमें शुरू से अंत तक मंगल ही मंगल है। राम नाम में मंगल, कथा में मंगल, चरित्र में मंगल, अवतार में मंगल, बाल-लीलाओं में मंगल, जनेऊ में मंगल व विवाह होता है तो उसमें तो सर्वत्र मंगल ही मंगल है। इसका पाठ श्री गुरुदेव की कृपा से हमारे जीवन में भी मंगल लाये।



नोट



अवलोकितेश्वर (सुबोध अग्रवाल) का जन्म मध्यप्रदेश के सतना जिले में 1962 में हुआ। उन्होंने स्वामी सत्यानन्द सरस्वती से जुलाई 1983 में मंत्र दीक्षा ग्रहण की। अपने शैक्षिक जीवन को 1988 में समाप्त कर मुंगेर आश्रम में ढाई वर्ष तक गुरु सेवा में रत रहे, और गुरुदेव ने उनको अवलोकितेश्वर नाम भी प्रदान किया। वे अभी मध्यप्रदेश के सतना जिले में चार्टर्ड एकाण्टेण्ट का कार्य कर रहे हैं।

श्री गुरुदेव की प्रेरणा से भारत की अनुपम संस्कृति के प्रचार व उत्थान हेतु प्रवचनों को संग्रहित कर शीर्षकों के माध्यम से लेखन व संपादन का मंगलकारी एवं उत्तम कार्य शुरू किया। प्रथम ग्रंथ श्री हनुमान चालीसा है जिसमें चिन्मय मिशन के प्रमुख स्वामी तेजोमयानन्दजी के प्रवचनों का संग्रह है। अन्य ग्रंथ गोस्वामी तुलसीदास कृत श्रीरामचरितमानस पर चिन्मय मिशन के वरिष्ठ स्वामी श्री शंकरानंदजी के प्रवचनों के संग्रह हैं।



श्री स्वामी सत्यानन्द जी कहते हैं कि श्रीरामचरितमानस का शब्दानुवाद होना चाहिये। उनकी प्रेरणा व स्वामी निरंजनानंद सरस्वती के कृपापूर्ण मार्गदर्शन में श्रीरामचरितमानस के बालकाण्ड भाग पाँच का शब्दानुवाद, श्री स्वामी सत्यानन्द जी के रिखिया सत्संगों का संकलन, चिन्मय मिशन के वरिष्ठ स्वामी श्री शंकरानंद जी के प्रवचनों का संकलन व संपादन शीर्षकों व उपशीर्षकों के माध्यम से किया गया है। परमपूज्य गुरुदेव का निर्देश है कि तुलसीदास जी ने जैसा ग्रंथ लिखा है, उसे वैसा ही समझा जाये। इस बात को ध्यान में रखते हुए ही यह संकलन व संपादन कार्य किया गया है।

राजा जनक के भरे दरबार में श्रीराम के द्वारा शिव-धनुष के टूटने पर परशुराम जी का रोषपूर्ण आगमन, उनके अहंकारपूर्ण अभिव्यक्तियों पर लक्ष्मण जी का कठोर प्रहार एवं श्रीराम के साथ शीतल संवाद, एवं वैदिक विधि एवं लौकिक रीति के साथ सीता-राम विवाह का सुन्दर, विस्तृत एवं व्यावहारिक वर्णन, बालकाण्ड के इस पाँचवें भाग में दिया गया है। कैसे विद्या और विनय से युक्त व्यक्ति नियम और मर्यादा को बनाये रखते हुए कितनी भी कठीन परिस्थितियों को सहजता एवं संतोषपूर्ण ढंग से सम्हालते हुए अपने आपको एक प्रेरणा के रूप में समाज में स्थापित कर सकता है, इसका रुचिपूर्ण चित्रण प्रभु राम की इन लीलाओं में हमें सहज ही देखने को मिलता है।



ISBN

978-81-949328-7-1